ISSN NO. : 0970-9398

राजभाषा भारती

वर्ष : 39 • अंक 154 • जनवरी-मार्च 2018

विशेषांक

"प्राथमिक शिक्षा में हिंदी-संभावनाएं एवं चुनौतियां"

जन जन की
भाषा है हिंदी

भारत सरकार
गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग

{k=h; jktHkk"kk lEesyu iVuk esa eap ij ekuuh; x`g jkT; ea=h
Jh fdju jhthtw rFkk vU; vfrfFkx.k

jktHkk"kk Hkkjrh dk foekspu djrs vfrfFkx.k

ISSN No. 0970-9398

भारति जय विजय करे, कनक–छास्य–कमल धरे
–निराला

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

वर्ष : 39 अंक : 154

(जनवरी–मार्च, 2018)

राजभाषा भारती

☛ संरक्षक
प्रभास कुमार झा
सचिव, राजभाषा विभाग

☛ प्रतिपालक
डॉ. बिपिन बिहारी
संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग

☛ संपादक
डॉ. श्रीप्रकाश शुक्ल
संयुक्त निदेशक (नीति/पत्रिका)
दूरभाष : 011–23438250

☛ उप संपादक
डॉ. धनेश द्विवेदी
दूरभाष : 011–23438159

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उससे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र व्यवहार का पता :
संपादक
राजभाषा विभाग
एनडीसीसी भवन–II, चौथा तल, बी विंग,
जय सिंह रोड, नई दिल्ली–110001
ईमेल–patrika-ol@nic.in
वेबसाइट–rajbhasha.nic.in

निःशुल्क वितरण के लिए

❖ उद्‌बोधन–सचिव (राजभाषा) 1

❖ संयुक्त सचिव की कलम से... 2

❖ संपादकीय 4

❖ साक्षात्कार–1 6

❖ साक्षात्कार–2 9

क्र.सं.	लेख का शीर्षक	लेखक का नाम	पृष्ठ सं.
1.	स्वाभिमान का प्रतीक–मातृभाषा में शिक्षा	ए. भारत भूषण बाबू	13
2.	गुणात्मक सुधार के लिये आवश्यक है–प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी	प्रो. जोहरा अफजल	15
3.	भारतीय संस्कृति की संवाहिका है हिंदी	प्रो. नरेश मिश्र	18
4.	प्रारंभिक शिक्षा में महत्वपूर्ण है हिंदी की भूमिका	प्रो. सत्यदेव मिश्र	25
5.	प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी – संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ	प्रो. आरिफ़ नज़ीर	29

6.	राष्ट्रीय एकता के लिए अनिवार्य है –प्राथमिक कक्षाओं में हिंदी पढ़ाना	मृदुला श्रीवास्तव	36
7.	भारतीय संस्कार व गौरव की पहचान– हिंदी	डॉ. हुकुमचंद राजपाल	40
8.	प्रारंभिक शिक्षा हिंदी में : संभाव्यता की दिशाएँ	प्रो. टी.आर. भट्ट	43
9.	हिंदी भाषा का प्राथमिक स्तर पर अध्यापन एवं कार्यालयीन स्तर पर प्रयोगगत समस्याएँ	प्रो. डॉ. शंकर बुंदेले	47
10.	प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी यानि अभिव्यक्ति एवं सौंदर्य बोध का विकास	डॉ. शिबन कृष्ण रैणा	53
11.	महत्वपूर्ण है प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी	प्रो. जयप्रकाश	58
12.	प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी संभावनाएं एवं चुनौतियाँ	वसुधा शुक्ल	62
13.	प्राथमिक शिक्षा में हिंदी के लिए आवश्यक है पर्याप्त ज्ञान सामग्री	डॉ. संध्या वात्स्यायन	65
14.	'प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी– संभावनाएं एवं चुनौतियां'	प्रो. रमेश चन्द शर्मा	70
15.	अंधकार से प्रकाश का मार्ग प्रशस्त कैसे हो?	डॉ. धनेश द्विवेदी	73

सचिव (रा.भा.) का उद्‌बोधन

राजभाषा भारती के अंक 149 के माध्यम से प्रथम बार आप सभी के सामने अपनी बात रखने का अवसर प्राप्त हुआ था। आपके साथ विचार साझा करते हुये कब सफर के अंतिम पड़ाव का समय आ गया, पता ही नहीं चला। पिछले पांच अंकों में मैंने अलग–अलग विषयों पर अपनी बात रखी और राजभाषा हिंदी के समक्ष विभिन्न तरह की चुनौतियों का जिक्र भी किया। जो महत्वपूर्ण बात मुझे समझ में आई उसके अनुसार ऐसा लगा कि हमें हिंदी के प्रति अधिक उत्साह एवं लगन से कार्य करने की आवश्यकता है और इस कड़ी में, विशेष रूप से प्राथमिक स्तर पर हिंदी का ज्ञान अत्यंत आवश्यक हैं। इस अंक को एक विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है जिसका विषय 'प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी–संभावनाएं एवं चुनौतियां' रखा गया है।

गांधी जी ने लगभग 70–80 वर्ष पूर्व यह बात कही थी कि यदि बच्चे को उसकी मातृभाषा में शिक्षा नहीं दी जाती तो उसका भयंकर नुकसान होता है,परायी अंग्रेजी भाषा सीखने की कवायद और बंदर कूद के कारण उसकी नैसर्गिक प्रतिभा, समाज तथा प्रकृति के साथ उसका सहज नाता खंडित हो जाता है और वह मात्र लकीर का फकीर रह जाता है। मैकाले ने जब उन्नीसवीं सदी के मध्य में अंग्रेजी भाषा थोपी तो उसका उद्देश्य मात्र ब्रितानी हुकूमत के लिए वफादार बाबू पैदा करने का था। आज हम यह देख सकते हैं कि मैकाले की कूट–नीति ने किस हद तक हमें मानसिक रूप से गुलाम व आश्रित बनाकर रख दिया है। आज अभिभावक, स्कूल अंग्रेजी से चिपके हैं तो मात्र इसलिए कि उनके बच्चे, बच्चियाँ अंग्रेजी सीख पढ़कर अच्छे कमाऊ बाबू बन सकें। हम कल्पनाशीलता, रचनात्मकता, मूलभूत कार्य और सृजन को लगभग भूल चुके हैं और अंग्रेजी का अंधानुकरण कर रहे हैं।

तमाम देशों जापान, इजराइल, चीन, कोरिया आदि ने यह साबित कर दिया है कि केवल अपनी भाषा में ही मौलिक व स्वाभाविक प्रगति हो सकती है। वे अंग्रेजी में उपलब्ध प्रचुर ज्ञान संपदा का इस्तेमाल अपनी भाषा की बढ़ोतरी के लिए करते हैं ताकि बच्चों को प्रारंभ से ही उनकी अपनी भाषा में ज्ञान–विज्ञान का सारा कच्चा माल उपलब्ध हो जाये। यही कारण है कि वे आज ज्ञान–विज्ञान में पश्चिम को कड़ी टक्कर दे रहे हैं।

यह सवाल सत्य को ग्रहण करने का है, किसी पाखंड से काम नहीं चलेगा, यह स्वाभिमान का भी प्रश्न है, जो कौम अपने पैरों पर खड़ा होना चाहती है और किसी भी प्रकार की दासता को स्वीकार नहीं करती है वही आत्मावलोकन कर सकती है और सत्य की चोट को सह सकती है। यह सत्य है कि एक बच्चा या बच्ची जिस परिवेश, भाषा, संस्कृति, संस्कार में पैदा होते हैं और पलते बढ़ते हैं, वही उनकी अभिव्यक्ति का माध्यम बनता है। अतः मातृभाषा में शिक्षा दिया जाना एक मूलभूत आवश्यकता है और अधिकार भी है।

हमें न केवल यह समझना होगा वरन् पूर्ण चेतना और दृढ़ विश्वास के साथ इस दिशा में कार्य करना होगा। हमारी भाषा नीति भी इसी सार्वजनीन सत्य पर आधारित होनी चाहिए।

यानि, हमें हिंदी व अन्य क्षेत्रीय भाषाओं को समृद्ध से समृद्धतर बनाना ही होगा ताकि प्राथमिक शिक्षा स्तर से बच्चों को ज्ञान–विज्ञान की पूरी खुराक उनकी अपनी भाषा में मिल सके।

संयुक्त सचिव की कलम से..

आप सब के समक्ष राजभाषा भारती का यह अंक प्रस्तुत करते हुए मैं हर्ष का अनुभव कर रहा हूँ!

राजभाषा विभाग की प्रतिष्ठित त्रैमासिक पत्रिका 'राजभाषा भारती' की गौरवशाली विकास यात्रा वर्ष 1978 से सतत् रूप से जारी है। इस पत्रिका के माध्यम से देश भर के हिंदी प्रेमियों को अपनी सृजनात्मक एवं साहित्यिक प्रतिभा की अभिव्यक्ति का सुअवसर मिलता है।'राजभाषा भारती' को हर तरह से बेहतर बनाने के लिए पिछले कुछ अंकों में हमने अनेक नई पहल की हैं जिन्हें पाठकों की सराहना भी मिली है।

हिंदी को और अधिक सशक्त, सर्व सुलभ और जनोपयोगी बनाने के लिए राजभाषा विभाग सदैव प्रयासरत् है, अपने दायित्वों के प्रति सजग है और राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए प्रतिबद्ध है। इसी क्रम में प्रेरणा, प्रोत्साहन और सद्भावना पर आधारित सरकार की राजभाषा नीति के अनुसरण में राजभाषा विभाग और इसके अधीनस्थ कार्यालयों ने राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार से संबंधित कुछ उल्लेखनीय कार्य निष्पादित किए हैं जिन्हें मैं आप के साथ साझा करना चाहता हूं।

आप जानते हैं कि राजभाषा विभाग द्वारा हर वित्त वर्ष के दौरान देश के विभिन्न स्थानों पर चार क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है। इस वित्त वर्ष का प्रथम क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन (दक्षिण एवं दक्षिण–पश्चिम क्षेत्रों के लिए) दिनांक 08 दिसंबर, 2018 को विशाखापट्टनम में आयोजित किया गया जिसमें केंद्रीय गृह राज्य मंत्री श्री किरेन रीजीजू मुख्य अतिथि रहे। दिनांक 12.01.2018 को मुंबई में मध्य और पश्चिम क्षेत्र के लिए राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें महाराष्ट्र के माननीय राज्यपाल श्री सी.वी. विद्यासागर राव मुख्य अतिथि थे। तत्पश्चात, दिनांक 09.02.2018 को वाराणसी में उत्तर क्षेत्रों के लिए राजभाषा सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसमें उत्तर प्रदेश के माननीय राज्यपाल श्री राम नाइक मुख्य अतिथि थे। इन सम्मेलनों में वर्ष 2016–17 के लिए राजभाषा पुरस्कार प्रदान किए गए। सचिव, राजभाषा विभाग ने इन सम्मेलनों की अध्यक्षता की। इन सम्मेलनों में मैंने संबंधित क्षेत्रों में कार्यरत नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के अध्यक्षों एवं सदस्य–सचिवों के साथ समागम/परस्पर चर्चा करते हुए सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रयोग को बढ़ाने में आ रही समस्याओं का समाधान निकालने के उद्देश्य से गहन मंथन किया। राजभाषा विभाग द्वारा आयोजित सभी सम्मेलन बहुत सार्थक रहे और अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल रहे।

इसके अतिरिक्त, दिनांक 27 दिसंबर, 2017 को माननीया विदेश मंत्री की अध्यक्षता में आयोजित हिंदी सम्मेलन 2018 से संबंधित बैठक के लिए अनुवर्ती कार्रवाई रिपोर्ट तैयार की गई। केंद्रीय सचिवालय

राजभाषा सेवा संवर्ग के 84 कनिष्ठ अनुवादकों/ तदर्थ वरिष्ठ अनुवादकों को वरिष्ठ अनुवादक के पद पर नियमित पदोन्नति दी गई।

वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट 2016–17 तैयार की गई और इसे माननीय गृह राज्य मंत्री से अधिप्रमाणित कराकर लोकसभा और राज्यसभा के पटल पर रखने हेतु भेजा गया। तदुपरांत वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट 2016–17 की प्रतियां भारत सरकार के सभी मंत्रालयों/ विभागों/नराकासों आदि को प्रेषित की गईं।

राजभाषा के प्रभावी कार्यान्वयन की दिशा में जारी किए जाने वाले लक्ष्यों से संबंधित वार्षिक कार्यक्रम 2018–19 तैयार कर माननीय गृह राज्य मंत्री जी के अनुमोदन हेतु प्रस्तुत किया गया।

केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो,केंद्र सरकार के कार्यालयों में अनुवाद कार्य से जुड़े अधिकारियों एवं कर्मचारियों के लिए अनुवाद प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करता है। इसी क्रम में, ब्यूरो द्वारा 17 प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए गए जिनमें 379 प्रशिक्षार्थियों को प्रशिक्षित किया गया। ब्यूरो द्वारा दिसंबर 2017, जनवरी 2018 और फरवरी 2018 के दौरान कुल 6577 मानक पृष्ठों की अनूदित सामग्री विभिन्न मंत्रालयों/ विभागों को प्रेषित की गई।

केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान द्वारा तीन गहन हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन किया गया जिनमें कुल 110 कार्मिकों ने भागीदारी की। संस्थान द्वारा देश के विभिन्न शहरों में 34 हिंदी कम्प्यूटर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए गए। उप निदेशक(परीक्षा), हिंदी शिक्षण योजना द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर हिंदी टंकण/हिंदी आशुलिपि की परीक्षाओं का आयोजन किया गया और वडोदरा केन्द्र पर गहन प्रवीण ऑनलाइन परीक्षा का आयोजन किया गया। उप निदेशक (परीक्षा) द्वारा हिंदी प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ, प्राज्ञ बैंकिंग तथा पारंगत की ऑनलाइन एवं ऑफलाइन परीक्षाओं में पंजीकृत 14734 प्रशिक्षार्थियों का परीक्षा परिणाम तैयार किया गया। उपनिदेशक (पश्चिम) द्वारा पश्चिम क्षेत्र में तैनात गैर–मराठी कार्मिकों के लिए क्षेत्रीय भाषा (मराठी) के आधारभूत प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान की कार्यशाला एकक द्वारा विभिन्न कार्यशालाओं में सहायक निदेशकों/उपनिदेशकों/वरिष्ठ सहायक निदेशकों को प्रशिक्षण दिया गया।

संसदीय राजभाषा समिति की तीन उप समितियों ने विभिन्न मंत्रालयों के कुल 129 अधीनस्थ विभागों/ कार्यालयों/बैंकों/उपक्रमों का राजभाषा संबंधी निरीक्षण किया।

इस समय, देश भर में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की संख्या बढ़ कर 472 पहुँच गई है। देश के विभिन्न नगरों में 169 नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकों का आयोजन किया गया। विभाग को समय–समय पर राजभाषा संबंधी विभिन्न शिकायतें प्राप्त होती रहती हैं। संदर्भाधीन अवधि के दौरान कुल 379 शिकायतों का निपटान किया गया।

आशा है कि आपको राजभाषा भारती का यह अंक पसंद आएगा। राजभाषा भारती को हर दृष्टि से बेहतर बनाने के लिए हम कृतसंकल्प हैं। आपके सुझावों और मनोभावों का हार्दिक स्वागत है।

आप सब को मेरी अशेष शुभकामनाएं !

विपिन बिहारी

संपादकीय

हिंदी भाषा विश्ववारा भारतीय संस्कृति की संवाहक है। यह एक उदारचरित भाषा है और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना इसे विरासत में मिली है। देश की वेशभूषा, रहन–सहन, खेती–बारी, रीति–रिवाज, गीत–संगीत, भाई–चारा, रिश्ते–नाते, सुख–दुख और आपसी मेलजोल की भाषा होने के साथ यह भाषा देश में ज्ञान–विज्ञान के लिए वातायन खोलने वाली भाषा है। यह संपूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने वाली भाषा है। कच्छ से कोहिमा तक और कश्मीर से कन्याकुमारी तक किसी न किसी रूप में पढ़ी, बोली और समझी जाने वाली भाषा है। यह स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के स्वप्न और आत्मसम्मान की भाषा है। यह गोपाल स्वामी आयंगर, कन्हैयालाल मणिक लाल मुंशी, दयानंद सरस्वती, महात्मा गांधी, सरदार वल्लभभाई पटेल, डॉ. भीमराव अंबेडकर, रवीन्द्रनाथ टैगोर, केशवचंद्र सेन सहित उन तमाम मनीषियों की भाषा है, जिन्होंने स्वतंत्रता के लिए ताने–बाने बुने और हंसते–हंसते अपने प्राणों की आहुति दे दी।

स्वतंत्रता के पश्चात इसे संघ सरकार की राजभाषा का दर्जा इसके देशव्यापी विस्तार और इसके सामर्थ्य को ध्यान में रखते हुए दिया गया। सरकार ने इस भाषा को भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में इसे विकसित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। ज्ञान–विज्ञान की सभी विधाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए लगभग साढ़े छः लाख शब्द तैयार किए गए।

कोई भी भाषा किसी भाषा की प्रतिद्वंद्वी नहीं होती है। भाषाएं सहज प्रवाहमान होती रहती है। यह अवश्य है कि देश भर में सहज प्रवाहमान हिंदी और भारतीय भाषाओं में प्राथमिक शिक्षा न देकर अंग्रेजी माध्यम को

बलपूर्वक लाने का एक असहज प्रयास जारी है। दूर–दराज के गांवों में अंग्रेजी माध्यम के प्राथमिक विद्यालय अंग्रेजी नामों से धड़ाधड़ खोले जा रहे हैं। मनीषियों के बीच यह एक चिंतन और स्वस्थ चर्चा का विषय होना चाहिए।

देश को स्वतंत्र हुए सत्तर से अधिक वर्ष बीत चुके है। स्वतंत्रता के पश्चात इतना समय बीत जाने के बाद भी देश, विदेशी भाषा पर निर्भर क्यों है? उच्चतर शिक्षा और तकनीकी शिक्षा की तो बात ही छोड़ दें, प्राथमिक शिक्षा भी पूरे राष्ट्र में हिंदी में नहीं हो रही है। यह एक झकझोरने वाली बात है। जिस प्राचीन भारतीय शिक्षा और संस्कृति का महात्म्य संपूर्ण विश्व स्वीकार करता हो, उस देश के आधुनिक समाज में प्राथमिक शिक्षा भी विदेशी भाषा की मोहताज हो इस स्थिति को व्यक्त करने के लिए 'एक शब्द' ढूंढने का प्रयास इस अंक में प्रकाशित लेखों के माध्यम से किया गया है।

पूर्व के अंकों की भांति इस अंक में भी सचिव (राजभाषा) और संयुक्त सचिव (राजभाषा) के प्रेरक स्तंभ आपके समक्ष प्रस्तुत है। पत्रिका में प्रकाशित समस्त लेख 'प्राथमिक शिक्षा में हिंदी–संभावनाएं एवं चुनौतियां' विषय पर केंद्रित हैं।

आशा है यह विशेष अंक आपको उपयोगी लगेगा।

माननीय उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्री श्री राम विलास पासवान जी का साक्षात्कार

1. भाषा तथा संस्कृति की दृष्टि से देश के विभिन्न प्रांतों को किस प्रकार देखते हैं?

देश के विभिन्न प्रान्तों की भिन्न–भिन्न परम्परा, संस्कृति और भाषायी विविधता के बावजूद उनके बीच परस्पर आदान–प्रदान की भाषा हिंदी है।

2. आपके विचार से देश में हिंदी भाषा की वर्तमान स्थिति किस प्रकार की है?

हिंदी भाषा की उपादेयता इस बात से प्रमाणित होती है कि यह हमारे बहुसंख्य लोगों की भाषा है, साहित्यकार और कवियों की भाषा है, लोकप्रिय फिल्मों की भाषा है। इसमें विज्ञान और व्यापार की अद्यतन जानकारियाँ भी हैं। इस सबके बावजूद एक खास वर्ग के अंग्रेजी मोह के कारण आज भी हिंदी को उसका गौरव और वह स्थान नहीं मिल सका है, जिसकी वह अधिकारी है।

3. आपने अपने राजनीतिक जीवन में विभिन्न आंदोलनों में भाग लिया, इन आंदोलनों में भाषा का महत्व या योगदान किस प्रकार का होता है?

छात्र जीवन से लेकर सक्रिय राजनीतिक जीवन तक हुए विभिन्न आन्दोलनों में देश के विभिन्न प्रांतों में आना–जाना होता था। मैंने हमेशा अपनी बात हिंदी में ही रखी। गैर–हिंदी भाषी प्रांतों में भी भाषा को लेकर कभी असुविधा नहीं हुई।

4. स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान संपूर्ण देश में जनता से जुड़ने के लिए हिंदी भाषा का प्रयोग किया गया, इसका प्रमुख कारण क्या था?

ब्रिटिश हुकूमत के अत्याचारों के विरुद्ध भारतीय जनमानस में एकता तथा चेतना जगाने और उन्हें एक मंच पर लाने के लिए एक सशक्त भाषायी माध्यम की आवश्यकता महसूस की गई। उस समय देश के विभिन्न क्षेत्रों के सभी प्रमुख नेताओं ने हिंदी को ही इसके लिए सर्वथा उपयुक्त पाया और अपनाया।

5. आप स्वयं एक हिंदी भाषी प्रदेश से आते हैं, राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी में कार्य करने में आपको किस प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ा?

अपने राज्य बिहार में और राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी में कार्य करने में मुझे आज तक किसी भी प्रकार की चुनौती का सामना नहीं करना पड़ा, बल्कि मैं तो कहूंगा हिंदी में कार्य करना अधिक सुविधाजनक है।

6. सरकारी योजनाओं के कार्यान्वयन और उसकी सफलता में भाषा की भूमिका किस प्रकार की होती है?

सरकारी योजनाएं आम जनता के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने और उनके विकास को ध्यान में रख कर ही बनाई जाती हैं। इन योजनाओं की सफलता ही इस बात पर निर्भर करती है कि सरकार द्वारा बनाई जा रही योजनाओं को जनता भली प्रकार समझ सके और यह सब तभी संभव है जब जनता को उनके लिए बनाई गई योजनाओं की जानकारी उनकी भाषा में ही दी जाए।

7. सरकारी कामकाज में राजभाषा हिंदी के प्रयोग से क्या आप संतुष्ट हैं?

आजादी के बाद से अब तक हिंदी की प्रगति के लिए अनेक प्रयास हुए हैं। किन्तु अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ किया जाना शेष है।

8. राजभाषा के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए आप और किस प्रकार के प्रयासों की

आवश्यकता महसूस करते हैं?

राजभाषा के सफल और प्रभावी कार्यान्वयन के लिए व्यक्तिगत अभिरुचि जागृत होना आवश्यक है। केवल सरकारी प्रयासों और वार्षिक समारोहों का आयोजन कर देने से ही हिंदी की प्रगति नहीं हो सकती है। इस कार्य में स्वयंसेवी और गैर–सरकारी प्रयासों की सहायता भी बहुत जरूरी है।

9. तकनीक तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिंदी के प्रभाव को कैसे बढ़ाया जा सकता है?

विश्व में मौजूद किसी भी देश की प्रगति को देखा जाए तो वहाँ की राष्ट्रभाषा ने उस देश को ऊंचाई हासिल करने में मदद की ही। जहां तक भारत का सवाल है, आज हम आजादी के 70 साल बाद भी हिंदी और विज्ञान के महत्व को न समझ पाने के कारण भारत की प्रगति में जनमानस की भागीदारी को साथ नहीं ले पा रहे हैं। विज्ञान, तकनीकी, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा एवं अभियांत्रिकी विषयों को हिंदी में सरल एवं रुचिपूर्ण तरीके से जनमानस में पहुंचाने के प्रयासों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

10. क्या अपने मंत्रालय में हिंदी के कामकाज की स्थिति से आप संतुष्ट हैं?

जी हां। मेरे मंत्रालय की हिंदी के प्रति सच्ची निष्ठा और परिश्रम का ही सुफल है कि मेरा मंत्रालय विगत कई वर्षों से राजभाषा कीर्ति पुरस्कार प्राप्त कर रहा है।

11. आधुनिक बाजार में हिंदी भाषा की उपयोगिता को आप किस प्रकार देखते हैं?

आज के समय में हिंदी को तरजीह दिए बिना भारत के परिप्रेक्ष्य में उत्पाद की मार्केटिंग संभव ही नहीं है। जिस देश की अधिकतर जनसंख्या हिंदी पढ़ना और लिखना जानती हो, वहां की बहुत बड़ी आबादी पर अपने उत्पाद की पहुंच बनाने के लिए हिंदी भाषा की उपयोगिता स्वयं सिद्ध है।

12. यह सर्वविदित है कि भारत विश्व का सबसे बड़ा बाजार है। क्या भारत में व्यापार करने के लिए भाषा की कोई भूमिका है?

आज भारत विश्व का सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां, जो भारत में व्यापार कर रही हैं, या करना चाहती हैं, भारत और विशेष रूप से हिंदी के महत्व को समझती हैं। यही कारण है कि आज विश्व के कई राष्ट्रों ने अपने यहां हिंदी की पढ़ाई शुरू कर दी है।

13. विदेशी कंपनियों ने भारतीय बाजार में उपभोक्ताओं को भाषायी रूप में किस प्रकार प्रभावित किया है?

विदेशी कम्पनियों ने इस बात को महसूस किया कि वे भारतीय भाषाओं को अपनाए बगैर भारतीय बाजार में अपनी जगह नहीं बना सकते। उपभोक्ताओं तक अपने उत्पादों की पहुंच बनाने के लिए उन्हें भारतीय भाषाओं को अपनाना पड़ा। इस कारण भारतीय भाषाएं उनकी व्यावसायिक जरूरत बन गई। हिंदी में इतनी क्षमता विद्यमान है कि वह तमाम विदेशी और स्वदेशी भाषाओं के शब्दों को ज्यों का त्यों अपने में समाहित कर लेती है। इस कारण हिंदी भाषा और अधिक उन्नत और संपन्न हुई है।

14. हिंदी भाषा के प्रति वर्तमान पीढ़ी का रुझान किस प्रकार का है?

वर्तमान स्थिति को बहुत उत्साहजनक नहीं कहा जा सकता है। परन्तु यह हम सब की सामूहिक जिम्मेदारी और नैतिक कर्तव्य है कि हम अपनी युवा पीढ़ी में राष्ट्रभाषा के प्रति आकर्षण पैदा करें, जिस प्रकार के प्रयास राष्ट्रीय एकता की भावना जागृत करने के लिए किए जाते हैं, उसी प्रकार के प्रयास राष्ट्रभाषा को अपनाने और उसकी उन्नति के लिए भी किए जाने चाहिए।

15. क्या रोजगार की दृष्टि से हिंदी भाषा–भाषियों को किसी प्रकार की परेशानियों का सामना करना पड़ता है?

यद्यपि विगत कुछ वर्षों में इस दिशा में कुछ सुधार तो हुआ है, किन्तु अभी भी बहुत कुछ किए जाने की आवश्यकता है। अभी भी हिंदी भाषी विद्यार्थियों और अभ्यर्थियों की शिकायत रहती है कि अध्ययन हेतु हिंदी में उच्चकोटि की पुस्तकें और साहित्य उपलब्ध नहीं है तथा भर्ती परीक्षाओं में हिंदी का स्तर अंग्रेजी की तुलना

में काफी निम्नस्तर का होता है, जिससे उनको प्रश्नपत्र समझने में काफी कठिनाई होती है। सरकार की सभी भर्ती परीक्षाओं में हिंदी के प्रश्नपत्र, अध्ययन हेतु पुस्तकें और साहित्य रुचिकर एवं सरल भाषा में उपलब्ध हो, इस ओर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

16. हिंदी भाषा की वैश्विक स्थिति के बारे में क्या कहना चाहेंगे?

आज हिंदी का स्वरूप काफी व्यापक हो गया है। विदेशी विश्वविद्यालयों में हिंदी की पढ़ाई होती है। भूमंडलीकरण और बाजारीकरण के चलते हिंदी का व्यापक प्रसार हुआ है, जिसके चलते हिंदी बाजार और रोजगार से जुड़ी है। मौजूदा समय में हिंदी का रोजगारपरक होना इसकी सबसे बड़ी खासियत है। पूंजीवाद के इस दौर में बाजार के लिए हिंदी अनिवार्य बन गई है। हिंदी ने लाखों–करोड़ों भारतीयों को रोजगार दिया है। हिंदी की वैश्विक क्षमता इतनी ज्यादा है कि वह आसानी से विश्वभाषा बन सकती है।

17. वैश्विक परिदृश्य में हिंदी भाषियों के लिए क्या कोई असुविधा देखते हैं?

देखिए, मैं अँग्रेजी या किसी विदेशी भाषा का विरोधी नहीं हूं। आज के वैश्विक परिदृश्य में सूचना, तकनीक, विज्ञान और प्रौद्योगिकी एवं चिकित्सा आदि तमाम क्षेत्रों में रोज नए–नए अनुसंधान एवं विकास हो रहे हैं। इनसे जुड़े रहने के लिए हमें विदेशी भाषा को भी सीखना होगा। जहां तक हिंदी भाषियों के लिए असुविधा का प्रश्न है, मैंने अनेक देशों का भ्रमण किया है। मुझे कहीं कोई असुविधा महसूस नहीं हुई। लेकिन इस सबसे ऊपर असल बात यह है कि हमें अपनी जड़ों से दूर नहीं होना है। अपना राष्ट्र और अपनी भाषा का सम्मान सर्वोपरि होना चाहिए। यह हमारा राष्ट्रीय और नैतिक कर्तव्य भी है।

18. हिंदी भाषा को जन–जन की भाषा बनाने के लिए किस प्रकार के प्रयासों की आवश्यकता है?

हिंदी जन–जन की भाषा बने, इसके लिए ऐसा वातावरण बनाना होगा कि लोग हिंदी सीखने के लिए स्वयं आगे आएं और उसके लिए एक व्यावहारिक कारण होना चाहिए। हिंदी सीखने के लिए हमारे विद्यार्थियों को उसी प्रकार लालायित होना होगा, जिस प्रकार अंग्रेजी सीखने के लिए आज विद्यार्थियों की भीड़ दौड़ रही है।

वर्तमान स्थिति यह है कि आज बड़े–बड़े प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में हिंदी में स्नातकोत्तर विषय में प्रवेश लेने वाले विद्यार्थी बहुत ही कम हैं। आज स्थिति यह है कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के विज्ञापन अक्सर हिंदी में होते हैं ताकि आम आदमी भी इन्हें समझ सके। इन्हें देखकर तो कभी–कभी ऐसा लगता है कि स्वयं हिंदी भाषा अंग्रेजी भाषा का प्रचार कर रही है।

व्यावसायिक शिक्षा का माध्यम मात्र अंग्रेजी भाषा हो गई है। एम.बी.ए., एम.एस.सी., सी.ए., बी.टेक. ही नहीं व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा का शायद ही कोई और क्षेत्र हो जिसे हिंदी में पढ़ाया जा रहा हो। व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा हिंदी में भी प्राप्त की जा सकती है। इतना ही नहीं, नियुक्ति के लिए समूह चर्चा एवं साक्षात्कार में हिंदी का प्रयोग करने वालों को कई बार कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

ऐसा नहीं है कि आज हिंदी के विकास के लिए कोई काम नहीं हो रहा है या हिंदी बिल्कुल भी सीखी और पढ़ी नहीं जा रही है। आज इन्टरनेट पर हिंदी की अनेक वेबसाइट हैं, जिनमें कई प्रकार की महत्वपूर्ण जानकारियां उपलब्ध हैं। आज विदेशी भी हिंदी भाषा सीख रहे हैं। भारत में भी एक बहुत बड़ा वर्ग ऐसा है जो हिंदी जानता, पढ़ता और समझता ही नहीं, अपितु प्रयोग भी करता है। आज यह सोचना जरूरी हो गया है कि हम हिंदी भाषा की उन्नति के लिए क्या कर सकते हैं। क्योंकि आज यह आम धारणा बन गई है कि बिना हिंदी तो हम गुजारा कर सकते हैं, परन्तु आज के इस प्रतियोगी युग में बिना अंग्रेजी के गुजारा सम्भव नहीं है। इस धारणा को बदलना होगा। हिंदी जन–जन की भाषा बने, इसके लिए यह प्रयास होना चाहिए कि हिंदी को रोजगार की भाषा बनाया जाए। हिंदी यदि रोजगार की भाषा बन जाए तो इस विषय में चिंता करने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। यदि हिंदी भाषा में शिक्षण प्राप्त युवा को अन्य युवाओं के समान आय के अवसर प्राप्त हो जाएं, और आम भारतीय जनमानस हिंदी भाषा की महत्ता को समझने लगे, तो हिंदी भाषा को भारत में जन–जन की भाषा बनने से कोई नहीं रोक सकता है।

मातृभाषा से आता है व्यक्तित्व में निखार– संतोष कुमार मल्ल

कृपया आप अपने बारे में हमारे पाठकों को संक्षिप्त जानकारी दें?

मैं भारतीय प्रशासनिक सेवा के 1997 बैच बिहार कैडर का अधिकारी हूं। 1997 में मैंने मसूरी में ज्वाईन किया और 1998 से लेकर 2014 तक बिहार की सेवा में रहा। पांच जिलों में लगभग 10 वर्ष जिलाधिकारी और उसके बाद सचिवालय के पदों पर रहा। जून 2014 में भारत सरकार में माननीय कृषि मंत्री श्री राधा मोहन सिंह जी के निजी सचिव के रूप में योगदान दिया और संयुक्त सचिव के रूप में पदोन्नति के बाद मई 2015 से केंद्रीय विद्यालय संगठन में आयुक्त की भूमिका का निर्वहन कर रहा हूं।

महोदय मुझे ज्ञात हुआ कि आप बी. टेक और एम. टेक है। आई आई टी कानपुर जैसे प्रतिष्ठित संस्थान से तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपका प्रशासनिक सेवा की ओर कैसे झुकाव हुआ?

तकनीकी सेवाओं में रहकर निश्चय ही देश की सेवा कर सकते हैं और करते भी अगर हम इसमें सफल नहीं होते। लेकिन प्रशासनिक सेवाओं का जो दायरा है वो एक भिन्न स्तर का है। उसमें जॉब सटिसफेक्शन है। अगर ईमानदारी से कहूं तो प्रारंभ से ही मेरा लक्ष्य भारतीय प्रशासनिक सेवा में आना था और चूंकि ये एक बहुत कठिन परीक्षा होती है, बहुत ही श्रम–साध्य होती है और इसमें आपकी व्यक्तिगत लगन, मेहनत और श्रम का महत्व होता है। बहुत सारे प्रतिभावान परीक्षार्थी थे जो शायद मुझसे ज्यादा क्षमतावान थे, वो किसी कारणवश परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हो पाये थे। मैं एक नौकरीपेशा परिवार से आता हूं। माता और पिता दोनों ही शिक्षक थे। उस परिवेश में उस समय जो बेस्ट विकल्प लगा उसका चयन किया। पहले आई आई टी में ज्वाइन किया उसके बाद आई. ए. एस. बनने का प्रयास किया। मेरे आई. आई. टी. के अधिकांश मित्र यूनाईटेड स्टेट ऑफ अमेरिका में या अन्य पश्चिमी देशों में कार्य कर रहे हैं पर मुझे लगता है कि उनकी तुलना में, मैं देश के लिए काफी कर सकने की स्थिति में हूं।

तकनीकी शिक्षा में भाषा की भूमिका को किस प्रकार देखते हैं?

मुझे याद है कि आईआईटी कानपुर में जब बीटेक प्रथम वर्ष में ज्वाइन किया तो सभी विद्यार्थियों की अंग्रेजी से संबंधित एक परीक्षा ली गई। ये 1990 की बात है। यह परीक्षा लगभग डेढ़ से दो घंटे की थी। उसी परीक्षा के रिजल्ट के आधार पर यह तय होता था कि कौन लोग फर्स्ट ईयर में अंग्रेजी का कोर्स अलग से पढ़ेंगे और कौन इंगलिश न पढ़ के साईकोलाजी इत्यादि पढेंगे। जो लोग अंग्रेजी विषय में कमजोर माने जाते थे उन्हें अलग से इसकी शिक्षा दी जाती थी। मै मूलतः हिंदी भाषी या हिंदी माध्यम का विद्यार्थी था। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि उस परीक्षा में पास न होने की वजह से मुझे अंग्रेजी पढ़नी पड़ी।

तकनीकी शिक्षा के लिए भाषा संबंधी जिस व्यवस्था से आप 1990 में रूबरू हुए उस व्यवस्था को आज आप कितना सही मानते हैं?

मेरे सपनों में तो ऐसी बात है कि हमारी अपनी मातृभाषा और देश में अनेक भाषाएं हैं जो सिड्यूल में हैं उन सभी में तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था हो जाए तो वह आयडल होगा। यह कठिन होगा क्योंकि उसके लिए बड़े प्रयास की आवश्यकता होगी लेकिन यदि ठाना जाए या प्रयास किया जाए तो उसका भी उपाय किया जा सकता है। इसका जीता जागता उदाहरण है इजरायल देश। 1940 के दशक में उन्होंने भी हमारे साथ ही आजादी प्राप्त की थी। भाषाओं को बोलने वाले वहां रसियन आए हो, चाहे जर्मन आए हो, चाहे बहुत सारे राष्ट्रों के लोग इजरायल में बसे, उन्होंने अंग्रेजी को अपनी भाषा न बनाकर हिब्रु में सारा विषय डेवलप किया। उनकी सारी पढ़ाई, चाहे वो रॉकेट साइंस हो, मेडिकल साइंस हो या चाहे वो इंजीनियरिंग साइंस की हो, आज हिंब्रु भाषा में होती है। टेक्नीशियन के सारे कोर्सेस हिब्रु भाषा में है। अगर मातृभाषा में बच्चों को टेक्निकल शिक्षा मिले तो बच्चे बहुत अच्छा कर सकेंगे। बहुत सारे बच्चे हैं वो शुरूआती चुनौती इंगलिश में समझने से हतोत्साहित होते हैं। उनको कई तरह की कठिनाईयां भी आती हैं।

प्राथमिक शिक्षा में हिंदी भाषा को कितना महत्वपूर्ण मानते हैं।

जब हम मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा को तवज्जो देंगे तो बच्चों का आत्मविश्वास बहुत बढ़ता है। मैंने अपने बच्चों के साथ भी यह अनुभव किया कि जब वह इंगलिश मीडियम स्कूल में कक्षा नर्सरी और केजी में पढ़ते थे, वहां पर उनका कान्फीडेंस और अध्ययन का स्तर तथा प्रदर्शन आदि काफी कम था। जब मैंने उन्हें एक ऐसे विद्यालय में स्थानांतरित किया जहां कक्षा एक या दो में उन्होंने हिंदी माध्यम में पढ़ाई की तो उनका सारा परिदृश्य बदल गया है। बच्चों के अपने व्यक्तित्व में निखार आया है।

मनोवैज्ञानिकों और शिक्षाविदों का भी मानना है कि बच्चों की मातृभाषा में शिक्षा उनके व्यक्तित्व विकास में अलग भूमिका निभाती है?

यह बिल्कुल सही है क्योंकि जब आप किसी दूसरी भाषा में अपने आप को एक्सप्रेस करने की कोशिश करेंगे यानि किसी और भाषा में मन की बात कहने का प्रयास करेंगे तो निश्चय ही आपके मस्तिष्क को अतिरिक्त प्रयास करने पड़ेंगे और तब जो लय है, जो ताल है, जो फ्लो है,वह अवश्य बदल जाएगा। आप क्या बोल रहे हैं कितना अच्छा बोल रहे हैं उसी से आपकी मानसिकता परिलक्षित होगी।

केंद्रीय विद्यालय संगठन इस दिशा में किस प्रकार के विशेष प्रयास कर रहा है?

केंद्रीय विद्यालय संगठन की स्थिति कुछ भिन्न है। यह भारतवर्ष में फैला हुआ संगठन है और इसका प्रारंभिक उद्देश्य ही था कि केंद्र सरकार के कर्मचारी, जो रक्षा बलों के सैनिक हैं,जिनके बच्चे देश में कहीं से कहीं ट्रांसफर होते हैं, फिर बोर्ड बदल जाता है तो भाषा बदल जाती है, उनके लिए सभी जगह एक यूनिफॉर्म प्लेटफार्म लागू किया गया, जिसमें हिंदी और अंग्रेजी दो भाषाओं में ही पढ़ाई होती है। आज की तिथि में देश में कुल 1183 केंद्रीय विद्यालय हो गए हैं और सभी राज्यों में हैं। वहां की लोकल मातृभाषा की कक्षा एक में पढ़ाई करा पाना हमारे लिए अभी संभव नहीं हो पा रहा है। लेकिन हम लोगों का हिंदी और इंगलिश पर बहुत अच्छा फोकस है।

केंद्र सरकार के कार्यालयों में हिंदी में कार्य की क्या स्थिति है?

बिहार राज्य में जहां पर मैं 16 वर्ष तक सेवा में था, वहां शत–प्रतिशत कार्य हिंदी में हो रहा था। सारी संचिकाओं में जो टिप्पणियां है, सारा पत्र व्यवहार पूर्णतः हिंदी में ही था। केवल कोर्ट ऑर्डर को ही हम इंगलिश में करते थे। उसमें भी काफी काम हिंदी में करने का प्रयास करते थे। कोर्ट के केसेज में अधिकांशतः जो नियमावलियां हैं, जो ऐप्स हैं उनके जो रेफरेंसेज आते हैं, उसमें अंग्रेजी का प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है क्योंकि अधिकांशतः उसी में उपलब्ध है। हायर कोर्ट के ऑर्डर होते हैं वो उसी में होते हैं लेकिन जो छोटे लेवल की कार्रवाईयां हैं जैसे अनुमंडल दंडाधिकारी के स्तर के न्यायालय में, वहां तो सारा काम हिंदी में आसानी से हो जाता है। हाईकोर्ट से रिलेटेड मैटर को इंगलिश में करने की आवश्यकता पड़ती है। वहां हिंदी से इंगलिश में अनुवाद की आवश्यकता पड़ जाती है। जो एक अलग चुनौती होती है।

आप अनुवाद को कितना कारगर मानते हैं?

अनुवाद मूल भाषा के तत्व व उसके भाव को यथावत अभिव्यक्त नहीं कर सकता।

बिहार से केंद्र में आने के बाद हिंदी में काम करना कितना चुनौतिपूर्ण रहा?

यहां पर अभी हमलोग अपने आप को ढालने में लगे हैं। अभी केंद्रीय विद्यालय संगठन में राजभाषा समिति का निरीक्षण हुआ था तो माननीय राजभाषा समिति के सदस्यों ने हम लोगों को आंकडों के आधार पर कुछ निर्देश भी दिए। हम पिछले जुलाई के माह से फाइलों में शत प्रतिशत कार्य और अपने पत्र– व्यवहार में जितना हो सके, हिंदी में करने की कोशिश कर रहे हैं। राजभाषा समिति के निरीक्षण के प्रभाव के कारण अब अधिकाधिक रूप से पूरा प्रयास हम हिंदी में ही करने की कोशिश करते हैं। कभी–कभी ऐसी स्थिति आ जाती है कि माननीय सांसदों ने माननीय मंत्री महोदय को इंगलिश में पत्र लिखा है और वह 'ख' और 'ग' क्षेत्र से हैं। नियमावली के अनुसार उसमें एक नियत प्रतिशत पत्रों का उत्तर हिंदी में देना है तो वहां पर एक चुनौती हो रही है। हम सब लोग प्रयास कर रहे हैं कि सभी प्रश्नों का उत्तर हिंदी में दें और हमें वह बहुत अच्छा भी लग रहा है।

जब आप माननीय मंत्री महोदय के निजी सचिव के रूप में काम कर रहे थे वहां पर क्या स्थिति थी?

माननीय मंत्री महोदय ने मंत्रालय में सबको स्पष्ट निदेश दिया था कि उनके सामने अधिक से अधिक मामले हिंदी में रखे जाएं। कई बार उनके सामने जो नोट्स आते थे वो उसके हिंदी अनुवाद की अपेक्षा करते थे। इस कारण पूरे कृषि मंत्रालय में सब लोग प्रयास पूर्वक हिंदी में लेख लिखने की कोशिश कर रहे थे। उन्होंने काफी प्रयास करके, सबको निदेश देकर और सबको आग्रह कर यह कार्य किया था कि अधिकांश नोटिंग उनके पास हिंदी में आए और आने भी लगी थी।

अगर भाषा का महत्व बढ़ाना हो तो उसे रोजगार से जोड़ देना चाहिए। आप इस बारे में क्या कहते हैं?

निश्चय ही कुछ हद तक तो यह बात सही है। मार्केट पहले इंगलिश के द्वारा डॉमिनेट करता था। अभी पिछले कुछ समय में आप देखेंगे कि बहुत सारे विदेशी लोग आकर हिंदी में ऐड करते हैं। अंतर्राष्ट्रीय क्रिकेट या आईपीएल के ऐड देखें

तो विदेशी खिलाड़ी हिंदी में बोलते नजर आते हैं। पहले यह स्थिति नहीं थी। आप देखें मराठी भाषियों की और तेलुगू भाषियों की संख्या यूरोप के बहुत सारे देशों में, एक देश में बोली जाने वाली भाषा की संख्या से अधिक है। स्थिति अब बदल रही है। गूगल, माईक्रोसॉफ्ट सब आज हिंदी भाषा में अपना अपना पूरा प्लेटफार्म लेकर आ रहे हैं।

केंद्र सरकार के कार्यालयों में हिंदी में काम करना किस तरह से सुगम किया जा सकता है और कैसे हम कार्यालय कर्मियों को और अधिक प्रोत्साहित कर सकते हैं?

वरीय पदाधिकारी अगर इस बात के लिए सतत् जागरूक रहेंगे और स्वयं प्रयासपूर्वक हिंदी का प्रयोग करेंगे तो वह इस प्रयास की पहली कड़ी होगी। क्योंकि अधिकांश लोग ऊपर के अधिकारी और पदाधिकारी को देखकर प्रभावित होते हैं और वैसी ही मानसिकता को अपनाने की कोशिश करते हैं। तो यदि वरीय पदाधिकारी इसमें प्रयास करें, तो वह एक बहुत महत्वपूर्ण कड़ी होगी। जो कर्मी हिंदी भाषी नहीं है उनके लिए कार्य को सुगम बनाने के लिए कार्यशालाएं और पुरस्कार आदि की व्यवस्था, अधिक से अधिक ट्रेनिंग की व्यवस्था की जानी चाहिए। तीसरी बात है कि राजभाषा नियमों का कड़ाई से पालन किया जाना चाहिए।

आपके आने के बाद केंद्रीय विद्यालय संगठन में हिंदी कार्यान्वयन को कैसे सुदृढ़ किया जा रहा है?

जो हमारे हिंदी के रूल्स है, राजभाषा के जो नियम हैं उसके तहत जो पत्राचार का प्रतिशत है, हम उसका प्रतिदिन कड़ाई से अनुपालन करते हैं। जो उपायुक्त उतना प्रतिशत प्राप्त नहीं कर पाते हैं अपने प्रतिवेदनों में हम उन्हें फोन से भी निदेश देते हैं। यदि लिखित में स्पष्टीकरण मांगने की नौबत आई तो वह भी हमने किया है। हिंदी का प्रयोग चाहे पत्राचारों में, चाहे फाईलों में हो, तय मानक के अनुरूप प्राप्त करना सुनिश्चित किया गया है। 'क' क्षेत्र में तथा 'ख' क्षेत्र में शत प्रतिशत और 'ग' क्षेत्र में जो लक्ष्य हैं, जो मानक है उस तक सब लोग पहुंचे, इसके लिए हम इनसिस्ट करते हैं। लगातार अपनी बैठकों में मॉनिटरिंग के द्वारा और इसके लिए आंतरिक पुरस्कार की व्यवस्था को भी हमने बढ़ाया है। हरेक समारोह में मैं स्वयं भी रहता हूं ताकि नीचे तक सकारात्मक संदेश जाए।

हिंदी भाषा के बेहतर भविष्य के लिए क्या किया जाना चाहिए?

मेरी सोच है कि हमें जितनी भी यूनिवर्सिटी एजुकेशन है उसको प्रयास करना चाहिए कि वह हिंदी में उपलब्ध हो जाए। सिर्फ हिंदी ही नहीं मैं तो कहूंगा सभी क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध हो जाए। तभी हमारी 70–80 प्रतिशत जनता जो गांव में निवास करती है वो अपनी क्षमता को पाने में सफल हो सकेगी। 5 से 10–15 प्रतिशत लोग अंग्रेजी में अपना कार्य करते हैं, अपनी बोलचाल करते हैं और उससे 80–85 प्रतिशत लोग हीन भावना से ग्रसित होते है। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि उनके बीच कम्यूनिकेशन गैप जैसी स्थिति भी पैदा होनी शुरू हो जाती है। जब हम इस दिशा में जाएंगे कि यूनिवर्सिटी एजुकेशन हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध हो जाएं तब समाज के सभी वर्गों का स्वतः उत्थान होगा तथा देश के विकास की गति कई गुना बढ़ जाएगी।

आपका बहुत बहुत आभार श्रीमान् !

साक्षात्कार कर्ता – डॉ. धनेश द्विवेदी

स्वाभिमान का प्रतीक–मातृभाषा में शिक्षा

ए. भारत भूषण बाबू

वर्तमान समय में भारत में स्कूलों में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा दिलाने को लेकर एक अनावश्यक सनक–सी व्याप्त है। सामान्यतः सभी माता–पिता यह चाहते हैं कि उनके बच्चे को प्राथमिक स्तर से ही अंग्रेजी माध्यम में शिक्षित किया जाए। वे अपने बच्चे को अच्छी–अच्छी अंग्रेजी की कविताओं का पाठ करते देखना चाहते हैं, जो शायद वे अपने बचपन में बिल्कुल नहीं कर पाए या केवल अपनी क्षेत्रीय या भारतीय भाषा में उच्चारण से आंशिक रूप से कर पाते थे। ऐसे सभी अभिभावक अपने बच्चों द्वारा अंग्रेज़ी की कविता–पाठ करने से आनंदित होते हैं। शायद अंग्रेजी में धारा प्रवाह बात नहीं कर पाने के कारण उनके मन में हीनता, न्यूनता और 'उच्च कोटि'' की अभिव्यक्ति या "बौद्धिक" माध्यम की कमी की भावना घर कर गई है।

मनोवैज्ञानिक कारणों के अलावा, अंग्रेजी में शिक्षा की ओर आकर्षित होने के पीछे एक गहरा और अंतर्निहित कारण भी है। यह एक आम धारणा है कि प्राथमिक चरण से अंग्रेजी माध्यम में शिक्षा प्राप्त करने वाले बच्चे की भविष्य में बेहतर रोजगार या अच्छी नौकरी पाने की संभावना अधिक होती है। यह कुछ मामलों में सच भी हो सकता है। फिर भी, अपने बच्चों को कम से कम प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा, अपनी मातृभाषा में लेने के लिए प्रोत्साहित करने के कई कारण हैं।

सुनने और बोलने की दुनिया में एक बच्चे का पदार्पण उसकी मातृभाषा के माध्यम से होता है और जिस सामाजिक परिवेश में यह होता है वह अधिकतर उसकी मातृभाषा में ही होता है। इससे भाषा और अन्य शैक्षिक विषयों को सीखना एक स्वाभाविक प्रक्रिया बन जाती है। यदि बच्चे को किसी विदेशी भाषा में सीखने के लिए मजबूर किया जाता है, तो सीखने की उसकी नैसर्गिक प्रक्रिया बाधित हो जाती हैं। बच्चे के लिए घर पर होने वाली स्वाभाविक शिक्षण प्रक्रिया और स्कूल में लादी गई विदेशी भाषा में शिक्षा के बीच एक विरोधाभास उपजता है। अब प्रश्न यह उठता है कि बाल जीवन के प्रारम्भ में ही उत्पन्न इस विरोधाभास से बच्चा कैसे उबरे।

इसके विपरीत अगर बच्चा अपनी मातृभाषा में अपनी प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करता है तो उसके लिए विषय बहुत स्पष्ट होगा और उसे समझना आसान। एक विदेशी भाषा में "सोचने" की आवश्यकता के बोझ से बच्चा बच जाएगा। शोध से पता चला है कि यदि छात्रों को विदेशी भाषा माध्यम में पढ़ाया जाता है तो विषय को समझने की बजाए बच्चों को विषय को रट कर याद करना पड़ता है। दूसरी तरफ, यदि वे अपनी स्थानीय भाषा या मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करते हैं, तो बच्चों को पढ़ाई में मज़ा आता है। बच्चों

को मातृभाषा में शिक्षा मिलने की स्थिति में उनके माता–पिता भी अपने बच्चों को पढ़ा सकते हैं, और स्वाभिमान से उनका मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन कर सकते हैं।

एक अन्य बात जो शिक्षा के माध्यम पर चर्चा करते समय हमारे दिमाग में आती है वह है भाषा की प्रकृति और संस्कृति के साथ इसका संबंध। भाषा संस्कृति और परंपराओं का एक महत्वपूर्ण अंग है। यह एक सुस्थापित तथ्य है कि भाषा केवल सम्प्रेषण का माध्यम नहीं है। किसी भाषा के मुहावरे, शब्द और उसका प्रयोग उस देश की संस्कृति के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है। प्रत्येक भाषा न केवल भावों का सम्प्रेषण करती है बल्कि अंतर्निहित मूल्यों को भी परिलक्षित करती है। इसलिए यदि हम अपनी मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त नहीं करते हैं, तो हम भी धीरे–धीरे पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी संस्कृति और मूल्यों को खो देते हैं। यदि हम तीन या चार पीढ़ियों को निरंतर किसी विदेशी भाषा में शिक्षा देते हैं तो स्थायी सांस्कृतिक क्षय के लिए हम ही जिम्मेदार होंगे। विदेशी भाषा और रीति–रिवाजों को सीखने के बावजूद विदेशी परिवेश में हमें स्वीकार नहीं किया जाएगा और हम अपनी संस्कृति से भी कट जाएंगे। इसके अतिरिक्त, यह हमारी मूल भाषाओं, हमारी संस्कृति और सामाजिक प्रथाओं के विकास और प्रसार के नुकसान का भी कारण बनेगा।

बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार, 2009 की धारा 29(2)(च) में यह उल्लेख है कि ''जहां तक व्यावहारिक हो, शिक्षा का माध्यम बच्चे की मातृभाषा में होना चाहिए''। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा, 2005 में बच्चे की मातृभाषा में प्राथमिक शिक्षा देने के महत्व पर विशेष बल दिया गया है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि पाठ्यक्रम और मूल्यांकन रूपरेखा निर्धारित करने के बारे में राज्य सरकारों द्वारा निर्णय लिया जाना होता है और स्कूलों में शिक्षा का माध्यम तय करना भी उन पर ही निर्भर करता है। अनेक राज्यों ने बच्चों को उनकी मातृभाषा में शिक्षित करने के लिए आवश्यक कदम उठाए हैं।

हालांकि इस बहुभाषी दुनिया में बच्चों द्वारा अन्य भाषाएँ सीखना अच्छा है क्योंकि इससे न केवल मस्तिष्क का भरपूर विकास होता है बल्कि उसे बाकी दुनिया के साथ जुड़ने में भी मदद मिलती है।

हमें अपनी भाषा को लेकर अति श्रेष्ठता या संकीर्णता से ग्रस्त नहीं होना चाहिए। इस में कोई दो राय नहीं कि भाषा को जानने से ही हमारे लिए साहित्य, सूचना और ज्ञान के दरवाजे खुलते हैं। हमें जितनी विदेशी भाषाओं का ज्ञान होगा उतना ही हम उन देशों और उनकी संस्कृतियों के बारे में जान सकेंगे। भाषा ज्ञान से हमारे क्षितिज का विस्तार होता है। हमें पता चलता है कि पुरातन काल से ही लोगों ने दूसरों की संकल्पनाओं और प्रौद्योगिकियों का सदुपयोग किया है और आज भी वे एक दूसरे की संस्कृति से लाभान्वित होकर अपना जीवन सार्थक बना रहे हैं। निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते हैं कि बच्चों को प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा उनकी मातृभाषा में ही दी जानी चाहिए तथा उनके बौद्धिक विकास के लिए अन्य भाषाएँ सीखी जा सकती हैं।

गुणात्मक सुधार के लिये आवश्यक है– प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी

प्रो. जोहरा अफजल

डॉ. राधा कृष्ण के अनुसार–''शिक्षा वह है जो मनुष्य को ज्ञान प्रदान करने के साथ–साथ उसके हृदय एवं आत्मा का विकास करती है।[1] इसी प्रकार नेल्सन मंडेला शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहते हैं–''शिक्षा सबसे ताकतवर हथियार है जिसे आप दुनिया बदलने के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं।[2] अतः शिक्षा ही वो माध्यम है जिससे मानव व समाज की प्रगति और विकास होता है। सन् 1837 में जर्मनी के शिक्षा शास्त्री फ्रोबेल ने ब्लेकनवर्ग नामक नगर में किंडरगार्टन स्कूल की स्थापना की जो धीरे–धीरे पूर्व–प्राथमिक स्तर पर सभी देशों में फैल गई। इस प्रकार के विद्यालय अर्थात् किंडरगार्टन स्कूल में न्यूनतम 4 वर्ष की आयु के बच्चे प्रवेश लेते हैं, जहां उन्हें सदाचार, व्यवहार और साक्षरता प्राप्त करवा कर प्राथमिक शिक्षा के लिए तैयार किया जाता है। इसके अतिरिक्त श्रीमती मार्ग्रेट मैकमिलन की शिक्षा विचारधारा पर आश्रित नर्सरी स्कूल तथा डॉ. मोरिया मोंटेसरी द्वारा स्थापित मोंटेसरी विद्यालय जैसे शिक्षा स्थान पूर्व–प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने में बहुत बड़ा उत्तरदायित्व निभाते रहे हैं। इन संस्थानों से प्राप्त की गई शिक्षा का प्रभाव बालकों पर जीवनभर रहता है। प्रारंभिक शिक्षा वह शिक्षा है जो 6 वर्ष की आयु के पश्चात् 11 या 12 वर्ष तक दी जाती है। इसे प्राइमरी एजुकेशन या एलीमेंट्री एजुकेशन अथवा बाल शिक्षा (चाइल्ड एजुकेशन) भी कहा जाता है। प्रारंभिक शिक्षा प्रायः 5 वर्षों तक चलती है। इससे पहले दी जाने वाली शिक्षा को शिशु शिक्षा तथा इसके पश्चात् प्राप्त की जाने वाली शिक्षा माध्यमिक शिक्षा कहलाती है।

प्राथमिक शिक्षा, शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण भाग है क्योंकि यहीं शिक्षा आगे की शिक्षा का आधार बनती है। प्राथमिक शिक्षा गुणवत्तापूर्ण अर्थात् ऐसी शिक्षा होनी चाहिए जो बच्चों को रटंत से दूर ले जाकर अवधारणाओं की समझ दिलवा सके तथा उनके तार्किक समझ के विकास के साथ–साथ उन्हें स्वावलंबी बनाने में सहायक सिद्ध हो। आज प्राथमिक शिक्षा के लिए देश में नई जागृति दिखाई दे रही है। इसका आरंभ 1988 में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के साथ हुआ जिससे प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ तथा इस शिक्षा को आन्दोलन का रूप 10वीं पंचवर्षीय योजना में दिया गया। इस मिशन ने पूरे देश को एक सूत्र में बांधा, जिसके परिणामस्वरूप ''1999 में जो साक्षरता दर 52.29 प्रतिशत थी वह 2001 में 64.84 प्रतिशत तक पहुंच गई।[3] यही दर ''2011 में बढ़कर 74.04 प्रतिशत हो गई।''[4]

शिक्षा को लेकर एक विषय पर सदा बहस होती रहती है कि प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में दी जाए या अंग्रेजी भाषा में। मुख्यतः प्रारंभिक और माध्यमिक स्तर पर मध्यवर्ग का एक बड़ा वर्ग अपने बच्चों को अंग्रेजी में शिक्षा दिलाने के पक्ष में है, इसलिए वे अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों की अपेक्षा प्राइवेट स्कूलों में भेजना

अधिक पसंद करते हैं। यह बात सिद्ध हो चुकी है कि यदि मातृभाषा में शिक्षा दी जाए तो बच्चों का विकास अधिक प्रभावशाली रूप में हो सकता है, क्योंकि इस भाषा द्वारा बच्चा किसी भी विषय को सरलता से समझ कर अपने विचारों को प्रभावपूर्ण ढंग से अभिव्यक्त कर सकता है। जैसे वर्तमान समय में विद्यालयों में प्रथम कक्षा से ही हिंदी का अध्ययन करवाया जा रहा है, जिससे बच्चों को सहजता से हिंदी भाषा का ज्ञान होता जा रहा है।

प्राथमिक स्तर पर हिंदी शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार है।

1. छात्र–छात्राओं को अक्षरों का ज्ञान देना, उच्चारण में शुद्धता लाना और इस योग्य बनाना कि वे अपने स्तर की भाषा में सही प्रकार से वार्तालाप कर सकें।
2. उन्हें सस्वर वाचन के लिए तैयार करना।
3. उन्हें इस योग्य बनाना कि वे पाठ्य–पुस्तक की विषय वस्तु का मौन पाठ करके समझ सकें।
4. छात्र–छात्राओं को इस योग्य बनाना कि वे अपने शब्द भंडार में वृद्धि करें और उन शब्दों को व्यावहारिक जीवन में सक्रिय रूप से प्रयोग कर सकें।
5. उन्हें इस योग्य बनाना कि वे क्रमबद्धता से अपनी बात को कह सकें।
6. छात्रों को स्वतंत्र अध्ययन हेतु प्रेरित करना।
7. छात्रों की भाषा संबंधी रूचियों को विकसित करने के लिए अवसर प्रदान करना, आदि।

हिंदी शिक्षण को लेकर आज भी हमारे समक्ष कई समस्याएं बनी हुई हैं, जिनमें से एक है वर्तमान समय में हिंदी की अपेक्षा अंग्रेजी भाषा को अधिक प्राथमिकता देना; जिसके चलते अभिभावक तथा बच्चे हिंदी के स्थान पर अंग्रेजी को अधिक पंसद करते हैं। इसके अतिरिक्त हिंदी के प्रति लोगों में अभिरूचि का अभाव उचित पाठ्यचर्या एवं पाठ्य पुस्तकों, उचित शिक्षण प्रणाली व प्रशिक्षित अध्यापकों का अभाव, हिंदी व्याकरण की जटिलता आदि हिंदी शिक्षण की समस्याओं के रूप में विद्यमान हैं।

हमारे देश में शिक्षा प्रदान करने का दायित्व राज्यों पर है, जिसके चलते प्रत्येक राज्य को शिक्षा से संबंधित चुनौतियों को अपने ढंग से हल करना पड़ता है। कई राज्यों में गरीब जनता की शिक्षा पर जोर दिया गया, जिसके फलस्वरूप बच्चों को एक समय का भोजन, यूनिफार्म तथा पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध करवाई गईं। केरल जैसे राज्य ने स्कूलों को सर्वव्यापी बनाने का प्रयास किया। राज्य अपने विधानसभा में शिक्षा को निशुल्क तथा आवश्यक बनाने संबंधी संशोधन लाया और शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने हेतु कई संगठनों और अभिभावकों को अपने इस अभियान का हिस्सा बनाया। वहीं मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में विशेषतः कुछ गांवों में जातिगत भेद–भाव के कारण स्कूलों को पिछड़े और उच्च वर्ग में विभाजित कर दिया गया है। इसके परिणामस्वरूप इन राज्यों के कुछ गांव ऐसे हैं जहां एक भी स्कूल नहीं है। इस प्रकार राजस्थान, बिहार, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश जैसे प्रांतों में तो सरकारी स्कूलों की स्थिति यह है कि इन स्कूलों में शिक्षक या तो पढ़ाने ही नहीं आते हैं और यदि आते भी हैं तो मन लगाकर नहीं पढ़ाते। स्कूलों की ऐसी ही दयनीय दशा को देखते हुए इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने आदेश दिया था कि ''सभी सरकारी अधिकारियों, निर्वाचित

प्रतिनिधियों और न्यायिक कार्य से जुड़े अधिकारियों के लिए यह अनिवार्य कर दिया जाए कि वे अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए सरकारी प्राथमिक स्कूलों में भेजें। अगर वे ऐसा नहीं करते हैं तो उनके वेतन से निजी कान्वेंट स्कूल की फीस के बराबर धनराशि काट ली जाए और उसे सरकारी स्कूलों की दशा सुधारने में खर्च किया जाए।"[5]

वर्तमान समय में प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने हेतु देश जागृत हो चुका है। कई सत्रों पर असमानताएँ दूर हो रही हैं। भारतीय संविधान के अनुसार चौदह वर्ष की आयु तक के प्रत्येक बच्चे के लिए अनिवार्य और निशुल्क शिक्षा देने की व्यवस्था की गई है। इस दिशा में 2002 में 86वां संविधान संशोधन अधिनियम पारित किया गया, जिससे देश के हर बच्चे को मूलभूत शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त हुआ। इससे शिक्षा के प्रति एक ओर लोगों में नई चेतना जगी वहीं दूसरी ओर राज्यों पर बच्चों को शिक्षा देना अनिवार्य हो गया। प्रारंभिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने हेतु कई सरकारी, गैर सरकारी तथा अर्ध सरकारी योजनाएं भी कार्यरत हैं, जिसके फलस्वरूप वो गाँव जहाँ कोई भी विद्यालय नहीं था या कुछ ही शिक्षित लोग थे वहां पर विद्यालयों की स्थापना की गई और लोगों को शिक्षा का महत्व व अनिवार्यता समझाते हुए शिक्षा के प्रति जागृत किया गया।

आज के समय में साक्षरता दर बढ़ रही है। शिक्षा के विकास के लिए सरकार भी पूर्ण प्रयास कर रही है, केवल आवश्यकता है शिक्षा में गुणात्मक सुधार लाने की जिसमें सबसे पहले आवश्यकता है पर्याप्त शिक्षकों की। ऐसे शिक्षक जिन्हें शिक्षण कार्य के प्रति आंतरिक लगाव हो न कि वो केवल बेरोजगारी से तंग आकर इस क्षेत्र में प्रवेश करें। इसके अतिरिक्त पाठ्य पुस्तकों को व्यावहारिक बनाते हुए ऐसी शैली में गढ़े जाना जो बच्चों को कुछ करने के अवसर प्रदान करे, विषयों की प्रकृति के अनुसार तैयार किया जाना, विद्यालय में पुस्तकालय की उपलब्धता, विद्यालय में विषयों से संबंधित शिक्षकों की व्यवस्था आदि। शिक्षा की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए शिक्षक–शिक्षा को बेहतर बनाना आवश्यक है। यह एक लंबी, कठिन और चुनौतीपूर्ण प्रक्रिया है किन्तु यदि प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में ठोस कार्य योजना बनाई जाए तो देश के प्रत्येक बच्चे को साक्षर बनाया जा सकता है।

सन्दर्भ :

1. मन्नान मुजतबा शिक्षा : प्राथमिक शिक्षा की चुनौतियाँ अपनी माटी, वर्ष–2, अंक–2, जनवरी 11, 2006 www.apnimaati.com>blog-post 12
2. वही
3. प्रियदर्शन एस. – प्राथमिक शिक्षा और सरकारी कार्य योजना पर निबंध www.essayinhindi.com/education/primary-education/प्राथमिक–शिक्षा–और–सरकार
4. "प्राथमिक शिक्षा की चुनौतियाँ" जनसत्ता, 8 दिसम्बर, 2015 https.//www.jansata.com/politics/challenges-of-primary-education/
5. वही

अध्यक्ष, हिंदी विभाग

कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर, कश्मीर

भारतीय संस्कृति की संवाहिका है हिंदी

प्रो. नरेश मिश्र

भाषा भावाभिव्यक्ति का साधन है, तो शिक्षा नीति देश और समाज की प्रगति की दिशा निर्धारित करती है। शिक्षा–नीति की अनुकूलता मात्र शैक्षिक परिवेश को गति ही नहीं देती वरन् जीवन मूल्यों, राष्ट्रीयता, मौलिक चिंतन के साथ विकास के विविध मार्ग प्रशस्त करती है। हिंदी को भारतीय संविधान में राजभाषा का गरिमामय पद प्राप्त है। व्यावहारिक रूप में हिंदी देश की मातृभाषा, जनभाषा, संपर्क भाषा, माध्यम भाषा और संचार भाषा भी है। हिंदी के इन महिमा मंडित विविध रूपों में इसका महत्व सामने आता है। इसके आधार पर कहा जाता है – "हिंदी भारतीय संस्कृति की संवाहिका है।"

यदि बालक अपने राष्ट्र के भविष्य का निर्माता है, तो प्रारंभिक शिक्षा उनमें ज्ञान शक्ति, और प्राण शक्ति संचार करने वाली परम आधारभूमि है। यह स्पष्ट तथ्य है कि सुदृढ़ नींव पर भव्य भवन की कल्पना साकार हो सकती है। बालक सहज रूप में अपने माता–पिता और परिजनों से व्यवहारार्थ भाषा सीख लेता है। इसी आधार पर ऐसी भाषा को मातृभाषा की संज्ञा दी जाती है। यह भी निर्विवाद सत्य है कि सहज रूप में प्राप्त मातृभाषा के ज्ञान में स्थायित्व की प्रबलता होती है। यदि प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में दी जाए, तो बालक में भावों की बोधगम्यता और अभिव्यक्ति की गंभीरता कहीं अधिक होगी। इस प्रकार सबल और सुंदर भाषायी आधार पर उसकी ज्ञान–विज्ञान में सफलता असंदिग्ध हो जाएगी।

14 सितंबर, 1949 को भारतवर्ष के संविधान में हिंदी को राजभाषा का (Official Language) का पद मिला और अब तक भारत की लगभग दो दर्जन भाषाओं को राष्ट्रीय भाषा का स्थान मिल चुका है। ये सभी भाषाएँ भारत के किसी न किसी क्षेत्र के वासियों की मातृभाषाएं हैं। भाषा की दृष्टि से समृद्ध बहुभाषी भारतवर्ष में इन भाषाओं की उपेक्षा कर अंग्रेजी को महत्व देने का तथ्य गंभीरता से विचारणीय है। व्यावहारिकता और उपयोगिता की दृष्टि से प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में ही होनी चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के गंभीर विचारक *आचार्य श्री विद्यासागर जी* ने दिशाबोधक सूत्रात्मक विचार इस प्रकार दिया है – "प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में ही हो तथा एक संपर्क भाषा भारतीय भाषा हो। ऐसा होने से भारत की एकता मजबूत होगी।" आचार्य जी ने संपर्क भाषा के संदर्भ से भारत में सर्वाधिक लोगों द्वारा समझी और प्रयोग की जानेवाली हिंदी भाषा की ओर संकेत किया है। हिंदीतर भाषियों ने भारतीय स्वतंत्रता के राष्ट्रीय आंदोलन में जुड़ने के लिए हिंदी सीखी थी। हिंदी के माध्यम से राष्ट्रीय धारा में जुड़कर की गई उनकी भूमिका विशेष सराहनीय रही है। इस प्रकार प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी को महत्व देने का संदर्भ विशेष रूप में विचारणीय है।

वर्तमान वैज्ञानिक और तकनीकी युग में व्यावहारिक कुशलता बनाए रखने के लिए नैतिकता और भारतीय संस्कृति का समन्वय अपेक्षित है। प्रारंभिक शिक्षा में व्यवस्थित पाठ्यक्रम के साथ अनुकूल अध्ययन–अध्यापन का होना अपेक्षित है। इस दिशा में सराहनीय योजना सामने आ रही है। साहित्य का यही उद्देश्य भी है– "सहितस्य भावं साहित्यम्।" युगानुरूप बालकोपयोगी साहित्य का पाठ्यक्रम–निर्धारण उद्देश्य प्राप्ति का परिचायक है। साहित्य से रसास्वादन के साथ ज्ञानार्जन होता है, तो भाषा–व्यवस्था के लिए व्याकरण का अध्ययन कराया जाता है। वर्तमान समय में अंग्रेजी माध्यम के प्ले स्कूल, युनिवर्सल स्कूल, इंटरनेशनल स्कूल की बहुत तेज बाढ़ आई हुई है। इस प्रकार की शिक्षा से व्यवसायीकरण को जो भी दिशा मिली हो, किंतु सबसे ज्यादा क्षति हिंदी की हुई है। बच्चों को हिंदी व्याकरण नाम के लिए पढ़ाया जाता है। उनको हिंदी शुद्ध लिखना कैसे आएगा? जब स्कूल परिसर में हिंदी प्रोत्साहन के स्थान पर, हिंदी बोलने पर सजा मिलने की संभावना होती है। शिक्षा जगत के ये संदर्भ गंभीरता से विचारणीय है।

प्रारंभिक शिक्षा में बालक को हिंदी पढ़ने के लिए समय ही नहीं मिलता है। विद्यालय के हिंदी पाठ्यक्रम येनकेन प्रकारेण पूरा किए जाते हैं। अपनी मातृभाषा की अपेक्षाकर विदेशी भाषा को अपनाना भाषा–ज्ञान से वंचित होना ही है। सर्वेक्षण में यह स्थिति सर्वत्र दिखाई देती है। प्रारंभिक शिक्षा के विद्यार्थियों की अंग्रेजी व्यवस्थित करने के लिए विद्यालय के अतिरिक्त English Speaking Course भी करवाया जाता है। हिंदी पढ़ने के लिए इन बच्चों के पास समय ही नहीं बचता है। इसका परिणाम यह होता है कि प्रारंभिक विद्यालय से लेकर उच्च विद्यालय तक के विद्यार्थी अपनी हिंदी के पाठ्यक्रम की भी पुस्तक सहज रूप में त्वरा से पढ़ने में असमर्थ होते हैं।

हिंदुस्तान टाइम्स दैनिक समाचार पत्र के दिनांक 17 जनवरी, 2018 के अंक के पृष्ठ 4 पर प्रकाशित मुख्य शीर्षक "One-fourth students aged 14-16 years not able to read" का संदर्भ गंभीरता से विचारणीय है– "One fourth of the country's youngsters in the 14-16 age group cannot read their own language fluently... said survey report on rural education released on Tuesday"

यह रही प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी के पाठ्यक्रम के शिक्षण और ज्ञानार्जन की स्थिति। सच तो यह है कि विद्यार्थी को हिंदी अध्ययन का अवसर ही कहाँ मिलता है। इसके पश्चात् प्रारंभिक शिक्षा में अंग्रेजी भाषा पर विचार करना अपेक्षित है। अध्ययन–अध्यापन में अंग्रेजी तो हिंदी का समय भी ले लेती है। इसके बाद भी सरकार द्वारा प्रारंभिक शिक्षा को गति देने के लिए 'राइट टू एजुकेशन' योजना चलाने के संदर्भ का सर्वेक्षण सामने आया है, जो चौकाने वाला है।

दैनिक भास्कर के 19 जनवरी, 2018 के अंक में 'स्कूल एजुकेशन' शीर्षक से दिया गया विवरण गंभीरता से विचारणीय है। माना यह सर्वेक्षण ग्रामीण परिवेश और सरकारी विद्यालयों से संबंधित है, किंतु प्रारंभिक शिक्षा के 14 वर्ष तक के समस्त विद्यार्थियों में इनकी संख्या 70% है। इस प्रकार सर्वेक्षण आधार पर शिक्षा नीति पर पुनर्विचार अपेक्षित है। दैनिक भास्कर की रपट – "जहाँ तक शिक्षा के स्तर की बात है, तो उसके आधार पर इसमें कोई खास सुधार देखने को

नहीं मिला है। 14 वर्ष की आयु के 72.7 फीसदी छात्र दूसरी कक्षा की इंग्लिश के साधारण वाक्य ही पढ़ पाते हैं, जबकि 18 वर्ष की आयु में यह आंकड़ा बढ़कर 78.7 फीसदी हो जाता है। हालांकि 14 वर्ष के 10.9 फीसदी छात्र ऐसे भी हैं, जो सिर्फ पहली कक्षा के स्तर के वाक्य पढ़ पाते हैं, जबकि 16.4 फीसदी छात्र सिर्फ एक शब्द पढ़ने में सक्षम हैं।"

प्रारंभिक शिक्षा के भाषा शिक्षण में *जन सामान्य की मानसिकता* की भी बलवती भूमिका है। वर्तमान समय में उच्च परिवार की बात छोड़ दें, मध्यम वर्ग ही नहीं, जीने के लिए संघर्ष कर रहा वर्ग भी अपने बच्चों को अंग्रेजी पढ़ाना चाहता है। पारिवारिक, सामाजिक और ,खरीद–फरोख्त किसी भी परिवेश में बच्चों को संवाद करते अथवा भावाभिव्यक्ति करते देख सकते हैं। उसके गलत–सही अंग्रेजी बोलने पर संरक्षक खुश होकर उसे प्रोत्साहित करते हैं। प्रारंभिक शिक्षा के विद्यार्थी 'पचपन' नहीं 'फिफ्टी फाइव' और 'सत्ताईस' नहीं 'ट्वेंटी सेवेन' जानते हैं, इतना ही नहीं ये एक, दो, तीन भी नहीं जानते हैं। संरक्षक और शिक्षक बच्चों को प्रारंभ में उनकी 'नाक' स्पर्श कर 'Nose' और मुख का स्पर्श कर 'Mouth' का परिचय कराते हैं। इसी प्रकार बच्चा 'आम' और 'केला' नहीं पहचानता, किन्तु 'Mango' और 'Banana' जानता और पहचानता है। इस संदर्भ से जन सामान्य की मानसिकता पर विचार करना आवश्यक है।

भाषा–प्रेम निर्विवाद रूप से उपयोगी और सराहनीय होता है, किन्तु अपनी भाषा के स्थान पर विदेशी भाषा को बालक के कोमल मन–मस्तिष्क को बोझिल करने के लिए प्रेम करना कहाँ तक उचित है? हाँ, मनुष्य में भाषा अधिगम्यता की अनूठी शक्ति है। वह अपनी मातृभाषा के बाद एक अथवा एकाधिक भाषाओं को सीख कर प्रवीणता से प्रयोग कर सकता है। वर्तमान युग में इस दृष्टि से मातृभाषा के पश्चात् अंग्रेजी भाषा का शिक्षण निश्चय ही उपयोगी सिद्ध होगा। यह भाषा वैज्ञानिक तथ्य है कि यदि मनुष्य को अपनी मातृभाषा पर अच्छा अधिकार प्राप्त हो, तो अंग्रेजी ही नहीं किसी भी भारतीय अथवा अन्य विदेशी भाषा को सीखना सरल हो जाता है। गंभीरता से विचार करें, तो भाषा–चिंतन और ज्ञानार्जन पूर्णरूपेण अध्यात्म साधना के समान है–

एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाय।

रहिमन सीचें मूलहिं, फूलहिं फलहिं अघाय।।

इस प्रकार सत्य है कि शिक्षण योग्य अबोध बालक और प्रारंभिक शिक्षा के विद्यार्थी में अपनी मातृभाषा का सहजता और व्यवहारिकता से उसके प्रयोग में प्रवीणता आ जाने पर अन्य किसी भी भाषा के अपेक्षित ज्ञान के साथ विविध विषयों का ज्ञान सरल और सहज हो जाएगा। इसके लिए प्रारंभिक शिक्षा में अनुकूल पाठ्यक्रम और उसके अध्ययन–अध्यापन की प्रेरक मानसिकता और व्यवस्था होनी चाहिए। इससे गुरूतर अपेक्षा समाज की है। उसमें राष्ट्रीयता के संदर्भ से मातृभाषा के प्रति सम्मान का भाव जगे और अपने बच्चों की प्रगति के लिए उन्हें अपनी मातृभाषा शिक्षण हेतु अनुप्रेरक परिवेश तैयार करें।

प्रारंभिक शिक्षा का द्वितीय विचारणीय संदर्भ है – 'शिक्षण का माध्यम हिंदी'। विश्व की समस्त मातृभाषाओं के ही सामान भारत में भारतीय भाषाएँ मातृभाषा के रूप में सहजता से सीखी और प्रभावी रूप में प्रयुक्त की जाती हैं। मातृभाषा के विषय में कह सकते हैं कि यह भाषा माँ के दूध के साथ मन और मस्तिष्क में उतर जाती है। यदि सहज ग्राह्य मातृभाषा

को थोड़ा सा व्याकरणिक आधार प्रदान कर परिमार्जित कर दिया जाए, तो प्रारंभिक शिक्षा का विद्यार्थी उसके माध्यम से विविध विषयों का ज्ञान सरलता से प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार ज्ञान–विज्ञान की शिक्षा के पूर्व भाषा शिक्षण में अधिक समय और शक्ति लगाने की आवश्यकता नहीं होगी।

विदेशी भाषा को माध्यम भाषा बनाने पर प्रारंभिक शिक्षा के अपरिपक्व मस्तिष्क के विद्यार्थी को पहले उस भाषा को सीखने में पूरी शक्ति लगानी पड़ती है। इससे एक तरफ ज्ञान–विज्ञान के शिक्षण के लिए शक्ति और समय का पूरा योग संभव नहीं होता है, तो दूसरी तरफ राष्ट्र की गरिमा भारतीय संस्कृति की संवाहिका और भारत को एक सूत्र में बाँधनेवाली हिंदी उपेक्षित हो जाती है। वर्तमान प्रारंभिक शिक्षा–क्षेत्र पर दृष्टिपात करें, तो पाते हैं कि सामाजिकता और संस्कारित व्यवहार को आधार प्रदान करनेवाली भाषा विश्रिंखल हो गई है। प्रारंभिक शिक्षा के अधिकांश विद्यार्थी हिंदी भाषा के लिए समय न निकल पाने के कारण आधार ज्ञान के लिए संघर्ष कर रहे हैं और अंग्रेजी के लिए कहीं अधिक समय लगाने के बाद भी पूरक परीक्षा देने के लिए विवश हो रहे हैं।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने स्वतंत्रता पूर्व प्रारंभिक शिक्षा में मातृभाषा की अनिवार्यता को गंभीरता से अपनाने का अह्वान किया था। उनकी वाणी का तथ्य मन–मस्तिष्क को आंदोलित कर देता है। निश्चय ही उनका सपना पूरा हो जाए, तो देश प्रगति के मार्ग पर होगा।

"मातृभाषा मनुष्य के विकास के लिए उतनी ही स्वाभाविक है, जितनी छोटे बच्चों के लिए माँ का दूध और कुछ हो भी कैसे सकता है? बच्चा अपना पहला पाठ अपनी माँ से ही सीखता है। इसलिए मैं बच्चे के मानसिक विकास के लिए उन पर माँ की भाषा को छोड़कर कोई दूसरी भाषा लादना मातृभूमि के प्रति पाप समझता हूँ।"

महात्मा गाँधी ने सन् 1938 में हरिजन सेवक में हिंदी–अंग्रेजी के संदर्भ की आप बीती का अनुप्रेरक उल्लेख किया है – "हाँ! यह अब मैं जरूर देखता हूँ की जितना गणित, रेखागणित, बीजगणित, रसायन शास्त्र और ज्योतिष सीखने में मुझे चार साल लगे, अगर अंग्रेजी के बजाय गुजराती (मातृभाषा) में मैंने पढ़ा होता, तो उतना मैंने आसानी से एक साल ही में सीख लिया होता।"

हम महात्मा गाँधी की त्याग–तपस्या से प्राप्त आजादी के स्वच्छंद परिवेश के चाँद–सितारों पर विचरण करने के अभिलाषी हैं, किंतु उनका दिव्य उद्‌बोधन भूल गए हैं। वैयक्तिक और राष्ट्रीय उन्नति के लिए 9 जुलाई, 1938 को हरिजन सेवक में प्रकाशित उनके उद्घोष पर विचार करना होगा। – "शिक्षा का माध्यम तो एकदम हर हालत में बदलना चाहिए और प्रांतीय भाषाओं को उनका वाजिब स्थान मिलना चाहिए। यह जो काबिले–सज़ा बर्बादी रोज–ब–रोज हो रही है, उसके बजाय, तो अस्थाई रूप व्यवस्था हो जाना भी मैं पसंद करूँगा।"

हिंदी के *ओजस्वी कवि रामधारी सिंह 'दिनकर'* ने भारत के शिक्षा क्षेत्र में माध्यम भाषा के संदर्भ से घिरे विद्यार्थियों के विषय में अपना स्पष्ट विचार व्यक्त करते हुए शिक्षा जगत को उपयोगी निर्देश दिया है। इस पर गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है – "आज तक हमारे छात्र केवल इस चिंता से त्रस्त रहे हैं कि शुद्ध–शुद्ध अंग्रेजी लिखने की योग्यता कैसे प्राप्त

करें। भाषा की योग्यता से अलग जो ज्ञान के अनेक क्षेत्र हैं, उनके विचरण करने का अवकाश छात्रों को मिलता ही नहीं है।"

चर्चित भाषा वैज्ञानिक डॉ. भोलानाथ तिवारी ने शिक्षा में माध्यम भाषा के रूप में मातृभाषा के महत्त्व को रेखांकित करते हुए स्पष्ट किया है – "शिक्षार्थियों में स्वाभिमान, राष्ट्रीयता और संस्कार विकसित करने और साहित्य के साथ ज्ञान–विज्ञान के विविध क्षेत्रों में गतिशीलता पाने के लिए मातृभाषा को ही माध्यम भाषा के रूप में अपनाना होगा। हिंदी भारत को एक सूत्र में बांधने वाली बहुसंख्यक लोगों की मातृभाषा है। इसे शीर्ष स्थान देना गौरव का विषय होगा।"

शिक्षा के क्षेत्र की माध्यम भाषा पर लगातार विचार किया जा रहा है। कुछ उल्लेखनीय संदर्भ विचारार्थ प्रस्तुत हैं। *प्रो. गिरीश्वर मिश्र, कुलपति, महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा* का विचार 'आपका विचार चौथा स्तंभ' में प्रकाशित हुआ है। उन्होंने भारतीय शिक्षा को गति देने पर बहुपक्षीय विचार करते हुए सरकार की गतिशीलता की आशा लगाई है – "शिक्षा की योजना बनाते हुए हमें अपनी जमीनी हकीकत को टटोलते हुए अपनी सामाजिक विविधता पर गौर करना होगा। आज आदिवासी, ग्रामीण पर्वतीय, अनुसूचित और विशिष्ट आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों के लिए अपेक्षीय व्यवस्था करनी होगी। इसी तरह स्कूली स्तर पर बच्चों की स्कूली परिपक्वता, उनके पाठ्यक्रम का आकार और विषय वस्तु, भाषा की शिक्षा और माध्यम के प्रश्न पर विचार करना होगा। ऐसे ही स्कूल में प्रवेश को किसी तरह नियमित किया जाए और बच्चों को स्कूल में टिकाए रखने के लिए नीतिगत फैसले लेने होंगे। ये सारे सवाल बहुत दिनों से लंबित हैं। आशा है कि सुशासन और निष्पादन पर जोर देने वाली वर्तमान सरकार इस ओर ध्यान देगी। तभी एक सार्थक देश का सपना साकार होगा।"

इसके आगे प्रो. मिश्र ने चिंतन की अन्य दिशाओं की ओर भी संकेत किया है – "वर्तमान में देखना होगा कि प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी माध्यम या भाषायी माध्यम में प्रवेश वृद्धि किस भाषा में बढ़ रही है? अंग्रेजी, हिंदी या अन्य भारतीय भाषाओं में। हिंदी और भारतीय भाषा माध्यम से प्रवेश लेनेवाले विद्यार्थी किस वर्ग के हैं और वे कितने खुश हैं? उनके परिणाम क्या हैं? आज अपेक्षा क्या है?

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के गंभीर विचारक आचार्य श्री विद्यासागर जी ने 20 दिसंबर, 2017 को डॉ. कृष्ण स्वामी कस्तूरीरंगम, श्री निर्मल कुमार पटोदी और प्रो. टी वी कट्टीमनी आदि के सम्मुख अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किए हैं – "मैं भाषा के रूप में अंग्रेजी का विरोधी नहीं हूँ। इस भाषा को विश्व की अन्य भाषाओं के साथ ऐच्छिक रखा जाना चाहिए। शिक्षा का माध्यम मातृभाषाएं ही हों। अंग्रेज़ों ने भारत की परंपरा के साथ चालाकी करके भारत को 'इंडिया' बना दिया। जबकि भारत के दो नाम नहीं हो सकते। – भारत के साथ संस्कृति और इतिहास जुड़ा है। इंडिया ने हमारे भारत की भारतीयता, जीवन पद्धति, नैतिकता, रहन–सहन और खान–पान सब कुछ छीन लिया है। – प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषाओं में ही हो तथा एक संपर्क भाषा भारतीय भाषा हो। ऐसा होने से भारत की एकता मजबूत होगी। – शिक्षा रोजगार पैदा करनेवाली हो, बेरोजगार बढ़ानेवाली न हो। शिक्षा कोरी किताब न हो।"

माध्यम भाषा का प्रश्न न केवल भारतवर्ष के

लिए है वरन विश्व के समस्त देशों के लिए महत्वपूर्ण है। इस दृष्टि से *जापान के चर्चित विद्वान प्रो. तोमियो मिजोकामी* ने विस्तार और गंभीरता से अपने विचार व्यक्त किए हैं – "जहाँ तक शिक्षा के माध्यम का प्रश्न है, इसमें तो कोई दो राय हो ही नहीं सकती कि शिक्षा का माध्यम तो मातृभाषा, देश की भाषा ही हो सकती है। किसी भी व्यक्ति के विकास के लिए शिक्षा का माध्यम वही भाषा होनी चाहिए, जिसमें वहाँ के लोग सोचते हैं, संप्रेषण करते हैं। मौलिक चिंतन तो अपनी भाषा में ही हो सकता है। जिस भाषा को हम जानते नहीं, उसमें चिंतन कैसे कर सकते हैं? भाषा और संस्कृति का भी अभिन्न संबंध होता है। भाषा समाप्त होगी, तो संस्कृति भी समाप्त होगी। भाषा और संस्कृति को अलग नहीं किया जा सकता है।"

विज्ञान के क्षेत्र में जापान अग्रणीय देश है। प्रो. तोमियो मिजोकामी का शिक्षा में विज्ञान की माध्यम भाषा के संदर्भ का विचार विशेष रूप से रेखांकन योग्य है, क्योंकि भारत में भी विज्ञान का अध्ययन–अध्यापन प्रारंभिक शिक्षा से ही शुरू हो जाता है – "जापान में विज्ञान की पढ़ाई जापानी भाषा में होती है। भारत के अभिभावक अंग्रेजी माध्यम के लिए दौड़ते रहे हैं, यह एक खतरनाक स्थिति है। मैं महात्मा गाँधी जी की इस बात से पूरी तरह से सहमत हूँ कि यदि भारत में विज्ञान की शिक्षा हिंदी भाषा में दी जाती, तो यहाँ इतने अविष्कार होते कि अब जो दो–तीन अविष्कारों के नाम लेते हैं, उन्हें याद भी नहीं किया जाता। मुझे तो आश्चर्य इस बात का भी है कि वे लोग जो स्वयं को महात्मा गाँधी के अनुयायी मानते हैं वे भी महात्मा गाँधी की भाषा नीति को नहीं मानते। बड़ी अजीब बात है अगर भारत के लोग ऐसा सोचते हैं कि हिंदी माध्यम से विज्ञान नहीं होता या हो सकता है, तो यह गलत है। हमें अंग्रेजी भाषा में सोचकर नोबल पुरस्कार नहीं मिला। ज्ञान–विज्ञान सभी भाषाओं में संभव है। श्रेष्ठ भाषा तो वही है, जो अपनी है।"

प्रो. तोमियो मिजोकामी ने भारत में अंग्रेजी भाषा को माध्यम भाषा के रूप में अपनाना पूर्णरूप से अनुचित सिद्ध किया है – "विदेशी भाषा के रूप में अंग्रेजी सीखना उपयोगी है, लेकिन भारत में अंग्रेजी माध्यम बुरी चीज है। जहाँ आवश्यक नहीं वहाँ अंग्रेजी क्यों बोली जाए? घरों में अंग्रेजी क्यों? अपने लोगों में अंग्रेजी क्यों? अपने देश को भाषा की कीमत पर विदेशी भाषा को लाना, इसे तो कोई स्वीकार नहीं कर सकता, करना ही नहीं चाहिए।"

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने भारतीय जन मानस को उद्‌बोधित करते हुए उनमें भाषायी चेतना जगाकर देश सेवा करने का आहवान किया है। इतने ओजस्वी स्वर को यादकर हमें आज उठ खड़े होने की आवश्यकता है, जब शिक्षा जगत पर आए चक्रवात से हमारी राष्ट्रीयता और संस्कृति पर सुनामी का खतरा मंडरा रहा है। वह ओजस्वी संदेश है–

"आज की सबसे पहली और सबसे बड़ी समाज सेवा यह है कि हम अपनी देशी भाषाओं की ओर मुड़ें और हिंदी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करें। हमें अपनी सभी प्रादेशिक कार्रवाइयां अपनी–अपनी भाषाओं में चलानी चाहिए तथा हमारी राष्ट्रीय कार्रवाइयों की भाषा हिंदी होनी चाहिए। जब तक हमारे स्कूल और कालेज विभिन्न देशी भाषाओं में शिक्षा देना आरंभ नहीं करते, तब तक हमें आराम लेने का अधिकार नहीं है।"

भारत सरकार हिंदी शिक्षण और प्रशिक्षण के संदर्भ में गंभीरता से विचार कर रही है। भारतीय

भाषाओं को साथ लेकर हिंदी को अनुकूल दिशा प्रदान करने और उसे माध्यम भाषा की मानव संसाधन मंत्रालय की योजना रेखांकन योग्य है। इसके माध्यम से *'हिंदी का भारतीय भाषाओं से अंतः संबंध'* पर अध्ययन–शोध से भारतीय भाषाओं को साथ–साथ विकसित होने का अवसर मिलेगा। प्रारंभिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालय की शिक्षा तक हिंदी को माध्यम भाषा के रूप में प्रयोग की योजनाएं चल रहीं हैं, किंतु इनकी दशा और दिशा पर विचार करना आवश्यक है।

राष्ट्र–निर्माता, जन–नायकों और विद्वानों के अनुप्रेरक विचारों के साथ सरकार की उपयोगी योजनाओं के बाद भी प्रारंभिक शिक्षा में अनुकूलन के स्थान पर बढ़ती विषमता मन–मस्तिष्क को झकझोरने वाली हो गई है। अंग्रेजी स्कूल महानगर से नगर और नगर से गांवों में अपना जाल बिछा चुके हैं। इसके कारण और निवारण पर विचार करने की आवश्यकता है। सरकारी निर्णय और वर्तमान परिणाम चौकाने वाले हैं – दिल्ली सरकार के द्वारा अगले सत्र से नगर निगम के सभी सरकारी स्कूलों को अंग्रेजी माध्यम में बदलने की संभावना है। पश्चिम बंगाल में बंगला और हिंदी माध्यम के लगभग 70% प्रारंभिक विद्यालय अंग्रेजी माध्यम में बदल चुके हैं। उत्तराखंड सरकार द्वारा सरकारी प्रारंभिक विद्यालयों को अंग्रेजी माध्यम में बदलने का निर्णय लिया जा चुका है। उत्तर प्रदेश का शिक्षा विभाग प्रदेश के सभी ब्लाक के पांच प्रारंभिक विद्यालयों का चयन कर अंग्रेजी माध्यम में बदलने के लिए कटिबद्ध दिखाई देता है। 'क' वर्ग के हिंदी प्रांत उत्तर प्रदेश के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में लाखों विद्यार्थी हिंदी में फेल हो गए हैं। अन्य प्रदेशों की स्थिति भी ऐसी ही है।

इस प्रकार स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि हम महान चिंतकों के पथ–प्रदर्शक चिंतन के अनुसार माता के ही समान मातृभाषा को सम्मान दें और अपनी शक्ति का सदुपयोग करें। बालक ही राष्ट्र के भविष्य के कर्णधार हैं। शिक्षा ही जीवन को शक्ति, दिशा और गति प्रदान कर सफलता प्रदान करने वाला परमाधार है। मातृभाषा सहज रूप में प्राप्त जीवन भर ज्ञानार्जन कराते रहने वाली शक्ति है। प्रारंभिक शिक्षा में मातृभाषा को समुचित स्थान देते हुए उसे माध्यम भाषा के रूप में अपनाना होगा। इससे बालक की अंतःशक्ति के सदुपयोग से शिक्षण–प्रशिक्षण में सतत सफलता अवश्यम्भावी हो जाएगी। हाँ भारत के संविधान में राजभाषा हिंदी के साथ लभगभ दो दर्जन भारतीय भाषाओं को राष्ट्रीय भाषा का स्थान प्राप्त है। प्रारंभिक शिक्षा में भारत की समस्त मातृभाषाओं को स्थान देते हुए उन्हें माध्यम भाषा के रूप में अपनाना श्रेयस्कर होगा। हिंदी भारत को एक सूत्र में बॉधने वाली भाषा है। भारत की समस्त भाषाओं के साथ इसका भी अध्ययन किसी न किसी रूप में प्रारंभिक कक्षाओं से शुरू होना चाहिए। भारतीय संस्कृति की संवाहिका हिंदी के प्रति जन सामान्य के मन में आदर होना चाहिए और इसका प्रयोग गर्व से करना चाहिए। सरकार को गुरूतर दायित्व निर्वहन करते हुए प्रारंभिक शिक्षा में मातृभाषा को माध्यम भाषा का स्थान दिलाने की सुव्यवस्थित योजना बनाकर कार्यान्वयन करना चाहिए। इसके साथ एक लंबे समय की प्रतीक्षा है, 'संविधान में हिंदी को राष्ट्रभाषा का स्थान मिले।' इसे पूराकर सरकार भारतीयों को उपहार दे और जन मानस को आनंदित करे।

960, सेक्टर–1, रोहतक,
हरियाणा–124001

प्रारंभिक शिक्षा में महत्वपूर्ण है हिंदी की भूमिका

—प्रो० सत्यदेव मिश्र

उक्त शीर्षक के प्रायः दो अर्थ समझे जा सकते हैं – प्रथम प्राइमरी से हायर सैकेंड्री तक हिंदी शिक्षा अनिवार्य हो – द्वितीय प्राइमरी लेवल से ही हमारे सभी ज्ञान का माध्यम हिंदी भाषा ही हो। इस संबंध में यह बात स्पष्ट की जा सकती है कि भारतवर्ष के हिंदी स्टेट्स में प्रायः राजकीय विद्यालयों में हिंदी माध्यम से ही शिक्षा दी जाती है। किन्तु इन्हीं राज्यों में और प्रायः भारत के प्रत्येक राज्य में जो मिशनरी स्कूल अथवा जो गुणवत्ता में बेहतर समझे जाने वाले विद्यालय या महाविद्यालय है वहाँ शिक्षा का माध्यम हिंदी नहीं अंग्रेजी बना हुआ है। इस चुनौती का सामना हिंदी को करना है।

विभिन्न मासिक सर्वेक्षणों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि वर्तमान में हिंदी विश्व की प्रमुख भाषाओं में है किन्तु खेद का विषय यह भी है कि हिंदी को स्वदेश में ही उसका स्थान नहीं मिल पाया है जो संविधान निर्माताओं ने सोचा था और हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया था। यद्यपि यह बात सत्य है कि हिंदी ने अपनी भक्ति–श्रृंगार–कला की मूल प्रवृत्ति के अतिरिक्त विश्व के आधुनिक सामाजिक विमर्शों–स्त्री, दलित, आदिवासी, प्रवासी–अप्रवासी, हिंदीतर भाषियों की संवेदनाओं को स्पर्श दिया है किन्तु यह बात भी सही है कि अंग्रेजी की अपेक्षा नवीन ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में हिंदी को अभी कठोर श्रम करके उपादेयता सिद्ध करना है। यही संकट है कि हमारे हिंदी प्रान्तों और हिंदीतर प्रान्तों में प्रारंभिक शिक्षा में भी अंग्रेजी का वर्चस्व बरकरार है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि हिंदी भाषा और साहित्य ने उतरोतर विकास के लिए युगानुकूल सम्भावनाओं को आत्मसात किया है। मीडिया, कार्यालय, बाजार और तकनीक की आवश्यकतानुसार अपना प्रयोजन परक स्वरूप विकसित किया है। भाषा के क्षेत्र में भी हिंदी ने तत्सम प्रवृत्ति का परित्याग कर युगानुकूल विकसित, समेकित संस्कृति के अनुरूप, हिंदीतर एवं भारतेतर शब्दावली को भी प्रश्रय दिया है। इसी प्रवृत्ति का परिणाम है कि मुम्बईया हिंदी, हैदराबादी हिंदी, कलकतिया हिंदी, तमिलिया हिंदी, सरनामी हिंदी, फिज़ी हिंदी, अमेरिकन हिंदी–अंग्रेजी रूप चर्चा में आ रहे हैं। ये हिंदी भाषा के विकास के परिचालक हैं। यही नहीं कम्प्यूटर की विभिन्न विधाओं तथा बाजार की सहभागिता के कारण शब्दावली आयोग की शुद्ध पारिभाषिकी के स्थान पर आम प्रचलन में प्रभावी परिभाषिकी शब्दावली हिंदी वाक्य विन्सास में समेकित हुई हैं। हिंदी की संरचनात्मक जटिलताएं कम हो रही हैं। ये मुद्दा भी हिंदी की प्रारंभिक शिक्षा की चुनौतियों से जुड़ा हुआ है। कुल मिलाकर विश्व के बदलते परिदृश्य के अनुरूप हिंदी ने अपने क्षेत्र, रूप–स्वरूप, अपनी संवेदना के साथ अपने प्रयोजन मूलक चरित्र को बहुत विकसित किया है ताकि वह चुनौतियों और विशेष रूप से अंग्रेजी की स्पर्धा में खड़ी हो सके।

औपचारिक शिक्षण–प्रशिक्षण हिंदीतर प्रान्तों

में भारत सरकार की सहायता से निरंतर जारी है। वस्तुतः हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के मूल में संस्कृत भाषा ही रही है। अतः आर्य भाषा परिवार की भाषाएं तथा द्रविड़ भाषा परिवार की भाषाओं में कोई वैमनस्य नहीं वरन् अपनत्व का भाव है। यही कारण है कि हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में हिंदीतर प्रान्तों की ऐतिहासिक भूमिका रही है। हिंदीतर प्रान्तों के हिंदी रचनाकारों ने यह साबित कर दिया है कि हिंदी जोड़ने वाली भाषा है। हमारी सामासिक संस्कृति के पल्लवन एवं संवर्धन में हिंदी भावात्मक एकता को पुष्ट करने वाली भाषा है। डॉ० चन्दशेखर नायर का मत है स्वातंत्रकाल में इन दक्षिणी प्रदेशों में हिंदीतर साहित्य अबाध गति से प्रणीत हुआ तथा कई दृष्टियों से उसमें सादृश्य भी दर्शित होता है।

भक्ति साहित्य की धारा वास्तव में तमिलनाडु की देन है। "भक्ति द्रविड़ उपजी लायौरामानंद" कथन से सभी परिचित है। चौथी से सातवीं शती तक प्रवाहित होने वाली शैव–वैष्णवों की लहर कर्नाटक, महाराष्ट्र और गुजरात के रास्ते हिंदी के वृहत प्रदेश में पहुंची। यही नहीं पुनः जागरण का बिगुल भारतेन्दु जी उत्तर भारत में बजा रहे थे तो सुब्रहमण्यम भारती देशभक्ति के गीतों से तमिलनाडु को आंदोलित कर रहे थे। इस एकतामयी वस्तु स्थिति के होते हुए भी हिंदी अभी तक प्रारंभिक शिखा में पूरी तरह प्रवेश क्यों नहीं कर सकी? उसकी क्या चुनौतियां हैं? क्या समाधान होने चाहिए। राजभाषा के संदर्भ में हिंदी से क्या अपेक्षाएं हैं?

प्रारंभिक शिक्षा से पहले हिंदी साथर्क भाषा के रूप में विकसित होनी चाहिए। इस दृष्टि से विचार करने में हिंदी प्रचार–प्रसार की क्या स्थिति है? इस पर ध्यान देना होगा। महात्मा गांधी ने भारत में स्वतंत्रता का आन्दोलन प्रारंभ किया तो उनका सबसे पहले भावात्मक एकता की ओर ध्यान गया और उन्होंने देखा कि हिंदी देश के अधिकांश हिस्सों में बोली समझी जाती है, मात्र दक्षिण में हिंदी का प्रचलन कम है। अतः उन्होंने दक्षिण में हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए एक सभा की स्थापना की। सभा का पहले प्रचारक उनके सुपुत्र देवदास गांधी बने जिन्होंने श्रीमती एनीबेसेन्ट के साथ मिलकर हिंदी के प्रचार का कार्य किया। कलांतर में सभा ने दक्षिण के चारों प्रांतों में शाखाएं खोलीं।

केरल में तीर्थस्थलों के कारण हिंदी काफी प्रचलित है। यद्यपि साहित्यिक दृष्टि से हिंदी का प्रयोग त्रावणकोर के महाराज राजवर्या स्वाति तिरूनाल से हुआ। उन्होंने भक्तिमूलक पदों की (लगभग 40 पदों की रचना ब्रजभाषा और खड़ी बोली के मिश्रित रूप में) रचना की। 1922 में केरलीय विद्वान एम. दामोदरन उण्णि के. केशवन अय्यर, के. आर. शंकरानंद ने केरल में हिंदी प्रचार को गति दी। 1922 में ही कोचीन रियासत के स्कूलों में हिंदी को अनिवार्य कर दिया गया। कोचीन में हिंदी अध्यापन के लिए आर. शंकरानंद, के.वी. नायर, जी. नीलकंठन नायर, के.जी.पणिपकर के नाम उल्लेखनीय हैं।

1918 में इंदौर हिंदी साहित्य सम्मेलन में गांधी जी ने अध्यक्षीय आसन से घोषणा की 'हिंदी ही देश की सम्पर्क भाषा होगी और उसी को राष्ट्रभाषा माना जाए।' 1927 में प्रथम अखिल कर्नाटक हिंदी प्रचारक सम्मेलन केरल का स्वतंत्र स्वरूप बना उसे "दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा" का नाम दिया गया और गांधीजी को उस सभा का आजीवन अध्यक्ष घोषित किया गया। उसके अतिरिक्त भाषा संगम" "भाषा समन्वय वेदी", केरल हिंदी साहित्य अकादमी", "केरल हिंदी प्रचार सभा" – त्रिवेंद्रम हिंदी विद्यापीठ, त्रिवेंद्रम, गांधी स्मारक हिंदी प्रचारक, सभी मण्डप आदि प्रमुख है।

तमिलनाडु में हिंदी प्रचार के लिए दक्षिण भारत प्रचार सभा का उच्च शिक्षा केन्द्र अविनाश लिंगम महिला विश्वविद्यालय, कोयमबटूर, लयोला कालेज, डी.जी. वैष्णव कॉलेज स्टेला मारिज कालेज, विवेकानंद कालेज आदि प्रमुख संस्थाएं हैं। यहाँ की हिंदी प्रचार सभा में प्रारंभिक स्तर पर प्राथमिक, माध्यम और राष्ट्रभाषा के तीन पाठ्यक्रम चलाए जाते हैं। उच्चस्तर पर तीन पाठ्यक्रम प्रवेशिका, किशारद ओर प्रवीण चलाये जाते थे जिन्हें भारत सरकार ने क्रमशः मैट्रिक, इन्टर और बी. ए. की मान्यता दी है। इनके अतिरिक्त प्रयोजन मूलक हिंदी के पाठ्यक्रम भी प्रारंभ किये गये। तमिलनाडु के 19 विश्वविद्यालयों में से केवल तीन में हिंदी विभाग है। तमिलनाडु हिंदी अकादमी निजी प्रयासों से स्थापित संस्था है। बाल शैरी रेड्डी इसके अध्यक्ष हैं।

आज दक्षिण भारत प्रचार सभा की चारों प्रान्तीय शाखाओं में चैन्ने, हैदराबाद, एरणाकुलम तथा धारवाड़ में सभा के लगभग 7200 प्रारंभिक प्रचारक सक्रिय रूप से कार्यरत हैं। साथ ही इन सभाओं अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए बी.एड. पाठ्यक्रम का संचालन, अनुवाद पत्रकारिता जैसे प्रयोजन मूलक क्षेत्रों में स्नातकोत्तर डिप्लोमा, दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम से बी. ए., एम.ए., एम.बी.ए. आदि पाठ्यक्रम सभा के निरंतर बढ़ते कार्यकलापों के परिचायक हैं।

साहित्य–सृजन, पत्रकारिता, काव्य–साहित्य, नाट्य साहित्य, पत्रकारिता, अनुवाद, आलोचना आदि हिंदी की सभी विधाओं में दक्षिण भारत के उक्त चारों राज्यों में प्रगति हुई है। परन्तु इतनी शिक्षा महासमुद्र में चंचु प्रवेश के समान ही हैं। अभी राजभाषा प्राथमिक स्तर पर अनिवार्य बनाने का बड़ा काम बाकी है। प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी की उपस्थिति चुनौतियों से भरी है, उसका प्रमुख कारण अंग्रेजी का वर्चस्व है। अभी भी हमारे देश में अंग्रेजी के अच्छे जानकारों का महत्व अधिक है क्योंकि अंग्रेजी की शिक्षा रोज़ी–रोटी से जुड़ी है।

वर्तमान में हिंदी अन्य प्रान्तों में पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात आदि में पर्याप्त विकसित हो रही है। पश्चिम बंगाल विशेष रूप से कोलकाता तथा महाराष्ट्र विशेष रूप से मुम्बई आदि शहरों में सम्पर्क भाषा के रूप में हिंदी उसी तरह चल रही है जैसे हिंदी के गढ़ उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा आदि स्टेट्स में। उक्त स्टेट्स में हिंदी अध्ययन, अध्यापन की पूरी व्यवस्था है। प्रायः प्रत्येक विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग स्थापित हैं। लेकिन प्रारंभिक शिक्षा में अंग्रेजी वहां भी हावी है। कुल मिलाकर परिदृश्य में बदलाव नहीं आया है। आज भी हिंदी राज्य हो अथवा हिंदीतर राज्य सभी भी उच्च स्तरीय शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी बना हुआ है। गुणवत्तामूलक शिक्षा मिशनरी स्कूलों में और अब शिक्षा का व्यवसायीकरण होने के कारण प्राईवेट स्कूलों में भी अंग्रेजी को ही महत्व मिल रहा है। हिंदी का माध्यम या तो राजकीय विद्यालयों में है अथवा निम्न स्तरीय प्राईवेट स्कूलों में। प्रश्न यह उठता है कि ऐसा क्यों है?

कारण स्पष्ट है कि भारतवर्ष का शासन–प्रशासन अंग्रेजी में चलता है। हम अब तक यह तय नहीं कर पा रहे हैं कि किसी दिन या तारीख को हम दृढ़ निश्चय लेंगे कि आज के बाद हम कोई काम अंग्रेजी माध्यम से न करेंगे। ऐसा सुनहरा दिन ही हिंदी को प्रारंभिक शिक्षा में सही प्रवेश की अनुमति देगा। यह कोई अजूबा नहीं होगा। विश्व का इतिहास गवाह है कि ऐसा ही निर्णय पश्चिम देशों ने लिया और अपनी भाषा में सारा काम समेट लिया। रूस, चीन आदि इसके उदाहरण हैं। उन्होंने व्यापार को इस स्तर तक विकसित किया कि उनके ज्ञान–विज्ञान, प्रौद्यागिकी इंजीनियरिंग,

मेडिकल साइंसेज, इतिहास, भूगोल, कला, स्पेश साइंस आदि सभी अनुशासन उनकी अपनी भाषा में लिखे–पढ़े जाते हैं। उच्च स्तरीय शोधकार्य भी स्वभाषा में होता है।

इस स्थिति तक पहुँचने के लिए हमें भी कुछ करना होगा। हमें हिंदी को इतना विकसित करना होगा कि अनुवाद से हमारा पल्ला छूटे। हम स्वभाषा में सोचें, शोधकार्य करें। हमें देखना है कि हिंदी को कितना सक्षम बनाना है। इसे कानून व्यवस्था, आर्युविज्ञान, विज्ञान, रसायन विज्ञान, कम्प्यूटर, इंजीनियरी और प्रौद्योगिकी ज्ञान–विज्ञान की अन्य सभी शाखाएं हिंदी माध्यम से ही विकसित हों। हमारे छात्र–छात्राएं हिंदी में ही सोचें ओर मौलिक लेखन–शोध का काम करें।

इस स्थिति को स्पर्श देने के लिए हमें प्रारंभिक स्तर से अखिल भारतीय स्तर पर हिंदी स्कूलों में अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाई जानी होगी। यह प्रबंध थोड़ा कड़वा तो होगा लेकिन कड़वी औषधि के बिना अंग्रेजी नामक रोग का कोई उपचार नहीं। हमें खुले मन से विचार करना होगा कि हम अब भी गुलामी की जंजीर में बंधे रहें या अंग्रेजी से मुक्ति पायें और देश के ज्ञान विज्ञान को स्वभाषा में विकसित करें।

इस महान कार्य को सत्यापित करने में हमें प्रशासनिक स्तर पर भी कड़े कदम उठाने होंगे। हमें देखना होगा कि कोई भी सरकारी अर्धसरकारी सहायता प्राप्त अथवा प्राईवेट कंपनी ऐसी न हो जहाँ कि कार्यपद्धति हिंदी को नजरअंदाज कर सके। प्रतियोगी परीक्षाओं में हिंदी अनिवार्य विषय के रूप में स्वीकार करने की हमारी विवशता जब तक न होगी तब तक हम कितना भी हिंदी को बढ़ावा दें स्थिति में बदलाव की गुंजाईश कम ही होगी।

उक्त व्यवस्था जब लागू हो जाएगी, तब हिंदी के प्रारंभिक स्तर पर उसके अध्ययन–अध्यापन का स्तर निश्चित ही सुधरेगा। हिंदी की प्राथमिक शिक्षा की चुनौतियां स्वयं समाप्त हो जाएंगी। हमारी चुनौती सुदृढ मानसिकता की है।

अंग्रेजी रहेगी किंतु उसी रूप में जैसी रूस या चीन में रही है। अंग्रेजी से हमारा वैमनस्य नहीं है। अंग्रेजी आज विश्व भाषा है। उससे हिंदी की प्रतिस्पर्धा है, वैमनस्य नहीं। हमारी तो संस्कृति ही हमें सिखाती है – "आनो भद्रा क्रतवो यन्तु विश्वतः" (Let noble thoughts come to us from every side)

वर्तमान में करना यह होगा कि प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी की सुव्यवस्था हम करें। यह कार्य हमें सुदृढ़ निश्चय द्वारा करना होगा। यह काम जोखिम भरा होगा क्योंकि दक्षिण भारत के राज्य इसे सहज स्वीकार न करेंगे। श्री राजगोपालचारी जी जब भारत के आखरी गवर्नर जनरल (थोड़े समय के लिए जब अंग्रेज भारत छोड़ रहे थे) थे तो उन्होंने हिंदी की वकालत करते हुए कहा था कि भारत की एकता की कड़ी है हिंदी। अखिल भारतीय स्तर पर हिंदी सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकृत है। कहीं कोई अवरोध नहीं है। ऐसी स्थिति में राजभाषा द्वारा ही प्राथमिक स्तर पर अनिवार्य बनाना हिंदी का पठन–पाठन सुनिश्चित करना चाहिए तथा प्रतियोगी परीक्षाओं में हिंदी प्रश्न–पत्र अनिवार्य होना चाहिए। प्रारंभिक शिक्षा का पाठ्यक्रम भी कुछ ऐसा होना चाहिए जहाँ भाषा ज्ञान के साथ अंग्रेजी परिभाषिकों और अनुवाद आदि की व्यवस्था हो ताकि प्रारंभिक शिक्षा के उपरान्त विद्यार्थी विज्ञान के विषयों की ओर आकर्षित हो सके।

4/303, दीपक सहारा स्टेट्
जानकीपुरम, लखनऊ–226021

प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी – संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ

प्रो० आरिफ़ नज़ीर

श्रीमद्भगवद्गीता में कहा है **'नहिं ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।'** अर्थात इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला निःसंदेह कुछ भी नहीं है।[1] महाभारत के एक श्लोक में कहा गया है कि पृथ्वी पर मनुष्य से बढ़कर कुछ भी नहीं है। 'न मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्।' मनुष्य को 'अशरफुल मख़्लूकात्' अर्थात् सर्वश्रेष्ठ प्राणी बनाने में भाषा का महत्वपूर्ण योदान है। अन्य प्राणी भाषा के क्षेत्र में मनुष्य से बहुत पीछे हैं। आचार्य दण्डी ने भाषा का महत्व बताते हुए कहा है कि यह त्रिभुवन सम्पूर्ण अंधकार में निमग्न हो जाता यदि सृष्टि के आरम्भ से संसार में शब्द (भाषा) का प्रकाश न होता।

इदमन्धंतमः कृतस्नं जायेत भुवनत्रयम्।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।।
(काव्यादर्श, 1/41)

हिंदी भारत की राजभाषा तथा करोड़ों की मातृभाषा है। करोड़ों व्यक्ति हिंदी समझते, बोलते, पढ़ते तथा लिखते हैं। करोड़ों आदमी हिंदी में कार्य करते हैं। भारत की लगभग 130 करोड़ में से अधिकांश जनता हिंदी समझती है। देश की बहुत सी जनता से हिंदी द्वारा सम्पर्क किया जा सकता है। हिंदी द्वारा भारतीय संस्कृति एवं साहित्य का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। डॉ० भोला नाथ तिवारी का कथन है –"हिंदी राजस्थान, हरियाणा, मध्यप्रदेश, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, उत्तर प्रदेश तथा बिहार की सामान्य भाषा और राजभाषा तो है ही, पूरे भारत की भी घोषित राजभाषा है। शिक्षा का माध्यम, राजकाज, आदि के अतिरिक्त राज्य के स्तर पर भी अपनी भाषा के रूप में भारत इसी का प्रयोग कर रहा है।"[2] हिंदी में अच्छी योग्यता, निपुणता एवं दक्षता प्राप्त करने हेतु उसकी शिक्षा प्राथमिक एवं प्रारंभिक स्तर से ही ग्रहण करनी चाहिए। प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी का ज्ञान प्राप्त करने से भविष्य हेतु अनेक संभावनाएँ एवं अवसर बन सकते हैं। देश में बहुत से स्थानों पर प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी पहले से है; उसे और विस्तार देने की आवश्यकता है। हिंदी को आधुनिक शिक्षा से जोड़ना चाहिए। विज्ञान तथा तकनीकी विषयों की शिक्षा में हिंदी का प्रयोग बढ़ाना होगा ताकि रोजगाार तथा व्यवसाय आदि के अच्छे अवसर प्राप्त हो सकें। जब तक अच्छी सुविधा, संभावनाएं तथा अवसर नहीं दिखाई देंगे, माता–पिता अपने बच्चों को हिंदी शिक्षा नहीं देंगे। हिंदी गुणों पर विचार करने के उपरान्त ही भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 (1) में संघ की राजभाषा हेतु कहा गया है – 'संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होनेवाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा।[3] भारत के संविधान के अध्याय 4 में भाषा के सम्बन्ध में निर्देश दिए गए हैं। द्रष्टव्य हैं –

अध्याय 4 विशेष निर्देश

350. व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वाली भाषा – प्रत्येक व्यक्ति किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी या प्राधिकारी को, यथास्थिति, संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभ्यावेदन देने का हकदार होगा।[4]

350क. प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएँ – प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक – वर्गों के बालकों की शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का

प्रयास करेगा और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निदेश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए उचित या आवश्यक समझता है।[5]

351. हिंदी भाषा के विकास के लिए निर्देश

संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात् करते हुए और जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द–भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चत करे।[6]

हिंदी से देश के विभिन्न भागों में कार्य किया जा सकता है। हिंदी भाषा की लिपि देवनागरी है। बहुत से लोगों की मातृभाषा होने, प्रचलन एवं प्रयोग में होने तथा देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता आदि गुणों के कारण हिंदी भाषा को करोड़ों लोगों द्वारा आसानी से सीखा जा सकता है। भारत में बहुत से बच्चे उसे आसानी से सीख सकते हैं। –

द्वै वर्ष ही मैं लेहिं बालक शुद्ध लिखि–पढ़ि याहि;
पर अन्य लिपि के ज्ञान – हित षट वर्ष हू बस नाहिं।।[7]

भारतीय जनता द्वारा हिंदी के विकास हेतु कार्य किया जाना चाहिए। हिंदी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (1850–1885 ई०) ने 'हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान' (1877 ई०) के एक दोहे में निज भाषा उन्नति पर बल देते हुए कहा है कि सारी उन्नति का मूल निज भाषा उन्नति है। निज भाषा ज्ञान के बिना हृदय तृप्त नहीं होता–

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल।।[8]

भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन को आगे बढ़ाने में हिंदी भाषा एवं साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। साहित्यकार जानते थे कि अपने देश की भाषा से ही जनता से अच्छी तरह जुड़ा जा सकता है तथा अपने देश की भाषा में विरचित साहित्य स्वदेश उन्नति में सहायक होगा। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'साहित्य की महत्ता' शीर्षक निबन्ध में लिखा है –

आवश्यकता, अनुकूलता, अवसर और अवकाश होने पर हमें एक नहीं, अनेक भाषाएँ सीखकर ज्ञानार्जन करना चाहिए, द्वेश किसी भाषा से न करना चाहिए, ज्ञान जहाँ भी मिलता हो ग्रहण कर लेना चाहिए। परन्तु अपनी भाषा और उसी साहित्य को प्रधानता देनी चाहिए, क्योंकि अपना, अपने देश का, अपनी जाति का उपकार और कल्याण अपनी ही भाषा के साहित्य की उन्नति से हो सकता है। ज्ञान, विज्ञान, धर्म और भाषा सदैव लोकभाषा होनी चाहिए। अतएव अपनी भाषा के साहित्य की सेवा और अभिवृद्धि करना, सभी दृष्टिकोण से हमारा परम धर्म है।[9]

हिंदी के प्रतिनिधि साहित्यकारों में अमीर खुसरो, विद्यापति, कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, मीरा, केशव, रहीम, रसखान, बिहारी, भारतेन्दु हश्चिन्द्र, महावीरप्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, प्रेमचंद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, महादेवी वर्मा, अज्ञेय इत्यादि के नाम उल्लेखनीय हैं। उनके साहित्य की प्रशंसा देश–विदेश के अनेक विद्वानों ने की है। तुलसीदास द्वारा विरचित 'रामचरितमानस' लेकर बहुत से भारतीय विदेश गए तथा वह आज भी उसका अध्ययन अत्यन्त श्रद्धा से करते हैं। बहुत से विदेशी विद्वानों ने भी रामचरितमानस की प्रशंसा की है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिंदी की उन्नति हेतु उसमें अन्य भाषाओं से अच्छी सामग्री लाने का आग्रह किया है। देश–विदेश की बहुत सी भाषाएँ यथा संस्कृत, अंग्रेजी, फारसी तथा अन्य भाषाओं से अनुवाद लिप्यन्तरण आदि द्वारा हिंदी में लाई जानी चाहिए–

बिबिध कला शिक्षा अमित ज्ञान अनेक प्रकार।
सब देसन से लै करहू भाषा माँहिं प्रचार।।[10]
अंग्रेजी अरु फारसी अरबी संस्कृत ढेर।

खुले खजाने तिनाहिं क्यों लूटत लावहु देर।।[11]

भारत में हिंदीतर भाषा भाषी क्षेत्रों के बहुत से विद्वानों और महापुरूषों ने भी हिंदी के प्रयोग का समर्थन किया है। ऐसे विद्वानों में स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गांधी, केशव चन्द्र सेन, सुभाषचन्द्र बोस, रवीन्द्रनाथ टैगोर, आचार्य विनोबा भावे, काका कालेलकर इत्यादि उल्लेखनीय हैं। हिंदी की उन्नति से देश की अन्य भाषाओं की उन्नति तथा देश की अन्य भाषाओं की उन्नति से हिंदी की उन्नति होगी। सब एक होकर कार्य करें। इससे देश का गौरव बढ़ेगा।

भारत बहुभाषी देश है। भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएँ हैं। भारतीय भाषाओं में सर्वाधिक संख्या हिंदी बोलने वालों की है। विश्व में हिंदी बोलने वालों की संख्या चीनी, स्पेनिश तथा अंग्रेजी बोलनेवालों के बाद सबसे अधिक है।[12] विश्व के बहुत से देशों में हिंदी के अध्ययन अध्यापन की व्यवस्था है। गिलक्रास्ट, एल० पी० तस्सितरी, जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन, फ़ादर कामिल बुल्के, प्रो० ओदोलेन स्मेकल, प्रो० लोठार लुत्से, डॉ० बरान्निकोव, डॉ० रूपर्ट स्नेल, डॉ० हजम ढिंग हान, डॉ० सूर्यनाथ गोप इत्यादि अनेक विदेशी विद्वानों ने हिंदी की महत्वपूर्ण सेवा की है। प्रवासी भारतीय भी हिंदी के विकास में सहयोग दे रहे हैं।

प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी के लिए बहुत अच्छी, रोचक एवं आकर्षक पुस्तक आदि तैयार की जानी चाहिए। समाज आज ई–बुक्स की ओर आकर्षित हो रहा है। हिंदी की अच्छी पुस्तकें इलैक्ट्रॉनिक रूप में उपलब्ध होनी चाहिए तथा हिंदी में आकर्षक वैबसाइट्स बनाई जानी चाहिए। देश विदेश में हिंदी साहित्य के अच्छे पुस्तकालय तथा किताबों की दुकानों की सुविधा भी उपलब्ध होनी चाहिए। हिंदी की उन्नति तथा प्रारंभिक शिक्षा हिंदी में दिए जाने हेतु वैज्ञानिक उपकरणों से भी सहायता ली जानी चाहिए। रेडियो, टेलिविज़न, कम्प्यूटर, मोबाइल, इंटरनेट, प्रोजेक्टर, विभिन्न प्रकार के कैसिट सिनेमा इत्यादि के माध्यम से हिंदी का अधिकाधिक प्रचार–प्रसार किया जाना चाहिए। प्रारंभिक स्तर पर हिंदी शिक्षण में पोस्टर चॉर्ट, दीवार पर लेखन, चित्र आदि से सहायता ली जानी चाहिए। समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, प्रदर्शनी, अभिनय, खेल, लोक नृत्य, शिक्षा यंत्र और मशीनों आदि से सहायता ली जाए। इससे समय एवं शक्ति की बचत होगी, तथा सामूहिक शिक्षा देने में सफलता मिलेगी। इस प्रकार वस्तुनिष्ठ, प्रत्यक्ष, स्थायी ढंग से शिक्षा दी जा सकेगी। लोगों को वास्तविक एवं मनोरंजक ढंग से शिक्षा दी जा सकेगी।[13] प्रारंभिक स्तर पर हिंदी शिक्षा का आधुनिकीकरण होना चाहिए। देश–विदेश के स्कूल–कॉलिज इत्यादि में हिंदी शिक्षण एवं अध्ययन की अच्छी व्यवस्था की जानी चाहिए। हिंदी में अधिकाधिक श्रेष्ठ पत्र–पत्रिकाएँ निकाली जानी चाहिए। विद्वानों के साथ ही सामान्य व्यक्ति तथा बच्चों से हिंदी को अधिकाधिक जोड़ा जाना चाहिए। हिंदी के प्रचारार्थ देश विदेश में अधिकाधिक नाटक, सम्मेलन, संगोष्ठी इत्यादि आयोजित किए जाने चाहिए। हिंदी में मॉडर्न टैक्नॉलाजी लाई जाए। हिंदी में शोध कार्य उन विषयों में किया जाना चाहिए जिनकी पर्याप्त माँग और आवश्यकता है। अच्छी भाषा एवं उच्च शिक्षण संस्थान की पहचान उसके शोध कार्य से होती है तथा अच्छा शिक्षक वही माना जाता है जो अच्छा शोधकर्ता भी है। डॉ० मैग्रेशर का कथन है – "हिंदी दुनिया की महान भाषाओं में से एक है। भारत को समझने के लिए हिंदी का ज्ञान अनिवार्य है। हिंदी का महत्व आज इसलिए और भी बढ़ गया है, क्योंकि भारत आज शिक्षा, उद्योग और तकनीक के हिसाब से दुनिया का अग्रणी देश है।"

भूमण्डलीकरण, बाजारवाद तथा सूचना प्रौद्योगिकी प्रधान वर्तमान युग को कम्प्यूटर एवं स्मॉर्ट फोन के बढ़ते प्रयोग की प्रवृत्ति के आधार पर बहुत से व्यक्ति 'कम्प्यूटर युग' तथा 'सूचना प्रधान युग' (Information age) भी कहते हैं। किसी विद्वान ने ठीक कहा है – "Computers are everywhere"[14] जीवन के बहुत से क्षेत्रों में आज कम्प्यूटर द्वारा महत्वपूर्ण कार्य किया जा रहा है। बहुत से व्यक्तियों का रोजगार कम्प्यूटर से जुड़ा है। सूचना तथा रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने में कम्प्यूटर टैक्नॉलाजी सहायक सिद्ध हो सकती है। कहते हैं कि कम्प्यूटर के प्रयोग से दुनिया बदल गई है – "Computers have changed our world" तथा कम्प्यूटर द्वारा हमारा कार्य करने का ढंग

बदल दिया गया है – "Computers have changed the way we do everything"[15] 21वीं शताब्दी में कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक हो गया है। Stephen Hawking का कथन है – Where you want to uncover the secrets of the universe, or you just want to pursure a career in the 21st Century, basic computer programming is an essential skill to learn[16]

कम्प्यूटर की आवश्यकता तथा उपयोगिता और बढ़ेगी। बिल गेट्स (Bill Gates) ने दो अन्य विद्वानों के साथ 'THE ROAD AHEAD' शीर्षक पुस्तक लिखी है। पुस्तक में उन्होंने कम्प्यूटर को अगली क्रान्ति का मूल मानते हुए लिखा है' "The PC-its evolving hardware business applications, on line systems, Internet connections, electronic mail, multimedia titles, authoring tools, and games- is the foundation for the next revolution."[17]

प्रारंभिक शिक्षा कक्षा में शिक्षकों के मार्ग निर्देशन के साथ ही कक्षा के बाहर तथा शिक्षकों के निर्देशन के बिना भी प्राप्त की जा सकती है। प्रारंभिक स्तर पर हिंदी समझना, बोलना, पढ़ना और लिखना सीखना होगा। प्रारंभिक स्तर पर हिंदी शिक्षा हेतु सचित्र, मनोरंजक तथा खेल–खेल में शिक्षा रूप स्वीकार किया जाना चाहिए। कम्प्यूटर द्वारा अच्छा ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। अब समय आ गया है कि बचपन में ही बच्चों को कम्प्यूटर शिक्षा की सुविधा उपलब्ध करा दी जाए। ऐसी शिक्षा व्यावहारिक तथा रोचक होगी। कुछ लोग भयभीत हैं कि कम्प्यूटर के बढ़ते प्रयोग से शिक्षक का महत्व कम हो जाएगा। बिल गेट्स का कथन है। The information highway won't replace or devalue any of the human educational talent needed for the challenges ahead: committees teachers, creative administrators, involved parents, and of course, diligent students. However, technology will be pivotal in the future role of teachers.[18]

प्रारंभिक शिक्षा हिंदी में दिए जाने हेतु कम्प्यूटर का प्रयोग बढ़ाना होगा। स्कूलों में मल्टी मीडिया प्रेजेंटेशन बढ़ाना होगा तथा बच्चों द्वारा होम वर्क करने में भी कम्प्यूटर की सहायता ली जाए। व्याख्यान देने तथा कंठस्थ कराने की प्रवृत्ति के स्थान पर शिक्षक द्व ारा छात्र का निरीक्षण तथा मूल्यांकन किया जाए तथा मार्गनिर्देशन किया जाए। प्रारंभिक स्तर पर हिंदी की अच्छी शिक्षा हेतु कम्प्यूटर तथा द्रश्य–श्रव्य यंत्रों का प्रयोग बढ़ाना होगा। वर्तनी, व्याकरण आदि कम्प्यूटर पर चैक की जाए। इससे विषय रोचक हो जाएगा तथा आसानी से समझा जा सकेगा। कम्प्यूटर के साथ ही छात्र, शिक्षक तथा शिक्षा का महत्व बना रहेगा। Louis V. Gerstner Jr. ने कहा है – "Computers are magnificent tools for the realization of our dreams, but not machine can replace the human spark of sprit, compassion, love and understanding"[19]

प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी पाठ्य पुस्तक बच्चों की आयु तथा योग्यतानुसार होनी चाहिए तथा पाठ सरलता से कठिनता की ओर बढ़ना चाहिए। विषय में विविधता तथा रोचकता होनी चाहिए। कहानी, नाटक, निबन्ध, कविता आदि विभिन्न विषयों के अध्ययन के साथ ही व्याकरण का भी अध्ययन कराया जाए। साहस, सच्चरित्र, देश प्रेम, वाणिज्य, विज्ञान, कला आदि से संबंधित विषयों का ज्ञान दिया जाए। प्रारंभिक स्तर पर पाठ्य–पुस्तक सचित्र आकर्षक तथा मोटे टाइप में छपी होनी चाहिए। उसकी भाषा सरल, शुद्ध एवं प्रभावोत्पादक होनी चाहिए।

वर्तमान समय में कम्प्यूटर द्वारा हिंदी से संबंधित अनेक कार्य किए जा सकते हैं, उन्हें और विस्तार देने की आवश्यकता है। हिंदी की शिक्षा को स्तरीय बनाने हेतु प्रत्येक कक्षा को इंटरनेट से जोड़ा जाना चाहिए। U.S. Federal के चेयरमेन Reed Hundt का कथन है – "Our national commitment to connect every classroom in every school in the country to the Internet will be the greatest advance in quality and quality of education in this country."[20] ज्ञान को कम्प्यूटर द्वारा हिंदी में लाने में सुविधा होगी – 'Capturing the real world in the classroom'[21] अच्छी वैबसाइट के साथ ही हिंदी की सभी महत्वपूर्ण पुस्तकें तथा शोधकार्य आदि कम्प्यूटर पर उपलब्ध होना चाहिए। कम्प्यूटर टैक्नोलॉजी बड़ी

तेजी से आगे बढ़ रही है। इस क्षेत्र में अद्यतन रहना चाहिए।

आज हिंदी के साथ ही अनेक भारतीय भाषाओं पर कम्प्यूटर से कार्य किया जा सकता है। मानक हिंदी के अनुसार हिंदी में व्याकरण जाँच, स्पैल चैकर, विलोम तथा पर्यायवाची शब्दों इत्यादि की जानकारी देनेवाले अच्छे सॉफ्टवेयर प्रारंभिक स्तर पर सहज उपलब्ध होने चाहिए। कम्प्यूटर द्वारा हिंदी अनुवाद को और उत्कृष्ट बनाना होगा। विभिन्न विषयों से सम्बंधित हिंदी के अच्छे शब्दकोष कम्प्यूटर पर उपलब्ध होने चाहिए। इंटरनेट से बहुत सी सूचना एवं ज्ञान प्राप्त कर जिज्ञासा तृप्त की जा सकती है। 'THE ROAD AHEAD' शीर्षक पुस्तक में कहा गया है – "I think this is a wonderful time to be alive. There have never been so many opportunities to do things that were impossible before. It's also the best time ever to start new companies, advance sciences such as medicine that improve quality of life, and stay in touch with friends"[22]

अच्छे शिक्षक का कोई विकल्प नहीं है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है – "हमें तो हिंदी भाषा को इस योग्य बना देना है कि वह साधारण–से साधारण मजदूर से लेकर अत्यन्त विकसित मस्तिष्क के बुद्धि जीवी के दिमाग में समान भाव से विहार कर सके।"[23] भारत में उच्च स्तर पर विज्ञान की शिक्षा राजभाषा हिंदी अथवा अन्य भारतीय भाषा के माध्यम से दी जाए, इसके विरोध में एक तर्क यह भी दिया जाता है कि उच्चतम ज्ञान का भण्डार अंग्रेजी में बहुत तेजी से बढ़ रहा है तथा अपनी मातृभाषा में शिक्षित विद्यार्थी इस ज्ञान का समुचित लाभ उठाने से वंचित रह जाएँगे। महात्मा गांधी का विचार है –

मेरा सुविचारित मत है कि अंग्रेजी की शिक्षा जिस रूप में हमारे यहाँ दी गई है उससे अंग्रेजी पढ़े लिखे भारतीयों का दुर्बलीकरण किया है, भारतीय विद्यार्थियों की स्नायविक ऊर्जा पर जबर्दस्त दबाव डाला है, और हमें नकलची बना दिया है। अनुवादकों की जमात पैदा करने से कोई देश राष्ट्र नहीं बन सकता। आज अंग्रेजी निर्विवाद रूप से विश्व–भाषा है। यह हमारी मानसिक दासता है जो हम समझते हैं कि अंग्रेजी के बिना हमारा काम नहीं चल सकता। मैं इस पराजयवाद का समर्थन कभी नहीं कर सकता।[24]

सूचना प्रौद्योगिकी तथा विभिन्न यंत्रों पर हिंदी का प्रयोग बढ़ाना होगा। हिंदी में कम्प्यूटर से सम्बन्धित अच्छे ग्रंथों की रचना की जाए तथा प्रेक्टिकल कार्य किए जाए। Stephen Hawking का कथन है– "Computers double their speed and memories every 18 months. There is a real danger that computers will develop intelligence and take over."[25]

हिंदी शिक्षा के अनेक उद्देश्य हो सकते हैं, यथा – जीविकोपार्जन, नागरिकता का प्रशिक्षण, बौद्धिक विकास, भविष्य निर्माण, चरित्र निर्माण, वातावरण अनुकूल बनाना, संस्कृति तथा विशेष ज्ञान, आत्मबोध, सांस्कृतिक सुरक्षा तथा उन्नति, शारीरिक विकास, जीवन को पूर्णता प्रदान करना आदि। आवश्यकता के अनुरूप पाठ्यक्रम बनाना तथा उसके अनुसार पाठ्य पुस्तकें तैयार करनी होंगी। हिंदी साहित्य से संबंधित रोचक सी०डी तथा डी०वी०डी० तैयार की जानी चाहिए। इंटरनेट पर हिंदी के सभी महत्वपूर्ण ग्रंथ एवं शोध प्रबन्ध उपलब्ध होने चाहिए। आलस्य छोड़, कार्य करने की गति में हमें तेजी लानी होगी। ऐसा कार्य किया जाए कि हिंदी में रोजगार के अवसर उपलब्ध हों तथा देश विदेश में उसकी डिमॉन्ड बढ़े, मार्केट वैल्यू बढ़े। हिंदी की विशेषता है कि वह अन्य भाषाओं की विशेषताओं तथा शब्दों को आत्मसात् कर सकती है। भारतीय संस्कृति में मिलकर चलने, अच्छाई को ग्रहण करने तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना पर बल दिया गया है। हिंदी में शोध कार्य ऐसा किया जाए जो मानव कल्याण में सहायक हो। इनर्जी, स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, पर्यावरण, विज्ञान तथा टैक्नोलॉजी आदि से संबंधित अच्छा शोध कार्य हिंदी में किया जाना चाहिए। 31 मार्च 2017 राष्ट्रपति जी ने मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार को आदेश दिया है कि हिंदी भाषा को कम्पलसरी विषय के रूप में पढ़ाए जाने हेतु महत्वपूर्ण प्रयास किए जाएँ। आदेश में कहा गया है – "As a first step Hindi should be made compulsory subject upto standard X in all schools of CBSE and Kendriya Vidyalaya Sangathan" फरवरी 2017 CBSE के भारत में 18,546 तथा विदेश के 25 देशों 210 स्कूल हैं।[26] भारत एक लोकतांत्रिक

देश है। देश के नागरिक विभिन्न विषयों पर अपनी राय रख सकते हैं तथा सरकार को सुझाव दे सकते हैं। उक्त आदेश के संबंध में कुछ लोगों द्वारा कहा गया कि किसी पर हिंदी थोपी न जाए। भाषा का अध्ययन व्यक्ति की इच्छा तथा आवश्यकता पर छोड़ दिया जाए। बच्चे कौन सी भाषा पढ़ेंगे इसका फैसला उनके माता पिता द्वारा किया जाए। वर्तमान समय में अंग्रेजी की बड़ी माँग है क्योंकि उसमें अच्छे अवसर हैं, उसके द्वारा वैश्विक कार्य किया जा सकता है तथा रोजगार प्राप्त करने में वह सुविधा जनक हो सकती है – "There is enormous demand of English because it is seen as the language of opportunity, global business and access to jobs"[27]

प्रारंभिक स्तर पर हिंदी की शिक्षा से भारतीय संस्कृति, साहित्य, कला एवं भाषा की उन्नति होगी। हिंदी की उन्नति कर देश में ऐसा वातावरण बनाना होगा कि सभी लोग अंग्रेजी का मोह छोड़ कर हिंदी का अध्ययन करें। देश के सुख, समृद्धि उन्नति हेतु हम सब मिलकर कार्य करें। हिंदी भाषा के विकास तथा समृद्धि में देश भक्ति की भावना, आपसी प्रेम और सौहार्द अत्यन्त सहायक सिद्ध हो सकता है। ऋग्वेद की अन्तिम ऋचा में कहा गया है कि तुम सामान मन वाले होओ। तुम्हारा कर्म समान हो। तुम्हारे हृदय और मन भी समान हों, तुम समान गति वाले होकर सब प्रकार सुसंगठित हो –

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।[28]

सन्दर्भ

1. श्रीमदभगवद्गीता, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं० 2059, तिहत्तरवां संस्करण अध्याय 4, 38, पृ०72
2. डॉ० भोलानाथ तिवारी, हिंदी भाषा किताब महल, संस्करण 2004, पृ० 214
3. भारत का संविधान, द्विभाषी संस्करण, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण 2005, पृ० 186
4. वही, पृ० 190
5. वही, पृ० 190
6. वही, पृ० 190
7. मिश्रबंधु–विनोद, भूमिका, पृ० 23, खंड 1–2, गंगा पुस्तक माला, नवीन संशोधित एवं परिवर्तित संस्करण 1972 ई०। गणेशबिहारी मिश्र साहित्य वाचस्पति, रावराजा डॉ० श्यामबिहारी मिश्र डी० लट्०, साहित्य–वाचस्पति रायबहादुर डा० शुकदेवबिहारी मिश्र डी०लिट०
8. भारतेन्दु ग्रंथावली, दूसरा खण्ड, संकलनकर्ता तथा सम्पादक ब्रहरत्नदास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पहला सं० संवत् 1991, हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान, 5 पृ० 731
9. महावीर प्रसाद द्विवेदी रचना संचयन, चयन एवं संपादन, भारत यायावर, साहित्य अकादमी, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2006, पृ. 141
10. भारतेन्दु ग्रंथावली, दूसरा खण्ड, संकलनकर्ता तथा सम्पादक ब्रजरत्नदास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पहला सं० संवत् 1991, हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान, 38, पृ० 734
11. वही, 78 पृ० 737
12. द्रष्टव्य है, मनोरमा ईयर बुक, 2010, पृ० 480
13. द्रष्टव्य है – रामशकल पाण्डेय, शिक्षा के मूल सिद्धन्त, अग्रवाल पब्लिकेशंस, आगरा, बारहवाँ संस्करण 2009, पृ० 304–305
14. PETER NORTON'S Introduction to Computers, Tata McGraw-Hill Publishing Company Limited, New Delhi, Foreword to Students, Page 3 से उद्धृत
15. वही, 78, पृ०
16. www.google.co.in Stephen Hawking Quotes About Computers.
17. THE ROAD AHEAD, BILL GATES WITH NATHAN MYHRVOLD AND PETER RINEARSON, VIKING, Published by the Penguium Group, New York, 1995, FOREWORD xii
18. THE ROAD AHEAD, BILL GATES WITH NATHAN MYHRVOLD AND PETER RINEARSON, VIKING, Published by the Penguium Group, New York, 1995, P 185
19. (Louis V. Gerstner. Jr.) www.brainyquote.com Quotes on Computer

20. BUSINESS / THE SPEED OF THOUGHT, BILL GATES, PENGIUM BOOKS, 199, P 431

21. Information Technology, TATA McGRAW-HILL EDITION, Preface

22. THE ROAD AHEAD, BILL GATES WITH NATHAN MYHRVOLD AND PETER RINEARSON, VIKING, Published by the Pengium Group, New York, 1995, P 276

23. सम्मेलन दैनन्दिनी, 2009, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, सोमवार, 5 अक्टूबर से उद्घृत

24. महात्मा गांधी के विचार, संकलन एवं सम्पादन, आर. के. प्रभु, यू. आर. राव, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, तीसरी आवृत्ति 2003, पृ. 369

25. www.azquotes.com (Stephen Hawking)

26. THE TIMES OF INDIA, NEW DELHI / AGRA, THURSDAY, April 20, 2017, Page 7

27. वही

28. ऋग्वेद चतुर्थ खण्ड, संपादक पं० श्रीराम शर्मा आचार्य, संस्कृति संस्थान, बरेली, सं० 1999, पृ० 1898

राहत कदा, डिग्गी रोड,
सिविल लाइन्स,
अलीगढ़–202001 (उ.प्र.)

पं. सं. 3246/77
आईएसएसएन नं. : 0970–9398

प्रपत्र–4 (देखिए नियम–8)
प्रेस तथा पुस्तक पंजीकरण अधिनियम
समाचार पत्रों का पंजीकरण (केन्द्रीय) नियम
''राजभाषा भारती'' के स्वामित्व तथा विवरणों की सूचना

1.	प्रकाशन स्थान	नई दिल्ली
2.	प्रकाशन अवधि	त्रैमासिक
3.	मुद्रक का नाम	डॉल्फिन प्रिंटो–ग्राफिक्स, दिल्ली
4.	क्या भारत का नागरिक है?	भारतीय नागरिक
5.	प्रकाशक का नाम व पता	डॉ. धनेश द्विवेदी, उप संपादक राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार एन.डी.सी.सी.–2, भवन चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001 दूरभाष : 011–23438159
6.	संपादक (पदेन) का नाम व पता	डॉ. श्रीप्रकाश शुक्ल संयुक्त निदेशक (नीति/पत्रिका), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय एन.डी.सी.सी.–2, भवन चौथा तल, बी विंग, नई दिल्ली–110001
7.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	अप्रयोज्य

मैं, डॉ. धनेश द्विवेदी घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं।

ह./–
प्रकाशक का हस्ताक्षर

कवर डिजाइन एवं टाइपसेटिंग–डॉल्फिन प्रिंटो–ग्राफिक्स, 1ई/18, झण्डेवालान विस्तार, चौथी मंजिल, नई दिल्ली–110055

राष्ट्रीय एकता के लिए अनिवार्य है – प्राथमिक कक्षाओं में हिंदी पढ़ाना

–मृदुला श्रीवास्तव

भारत एक बहुभाषा–भाषी देश है और यह भाषायी विविधता इस देश की एक ऐसी विशेषता है जो हमारी अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर है। इसका संरक्षण करते हुए भी एक सुसंगठित राष्ट्र के रूप में हमारी एकता का सूत्र केवल हिंदी भाषा ही हो सकती है, इस बात को स्वतंत्रता के पूर्व ही हमारे स्वतंत्रा आंदोलन के समस्त नायकों ने एक मत से स्वीकार कर लिया था। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी समेत तमाम स्वतंत्रता सेनानियों, विद्वानों व विचारकों ने, चाहे वे किसी भी प्रान्त के क्यों न रहे हों, हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की एक स्वर से वकालत की थी तथा स्वतंत्रता के पूर्व ही देश के अहिंदी भाषी प्रान्तों में भी हिंदी शिक्षण–प्रशिक्षण का महत्वपूर्ण राष्ट्रीय अभियान पूरे जोश–ख़रोश के साथ आरंभ हो गया था। राष्ट्रवासियों को यह आशा थी कि भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद अनिवार्य रूप से समस्त भारतवर्ष के सभी विद्यालयों में हिंदी भाषा का पठन–पाठन प्राथमिक कक्षाओं के स्तर पर आरंभ हो जायेगा। परन्तु दुर्भाग्यवश अंग्रेजीदां नौकरशाही और संकीर्ण क्षेत्रीयतावादी राजनीतिज्ञों ने दुरभिसंधि करके हिंदी के इस नैसर्गिक अधिकार को छीन लिया तथा हिंदी को आज भी भारत में उचित स्थान नहीं मिल पाया है और इसका सबसे अधिक दुष्प्रभाव हमारी राष्ट्रीय एकता पर पडा है। जिस राष्ट्र का समग्र मौलिक चिन्तन उस राष्ट्र की भाषा में न हो, उसकी प्रगति की रफ़्तार अपने आप मंद पड़ने लगती है। भारत भी इसी त्रासदी को झेल रहा है जहाँ भारतीय लोग ही हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं की बलि देकर अंग्रेजी भाषा के विकास व उन्नयन में लगे हैं।

भारत में स्वतंत्रता के बाद शिक्षा को राज्य सरकारों की निगरानी में सौंप दिया गया जिसके कारण एक केन्द्रीय सोच का स्पष्ट अभाव प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर ही परिलक्षित होने लगा है। निजी व सरकारी शिक्षण व्यवस्था में किसी प्रकार का तालमेल न होने के कारण निहित स्वार्थवश शिक्षा के क्षेत्र में तरह तरह के प्रयोगों की बाढ़ सी आ गई और इससे हमारी राष्ट्रीय एकता का सूत्र 'हिंदी भाषा' कमज़ोर पड़ गया। शिक्षा जगत का यह सर्वमान्य सिद्वान्त रहा है कि प्राथमिक शिक्षा बालक को उसकी मातृभाषा में दी जानी चाहिए। इसी के साथ राष्ट्रीय एकता के लिए प्राथमिक स्तर से राष्ट्रभाषा की शिक्षा भी प्रत्येक विद्यार्थी के लिए अनिवार्य होनी चाहिए परन्तु भारत के दक्षिणी व पूर्वोत्तर के कुछ प्रदेशों में राजनीतिक कारणों से हिंदी भाषा के पठन पाठन का विरोध किया गया तथा इसके स्थान पर अंग्रेजी भाषा को विशेष प्रोत्साहन प्रदान किया गया जिसके दुष्परिणाम हम आज भी हिंदी विरोधी आन्दोलनों के रूप में झेल रहे हैं।

भाषा को सीखने के नौ आधारभूत कौशल होते हैं। सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना, विचारों को समझना, व्याकरण का ज्ञान प्राप्त करना, स्वयं सीखकर भाषा में विचार अभिव्यक्त करना, भाषा में संवाद करने की क्षमता विकसित करना तथा शब्दकोष के प्रयोग द्व ारा भाषा को समृद्ध बनाना। ये आधारभूत कौशल हर भारतीय में, चाहे उसकी मातृभाषा कुछ भी हो, हिंदी भाषा के लिए विकसित हो सके इसके लिये प्राथमिक कक्षाओं से ही हिंदी के पठन–पाठन की अनिवार्यता आवश्यक है। वर्तमान शिक्षण व्यवस्था में प्राथमिक कक्षाओं में हिंदी भाषा पढ़ाने या न पढ़ाने का निर्णय राज्य सरकारों को सौंपा हुआ है और निजी शिक्षण संस्थाओं को अपने स्तर पर निर्णय की छूट भी प्राप्त है कि वे चाहे तो हिंदी भाषा का प्राथमिक कक्षाओं में पठन–पाठन करवायें और चाहे तो न करवायें। परिणामस्वरूप प्राथमिक कक्षाओं से उत्तीर्ण विद्यार्थी

जब माध्यमिक शिक्षा की कक्षाओं में पहुँचते हैं तो उनके हिंदी भाषा ज्ञान में काफी अन्तर मिलता है जो उत्तरोतर बढ़ता चला जाता है तथा एक व्यस्क नागरिक बनने तक हर भारतीय हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान नहीं प्राप्त कर पाता है और उनके चिन्तन में भी राष्ट्रीय स्वाभिमान व गौरव की कमी पाई जाती है। निस्संदेह किसी भी प्रभुता सम्पन्न राष्ट्र में राष्ट्रभाषा की यह उपेक्षा वांछनीय नहीं हो सकती है अतः प्राथमिक स्तर की कक्षाओं में हिंदी की अनिवार्यता के बारे में अविलम्ब निर्णय होना चाहिए और इसके लिए देश के वर्तमान संविधान में संशोधन आवश्यक हो तो वह भी तत्काल किया जाना बहुत जरूरी है।

भाषा ज्ञान प्राप्त करने की सही उम्र प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों की ही होती है। मातृभाषा के साथ–साथ इसी उम्र में भारत में विद्यार्थियों को एक विदेशी भाषा (अंग्रेज़ी) भी पिछले कई वर्षों से सिखाई जा रही है। धार्मिक समुदाय अन्य विदेशी भाषाओं (अरबी, फारसी आदि) का प्रशिक्षण प्राथमिक कक्षाओं के स्तर पर ही देते रहे हैं। संस्कृत भाषा की शिक्षा भी गुरूकुलों में प्राथमिक स्तर पर दी जाती है तब ऐसा कोई कारण नहीं है कि हर भारतवासी भारत की राजभाषा हिंदी को प्राथमिक कक्षाओं में पढ़कर न सीख पाये। प्राथमिक कक्षाओं में हिंदी भाषा की अनिवार्यता लागू हो जाने के बाद भारत की नई पीढ़ी स्वदेशी भाषा में चिन्तन करना सीखेगी, परस्पर संवाद बढ़ेगा और राजभाषा के माध्यम से राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ होगी ही, इसमें कदापि दो राय नहीं हो सकती अतः शीघ्रातिशीघ्र सारे देश की प्राथमिक कक्षाओं में हर हाल में हिंदी भाषा का शिक्षण अनिवार्य किया जाना समय की माँग है। यदि हम अभी भी ऐसा करने में असमर्थ रहते हैं तो राष्ट्रीय एकता के क्षरण का खतरा दिनोंदिन बढ़ता ही चला जायेगा। हिंदी भाषा का प्राथमिक स्तर पर अध्ययन करवाने के लिये हमारे पास मूलभूत संसाधनों की कोई कमी नहीं है केवल राजनीतिक नेतृत्व की इच्छा शक्ति का अभाव है। प्राथमिक विद्यालयों में हिंदी भाषा का शिक्षण अनिवार्य होने से माध्यमिक कक्षाओं में विषयों को हिंदी माध्यम से पढ़ाया जाना सुगम हो जायेगा तथा हिंदी भाषा की तकनीकी व वैज्ञानिक शब्दावली समृद्ध होने से उन विभागों के कामकाज में भी हिंदी भाषा का चलन आम होगा जहाँ आज भी अंग्रेजी भाषा का प्रचलन बना हुआ है। अनेक स्वतंत्र देशों ने अपने देश की भाषाओं में तकनीकी शब्दावली विकसित करके विज्ञान का त्वरित विकास करने में सफलता पाई है परन्तु भारत अभी भी उन क्षेत्रों में भी अंग्रेज़ी के वर्चस्व का दंश झेल रहा है जहाँ पर हिंदी में काम करना भी सम्भव है और समय की माँग भी। हमारे उच्च न्यायालयों, उच्च शिक्षण संस्थाओं तथा प्रशासनिक कार्यों में आज भी अंग्रेज़ी का बोलबाला है तथा इससे मौलिक शोध पर बुरा असर पड़ता है क्योंकि छात्र की अधिकतम उर्जा विदेशी भाषा सीखने में ही नष्ट हो जाती है।

प्राथमिक कक्षाओं में हिंदी शिक्षण की अनिवार्यता लागू करते समय हमें स्थानीय भाषाओं को भी प्रोत्साहित करना जरूरी है अर्थात् कर्नाटक में कन्नड़ भाषा तथा उड़ीसा उड़िया भाषा को भी प्राथमिक कक्षाओं में अनिवार्य रूप से हिंदी भाषा के साथ पढ़ाया जाना चाहिए। अंग्रेज़ी भाषा की पढ़ाई का बोझ प्राथमिक कक्षाओं के छात्र–छात्राओं पर डालना उचित नहीं है। इससे बालक के सुकोमल मस्तिष्क के स्वस्थ विकास पर बुरा असर पड़ता है। प्रायः यह देखा गया है कि जिन बच्चों की पढ़ाई प्री नर्सरी से ही अंग्रेज़ी भाषा के माध्यम से कारवाई गई वे अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा का अनुचित ज्ञान न प्राप्त कर पाने के कारण उच्च कक्षाओं तथा प्रतियोगी परीक्षाओं में पिछड़ गये, जबकि भारतीय भाषाओं व हिंदी माध्यम से प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्र–छात्रा कालान्तर में उच्च शिक्षा अंग्रेजी तथा अन्य विदेशी भाषाओं के माध्यम से भी प्राप्त कर प्रतिस्पर्द्धा में आगे निकल गये। ऐसा इस कारण होता है क्योंकि बालक का मस्तिष्क अपनी मातृभाषा तथा राष्ट्रभाषा का यदि समय पर ज्ञान अर्जित न करके अपनी ऊर्जा विदेशी भाषा को रटने में नष्ट करे तो उसका स्वाभाविक विकास संभव नहीं हो पाता। यदि राजस्थान का बालक ऊंदरो चूहा शब्द सीखने की जगह आर ए टी रैट ही रटेगा तो वह अपने समाज, संस्कृति व परिवेश से कट कर एक कुण्ठित व्यक्तित्व के रूप में ही विकसित होगा।

प्राथमिक कक्षाओं में हिंदी भाषा के पठन–पाठन की अनिवार्यता देश के सभी सरकारी, संस्थागत तथा निजी विद्यालयों में एक साथ एक ही सत्र से कानूनन अनिवार्य करते हुए सारे देश में इसके लिये समान पाठ्यक्रम व पाठ्य पुस्तकों की व्यवस्था की जानी चाहिये। धार्मिक संस्थाओं के विद्यालयों को भी इसमें किसी भी तरह की छूट नहीं देनी चाहिए। यदि पूरे देश में एक साथ एक समय में ऐसा किया जा सका तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत की भावी पीढ़ी वर्तमान पीढ़ी से अधिक भारतीय होगी तथा भारत को प्रगति के शिखर सोपान तक ले जाएगी। भले ही प्राथमिक कक्षा का छात्र मदरसे में पढ़ रहा हो, किसी संस्कृत गुरूकुल में अध्ययनरत हो या विदेशी मिशनरीज़ द्वारा संचालित कॉन्चेण्ट स्कूल का विद्यार्थी हो अथवा किसी साधनहीन आदिवासी बहुल क्षेत्र की किसी सरकारी पाठशाला का विद्यार्थी हो, मातृभाषा व राष्ट्रभाषा में उसे प्राथमिक शिक्षा मिलनी ही चाहिए। यह हर भारतीय बच्चे का मौलिक अधिकार घोषित कर दिया जाना चाहिए। ऐसा करने में जो भी संवैधानिक, प्रशासनिक या राजनीतिक बाधायें आ रही हों उन्हें तत्काल दृढ़ इच्छाशक्ति के द्वारा दूर किया जाना चाहिये। ऐसा होने पर मात्र कुछ वर्षों में ही भारत की शिक्षा–व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन परिलक्षित होने लगेगा तथा हमारे देश में अधिक वैज्ञानिक, अभियंता, चिकित्सक, विधिवेत्ता हिंदी तथा भारतीय भाषाओं के माध्यम से तैयार होकर राष्ट्र के लिए कार्य करना पसन्द करेंगे तथा वर्तमान में अंग्रेज़ी माध्यम से उच्च शिक्षा प्राप्त भारतीयों की प्रतिभा का जिस तेज़ी से विदेशों में पलायन हो रहा है उस पर अंकुश लग जायेगा इसमें मुझे ज़रा सा भी सन्देह नहीं है।

यही नहीं प्राथमिक कक्षाओं में अध्ययनरत सभी बालक जब हिंदी पाँच से दस वर्ष की आयु में ही पढ़ना, लिखना और बोलना सीखेंगे तो राजभाषा का सम्मान सारे देश में स्वतः बढ़ने लगेगा तथा अहिंदी भाषी कुछ प्रान्तों में राजनीतिक कारणों से हिंदी का जो विरोध किया जाता रहा है उसमें कमी आयेगी। तमिलनाडु या नागालैण्ड का बालक जब किसी दूसरे प्रदेश में जाएगा तो हिंदी ज्ञान के कारण उसे किसी भी अन्य भाषा भाषी से संवाद स्थापित करने में तनिक भी परेशानी महसूस नहीं होगी। वह अपनी बात औरों से सुगमतापूर्वक कह सकेगा। उनकी बात सरलता से समझ सकेगा और क्षेत्रीय संकीर्णता से ऊपर उठ कर इस पूरे देश को ही अपना मानेगा। प्रतियोगी परीक्षाओं में भी अंग्रेज़ी की अनिवार्यता समाप्त कर भारतीय भाषाओं व हिंदी का महत्व बढ़ेगा और हिंदी तथा भारतीय भाषाओं के माध्यम से पढ़ने वाले छात्र–छात्राएं भेदभाव का शिकार होकर नहीं पिछड़ेगें बल्कि देश के विकास में उनका ही सर्वाधिक योगदान होने लगेगा। हमारी केन्द्रीय सरकार तथा इसके सभी विभागों के द्वारा राजभाषा को बढ़ावा देने के नाम पर करोड़ों रूपये प्रतिवर्ष व्यय किये जाते हैं परन्तु सरकारी कामकाज में अंग्रेज़ी भाषा का दबदबा बढ़ता ही चला जा रहा है, परन्तु यदि देशभर में प्राथमिक कक्षाओं से ही हिंदी भाषा का पठन–पाठन अनिवार्य कर दिया जाये तो स्वयंमेव आने वाले एक–दो दशकों में ही न केवल देश के विकास की गति दुगुनी हो जायेगी बल्कि वास्तविक अर्थों में हिंदी हमारी प्रगति की गतिवाहिनी बन कर देश की भाषायी और राजनीतिक अस्मिता की ध्वजवाहक बनेगी और हमें भी हिंदी दिवस, हिंदी सप्ताह या हिंदी पखवाड़ा मनाने के सरकारी आडम्बर की कोई आवश्यकता नहीं महसूस होगी।

पाँच से दस वर्ष के आयु वर्ग के बालक–बालिका जब राजभाषा हिंदी अनिवार्य रूप से सीखना आरंभ कर देंगे तो राष्ट्रीय एकता को जो बल मिलेगा वह सैकड़ों नेताओं के भाषणों से भी नहीं मिल सकता। धार्मिक भेदभाव, कट्टरता और साम्प्रदायिकता को क्षीण करने के लिए प्राथमिक स्तर पर हिंदी का सारे देश में अध्ययन–अध्यापन करवाया जाना बहुत ही बुद्धिमत्तापूर्ण कदम होगा। इस प्रकार जो बालक–बालिकाएं बचपन से ही राजभाषा में पढ़ना–लिखना और परस्पर संवाद करना सीख जायेंगे उनमें क्षेत्रीयता की संकीर्ण मानसिकता विकसित ही नहीं होगी और वे पूरे देश को अपना घर समझेंगे। यही नहीं, राष्ट्रीयता के भाव में पगे ये बच्चे जब बड़े होंगे तो हमारे राष्ट्र की भलाई को ही सर्वोपरि मानेंगे। जिन राष्ट्रों ने भी अपनी ही राष्ट्रभाषा की लम्बे समय तक

अवहेलना और उपेक्षा की है उन्हें विघटन के दौर से गुज़रना पड़ा है जबकि राष्ट्रभाषा जहाँ भी बालकों को घुट्टी में घोल कर पिलाई गई है वहाँ प्रगति के नित नये आयाम गढ़े जाते रहे हैं। हिंदी भाषा सीखने में सहज सरल व वैज्ञानिक दृष्टि से एकदम खरी होने के कारण इसका पठन–पाठन न केवल सुगम है अपितु विदेशी लोग भी इसे थोड़े ही अभ्यास से सीख जाते हैं तो भारतीय लोगों के लिये, जिनकी मातृभाषाएं भी संस्कृत से ही हिंदी की भाँति जन्मी हैं, हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त करना कोई दुष्कर कार्य नहीं है।

हिंदी भाषा–भाषी लोगों की संख्या एक शोध के अनुसार विश्व में सर्वाधिक है। इस संख्या में निरंतर वृद्धि भी हो रही है। विदेशों में इसका चलन, पठन–पाठन व प्रयोग बढ़ता जा रहा है। ऐसे में भारतवर्ष में, अभी भी हिंदी भाषा का अध्ययन–अध्यापन प्राथमिक शालाओं के स्तर पर अनिवार्य न होना न केवल दुःखद अपितु शर्मनाक भी कहा जा सकता है। देश के अधिकतर लोगों द्वारा व्यवहार में लाई जाने वाली भाषा के प्रति सरकारी अवहेलना केवल अंग्रेजी दां उच्च वर्गीय लोगों का षडयंत्र ही है जो बड़े–बड़े संवैधानिक पदों पर केवल अपना व अपने परिवार के बच्चों का वर्चस्व स्थापित करना चाहते हैं तथा जनहित की कद्र नहीं करते। अंग्रेजी भाषा के मानसिक गुलाम बन चुके लोगों के षड्यंत्रों को विफल करते हुए हिंदी भाषा को अपने राष्ट्र की मुखर वाणी के रूप में विकसित करवाने की जिम्मेदारी हर भारतीय की है और हमें इसे ईमानदारी पूर्वक निभाना चाहिए। हम जिस क्षेत्र से भी जुड़े हों, कामकाज में हिंदी भाषा को अपना कर हम राष्ट्र की तरक्की में अपना सार्थक योगदान कर सकते हैं। रूस, जापान, जर्मनी, फ्रांस व चीन जैसे देशों का उदाहरण हमारे सम्मुख है जिन्होंने देश की प्रगति का आधार देश की राष्ट्रभाषा को ही चुना तथा विदेशी भाषा की मानसिक गुलामी कभी भी स्वीकार नहीं की। तुर्की जैसे छोटे से देश ने भी अपनी राष्ट्रभाषा को प्रगति का आधार बनाने के लिए दृढ़ राजनीतिक इच्छाशक्ति के सहारे रातों–रात तुर्की भाषा को पढ़ना–बोलना–सीखना अनिवार्य कर दिया था। भारत में भी हिंदी भाषा और राष्ट्र के उन्नयन के लिऐ ऐसा ही कठोर क़दम उठाये जाने की आवश्यकता आन पड़ी है। कमाल अतातुर्क की ही तरह जब तक कोई भारतीय प्रधानमंत्री हिंदी में पढ़ना–लिखना, सीखना पहली कक्षा से अनिवार्य नहीं करता, तब तक हिंदी के हितों पर कुठाराघात होता ही रहेगा। हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री से हम हिंदी भाषियों का स्पष्ट अनुरोध रहेगा कि वे इस विषय में ठोस क़दम उठा कर देश भर में पहली कक्षा से ही हिंदी की पढ़ाई को सभी विद्यालयों के लिये अनिवार्य घोषित करते हुए देश भर में इसके लिए समान पाठ्यक्रम व समान पाठ्य पुस्तकें लागू कर राष्ट्रीय एकता के लिए ठोस कार्य कर दिखायें।

इस बात की प्रतीक्षा करना व्यर्थ है कि जब तक भारत की समस्त प्रादेशिक सरकारें हिंदी के लिए एक मत होकर सामने नहीं आतीं, हिंदी को सरकारी कामकाज की अनिवार्य भाषा नहीं बनाया जा सकता है। नौ मन तेल भी हमें स्वयं जुटाना होगा और राधा को नाचने के लिए हम ही तैयार करेंगे। भाषाई राजनीति विद्वेष ओर विघटन वादी राजनीति होती है जिसका दुष्परिणाम सारे राष्ट्र के नागरिकों को झेलना पड़ता है। भाषाई दृष्टि से एकता के सूत्र में आबद्ध राष्ट्र ही विदेशी भाषा के चंगुल से मुक्त हो सकता है और इसका सबसे सरल उपाय बचपन से ही राष्ट्रभाषा के शिक्षाण को अनिवार्य करते हुए राष्ट्रीय चेतना से युक्त नागरिकों की खेप तैयार करना है। भारत के स्वतंत्रता सेनानियों का संकल्प अभी भी अपूर्ण है। उनका देखा स्वप्न आज भी फलित नहीं हो पाया है। राजनीतिक दृष्टि से हम भले आज़ाद हुए हों, मानसिक रूप से अब भी अंग्रेज़ी भाषा के गुलाम बने हुए हैं। ये बेड़ियाँ हमें ही काटनी होंगी, ये बंधन हमें ही तोड़ने होंगे और जब देश के सारे बच्चे धाराप्रवाह हिंदी बोलेंगे तो जो राष्ट्रीय चेतना विकसित होगी वह वास्तविक अर्थों में भारत की प्रगति का पथ प्रशस्त करेंगी अतः केन्द्र सरकार को इस दिशा में शीघ्र से शीघ्र ठोस क़दम उठाने चाहिये।

'एक राष्ट्र हो, एक राष्ट्रध्वज, एक राष्ट्र की भाषा।
रहे राष्ट्र में सदा एकता, जन–जन की अभिलाषा।'

33, व्यास कॉलोनी, एअरफोर्स,
जोधपुर–342011

भारतीय संस्कार व गौरव की पहचान– हिंदी

–डॉ. हुकुमचंद राजपाल

हिंदी भारत देश (संघ) की राजभाषा है। इसके प्रचार–प्रसार में भारत सरकार का गृह मंत्रालय और राजभाषा समिति अपना दायित्व निर्वाह अनेक धरातलों पर कर रही है। आज हिंदी विश्व की भाषाओं में अपना निजी आधार अर्थात् वर्चस्व बना चुकी है। यह भारत में सर्वाधिक बोली, समझी और लिखी जाने वाली भाषा है। हिंदी भाषा एक समर्थ भाषा है तथा इसकी लिपि देवनागरी एक प्रामाणिक एवं वैज्ञानिक आधार के कारण विश्व की भाषाओं में अपनी निजी पहचान बनाये हुये है। ऐसे अनेक धरातलों–रूपों में प्रयुक्त होने वाली इस भाषा के सम्मुख अनेक समस्याएं आनी सहज एवं स्वाभाविक है। अतः यह समय की मांग है कि हिंदी भाषा के प्रारम्भिक शिक्षण में नई तकनीक को अपनाया जाए। इस दिशा में कुछ पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों ने सार्थक कार्य किया है। इनमें डॉ. देवयानी भारद्वाज, राम लखन मीणा, डॉ. निर्मल के पटेल ने अपने–अपने ढंग से प्रारम्भिक (प्राइमरी) शिक्षा में हिंदी के पठन–पाठन में कुछ महत्वपूर्ण पद्धतियों को सोदाहरण प्रस्तुत किया है।

'प्रारम्भिक शिक्षा में' हिंदी विषय के सम्यक् प्रतिपादन के लिए हमें इसे कुछ उपशीर्षकों में समझना होगा। सबसे उल्लेखनीय यह है कि हिंदी भाषा के पठन–पाठन में हमें भारतीय संदर्भ में इसे हिंदी भाषी क्षेत्र तथा अहिंदी भाषी क्षेत्रों में प्रारम्भिक शिक्षण में पठन–पाठन की विधि में थोड़ा बदलाव करना होगा। हिंदी भाषी प्रदेश के प्राइमरी शिक्षार्थी हिंदी के व्यवहारिक रूप से अपनी–अपनी मातृभाषा के आधार पर हिंदी के अक्षर बौध को सहज ही समझ सकेंगे। इसी प्रकार अहिंदी भाषी प्रदेशों में प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी के पठन–पाठन में हमें उनकी मातृभाषा की वर्णमाला (अक्षर बोध) के आधार पर समझाना होगा। तमिलनाडु में प्रारंभिक शिक्षा के लिए हमें उनकी मातृभाषा और लिपि को माध्यम रूप में अपनाना होगा। इससे शिक्षार्थी हिंदी के वर्णों को ठीक रूप में बोलकर सीख सकेंगे। यही कारण है कि विद्वानों और शिक्षा शास्त्रियों ने हिंदी भाषा के महत्व को समझते हुए प्रारम्भिक शिक्षा में लिखने की अपेक्षा बोलकर सीखने की विधि पर बल दिया है। हिंदी को विदेशी भाषा के रूप में हमें अंग्रेजी भाषा के वर्णमाला को हिंदी वर्णमाला के आधार पर सहज रूप में समझाना होगा। प्रो. रामलखन मीना ने हिंदी के प्रारम्भिक शिक्षण में विदेशी (रोमन) विद्यार्थियों को उनकी वर्णमाला में एक साथ रखकर समझाने की विधि पर बल दिया है। यथा– क ख ग के साथ हमें K, K H, G, वर्ण एक साथ रखने होंगे इससे प्रारम्भिक शिक्षार्थी सहज ही हिंदी की वर्णमाला का ज्ञान प्राप्त कर सकेगा। विद्वानों ने एक मत से प्रारम्भिक शिक्षा में स्वीकार किया है कि अब लेखन की अपेक्षा शिक्षार्थियों को पहले रोचक–चित्रात्मक आडियो–वीडियो के माध्यम से अक्षर बोध समझाया जाए। इसमें प्रो. देवयानी ने कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं की ओर संकेत किया है। उनका मानना है कि प्रारम्भिक शिक्षा में वर्ण उच्चारण और ध्वनि पर अधिक बल दिया जाना चाहिए। उन्होंने 'पढ़ना कैसे सिखाएं' के लिए कुछ उपशिर्षकों में विभाजित करना चाहा है। यथा–पारम्परिक ध्वनि–वर्ण और समग्र भाषा पद्धति की ऊहापोह, बच्चे की भाषा और स्कूल की भाषा, प्रचलित किन्तु परस्पर–विरोधी पद्धतियाँ, ध्वनि वर्ण पद्धति, समग्र भाषा पद्धति, कौन सी पद्धति ज्यादा उपयुक्त, नई किताबें और संदर्भ पद्धति। नई किताबों और संदर्भ पद्धति के अंतर्गत लेखिका ने कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों की ओर संकेत किया है। वे मानती हैं कि ऐसी स्थिति में एक सन्तुलन की जरूरत महसूस होती है। समग्र भाषा पद्धति बच्चे को भाषा सीखने का स्वाभाविक वातावरण उपलब्ध करवाती है, लेकिन एक स्तर पर ध्वनि वर्णों के साथ सीधे परिचय और अभ्यास की जरूरत से भी इंकार नहीं किया जा सकता। ..... यह पद्धति इस पर ज़ोर देती है कि बच्चों के साथ पढ़ने और लिखने पर 'काम शुरू करने से पहले उनके साथ

रोजमर्रा के जीवन की स्थितियों पर भरपूर बातचीत की जानी चाहिए, ताकि वे खुद को खुलकर अभिव्यक्त कर सकें।'

प्रारम्भिक शिक्षा में अनेक विधियों और नवीन पद्धतियों को शिक्षा शास्त्रियों ने अपने–अपने ढंग से प्रस्तुत करना चाहा है। इसमें विचारणीय है कि जब तक शिक्षकों को हम हिंदी पठन–पाठन की नवीन विधियों से परिचित नहीं करवाएंगे तब तक प्रारम्भिक शिक्षा में हिंदी के पठन–पाठन को शिक्षार्थी कैसे ग्रहण कर पाएगा। इसलिए सबसे पहले भाषा शिक्षकों को हिंदी के अक्षर बोध को सही उच्चारण और नई विधियों से पूरी तरह से परिचित करवाना जरूरी है। इसी तरह हमें यह भी ध्यान में रखना होगा कि शिक्षार्थी अबोध हैं उनका स्तर अभी न के बराबर है, ऐसे में उन्हें रोचक ढंग से चित्रात्मक शैली और तकनीक के आधार पर उन्हें हिंदी की वर्णमाला का ज्ञान कराना होगा। इसमें शिक्षक का प्रभावशाली होना काफी कारगर भूमिका निभाएगा। सहज ढंग और रोचक ढंग से बच्चों को यदि सही उच्चारण में भाषा का ज्ञान कराया जाएगा तो फिर उसे बोलने और लिखने में सुविधा होगी। तभी यह माना जाता है कि प्रारम्भिक शिक्षा में सबसे पहले विद्यार्थियों को रोचक ढंग से खेल–खेल में पढ़ाया जाए ताकि उनमें रुचि बनी रहे। उन्हें भाषा ज्ञान में सुविधा बनी रहे। पढ़ाई को बोझ न समझें और उन्हें अपनी भाषा के गौरव से भी परिचित करवाया जाए।

ऐसे में यदि कुछ व्यय भी होता है तो उसे वहन करना होगा। इसकी संभावनाओं को भी ध्यान में रखना होगा। किसी भी विधि को यदि अपनाया जाता है तो उसमें अनेक प्रकार की कठिनाईयाँ तो आएंगी ही, इस प्रकार की चुनौतियों का सामना करना होगा। तभी हिंदी भाषा के शिक्षण को सही दिशा और आधार मिल सकेगा। इस प्रकार के कार्यों में अनेक बार भाषा विरोध का स्वर भी सुनाई देता है। इसका विरोध रचनात्मक धरातल पर न होकर राजनीतिक कारणों से है। कुछ लोगों को अशंका है कि हिंदी भाषा के वर्चस्व से अहिंदी भाषी लोगों का महत्व कम हो जाएगा, पर यह धारणा अब प्रायः निर्मूल सिद्ध हो चुकी है। हिंदी का सरलीकृत व्यावहारिक रूप अब सामने आ चुका है। यह भाषा अपने समय की आवश्यकताओं के सर्वथा अनुरूप है। पिछले कुछ समय से हिंदी को शिक्षा माध्यम की भाषा के रूप में विकसित करने का प्रयास हो रहा है। वस्तुतः किसी भी भाषा का यदि सही रूप में विकास है तो उसे प्रारम्भिक शिक्षा में कार्यान्वित किया जाना अत्यावश्यक है। वस्तुतः शिक्षा का मूलाधार उसके प्रारम्भ में ही होता है। यदि नींव मजबूत है तो इमारत को किसी प्रकार का खतरा नहीं हो सकता। हिंदी भाषा का पठन–पाठन एवं शोध अब भारत के साथ ही विदेशों में भी हो रहा है। इसका सबसे बड़ा आधार उसका बाजार की भाषा बनना है। अब हिंदी भाषा अपने समय और आवश्यकताओं के अनुरूप विस्तार की ओर उन्मुख है। ऐसे में इसके सम्मुख कुछ बातें विचारणीय हैं। प्रायः ऐसा सुनने में आता है कि हिंदी भाषा क्लिष्ट (दुरुह) है, इसकी शब्दावली भारी भरकम है। अब यह धारणा भी निर्मूल सिद्ध हो चुकी है। हिंदी का प्रयोग दूर संचार सूचना प्राद्योगिकी में सहज हो रहा है। हिंदी के प्रयोग पर विचार जितना संजीदगी से होना चाहिए था, नहीं हो पाया है। प्रारम्भिक शिक्षा में हिंदी के पठन–पाठन की सामग्री के प्रति अब कुछ भाषा शास्त्रियों ने कुछ विधियों की ओर संकेत किया है और इसमें अनेक प्रकार के प्रयोग किए जा रहे हैं।

हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के पक्षधर–आन्दोलनकारी से जब पूछा जाता है कि आप अपनी भाषा का परचम हाथ में लिए है, पर आपके बच्चे प्रारम्भिक शिक्षा में किस भाषा का प्रयोग कर रहे हैं? ऐसे में सभी का उत्तर होता है अंग्रेजी भाषा। इससे बड़ी विचित्र स्थिति क्या होगी। हिंदी भाषा को प्रारम्भिक शिक्षा में सही रूप में न अपनाने पर अनेक बार ध्यान में आया है कि विद्यार्थियों को इसका सम्यक ज्ञान नहीं हो पाता। प्रारम्भिक शिक्षा में हिंदी के पठन–पाठन (पढ़ाई) की घोषणा मात्र से कार्य सिद्ध नहीं होगा। इसे योजना बद्ध आधार प्रदान करना होगा। इस संबंध में हम कुछ तथ्यों को स्पष्ट करना चाहेंगे। इसमें नयी पाठ्य पुस्तकें विद्यार्थियों के स्तर और रुचि को देखना होगा। सही उच्चारण के द्वारा चित्रात्मक शैली और नवीन पद्धति को अपनाना चाहिए। इसमें भाषा ज्ञान के लिए शिक्षकों को ईमानदारी से अपना दायित्व निभाना चाहिए। काफी कुछ अध्यापक के पढ़ाने के ढंग पर भी निर्भर करता है। उसका उच्चारण, उतार–चढ़ाव, भाव–भंगिमा रोचक प्रस्तुति विद्यार्थियों को अधिक रुचिकर प्रतीत होती है। वे सहजता में भाषा के मर्म को आत्मसात् कर लेते हैं।

इस विधि के लिये जैसा कि संकेत किया जा चुका है काफी कुछ अतिरिक्त साधन जुटाने होंगे। हम यदि भाषा को व्यवहार रूप में समझाने का प्रयास करेंगे तो बाद में इस भाषा का विस्तार सहज स्वभाविक रूप में होने लगेगा।

यह सही है कि सरकारी अध्यादेश, नियम की घोषणा का अपना महत्व है, पर इसकी कार्यान्वयन (इसे पूरे मनोयोग से लागू करना) जितना महत्वपूर्ण है उतना उसे अमलीजामा प्रदान करना और उसे सम्यक् प्रारूप के साथ प्रारम्भिक शिक्षा के अनुरूप धरातल प्रदान करना। इसमें एक वातावरण तैयार किया जाना चाहिए। शिक्षा विशेषज्ञों को मिल–बैठ कर निष्ठापूर्वक प्रारम्भिक शिक्षा में हिंदी भाषा के पठन–पाठन के स्तर को ध्यान में रखते हुए इसका प्रारूप तैयार करना होगा। इन्हें विद्यार्थियों की रुचि और स्तर को भी ध्यान में रखना होगा। आरम्भ की पढ़ाई हिंदी विषय और माध्यम कैसे रोचक आकर्षक ढंग से हो कि बच्चे इसे बोझिल न समझें, उसके स्तर को ध्यान में रखें। बच्चों को समझाने के लिए नई तकनीक, भाषा प्रयोगशाला, वीडियो, प्रोजेक्टर आदि सामग्री का प्रयोग करना चाहिए। यहाँ एक बात और भी विचारणीय है कि विद्यालय का भाषा शिक्षण में महत्व तो है ही, पर बच्चा अपने घर परिवार, परिजनों में अपनी भाषा बोलने का अभ्यास करते–करते सीख लेता है। उसे मातृभाषा का सामान्य परिचय सहज ही मिल जाता है। इसलिए भाषा शास्त्रियों और शिक्षाविद्ो ने घर परिवार को एक भाषा सीखने का महत्वपूर्ण संस्थान माना है। यह हम अपने अनुभव के आधार पर कह सकते हैं। मातृभाषा और राष्ट्रीय संकल्प की भाषा हिंदी को बच्चा बिना किसी प्रयत्न के सहज रूप में बोलने का अभ्यास कर लेता है। इसी आधार पर नई खोज करने वाले विद्वानों ने भाषा की प्रारम्भिक शिक्षा को मौखिक रूप में सिखाने की विधि को विशेष महत्व दिया है। वे मानते हैं कि बच्चा हिंदी की वर्णमाला को जब अपने पूर्व ज्ञान के आधार पर समझ लेता है तो फिर उसे लिखने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती।

भाषाः संस्कार और गौरव की सार्थक पहचान–हिंदी भारत की सिर्फ मातृभाषा ही नहीं इसके साथ ही वह हमारे संस्कार, राष्ट्र संकल्प और गौरव की सार्थक पहचान की एक सशक्त अभिव्यक्ति का माध्यम है। हमें अपनी मातृभाषा और राजभाषा पर सदैव गर्व होना चाहिए। हम स्वयं हिंदी में बोलने और लिखने का संकल्प लें और इसे अपने बच्चों को सम्मान आदर से सीखने समझने की प्रेरणा दें। हिंदी के वर्चस्व में ही हमारे राष्ट्र का उत्थान है। हिंदी किसी भी अन्य भारतीय भाषा के प्रति सदैव उदार रही है। हिंदी प्रदेशों के साथ अहिंदी भाषी अधिकांश प्रदेशों में हिंदी का प्रचार प्रसार रचनात्मक धरातल पर हो रहा है। सरकार विशेषकर गृह मन्त्रालय इस भाषा के विकास के लिए प्रयत्नशील है। हमें यह भी ध्यान में रखना होगा कि हिंदी व्यवहार में अनेक रूपों में प्रयुक्त हो रही है। इसका राजभाषा स्वरूप सर्वविदित है। मानक साहित्यिक रूप और बाजार, व्यापार भाषा को एक रूप में नहीं समझना चाहिए।

इस भाषा के विकस में काफी कुछ महत्वपूर्ण किया जा रहा है, पर अभी काफी कुछ करणीय है। यदि हम हिंदी भाषा को प्रारम्भिक रूप से कार्यान्वित करेंगे तो अन्य विषयों के माध्यम के रूप में हिंदी भाषा अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर पायेगी। यह सही है कि हिंदी भाषा अपनी वैज्ञानिक प्रामाणिकता और ग्रहणशीलता के आधार पर अपने समय की आवश्यकताओं के अनुरूप पूर्ति कर रही है। इसमें माध्यम भाषा बनने की पूर्ण क्षमता है। आवश्यकता इस बात की है कि हमारी नीति और नियत में समता हो। हिंदी का प्रारम्भिक शिक्षण नई तकनीक, प्रविधि और माध्यम में हो। इस भाषा के प्रति इसे सीखने वालों में किसी प्रकार की हीनता का भाव न हो। इसमें वे गर्व का अनुभव करें तो कोई कारण नहीं कि हिंदी भाषा उच्चतम कक्षाओं में पठन–पाठन के साथ माध्यम का मूलाधार ग्रहण करे।

अतः हम कह सकते हैं कि प्रारम्भिक शिक्षा में हिंदी की महत्ता को समझना होगा। संभावनाओं के साथ ही इसे कार्यान्वित करने में कुछ चुनौतियां आनी भी स्वाभाविक हैं। हमें योजनाबद्ध रूप में हिंदी भाषा को जहाँ शिक्षण में लाना है वहाँ उसके शिक्षा माध्यम को भी विकसित करना होगा। इससे संबंधित योजनाएँ रचनात्मक धरातल पर बन रही है, कुछ सार्थक कार्य हुए हैं और शिक्षाविद् इस बदलाव को गहन धरातल पर अनुभव कर रहे हैं।

गंगा सदन, 451, अर्बन अस्टेट, फेज–1,
पटियाला–147002

प्रारंभिक शिक्षा हिंदी में : संभाव्यता की दिशाएँ

प्रो. टी. आर भट्ट

भारत बहुभाषी देश है जहाँ राज्यों की मातृभाषाएँ अलग–अलग हैं। दक्षिण की भाषाएँ द्रविड परिवार की होते हुए भी संपर्क, संस्कार, आदान–प्रदान के कारण हिंदी के निकट हैं और विभिन्न भाषाओं की मूल शक्ति में खास अंतर नहीं है। राजनीतिक कारणों से हिंदी और दक्षिण की भाषाओं के बीच विभिन्नता पैदा की जा रही है। उत्तर भारत की अधिकतर भाषाओं और द्रविड परिवार की भाषाओं जैसे कन्नड, मलयालम, तमिल, तेलुगु की मूल प्रेरणा संस्कृत ही है। संस्कृत से ही हिंदी का विकास हुआ है। इसी तरह कन्नड, मलयालम, तमिल आदि का विकास संस्कृत के संपर्क, संस्कार एवं प्रभाव से हुआ है। इस अर्थ में हिंदी दक्षिण भारतीयों की दूसरी मातृभाषा कही जा सकती है। इतना ही नहीं, आज हिंदी दक्षिण के कई महानगरों के वाणिज्य एवं संपर्क की भाषा बन गयी है। दक्षिण के राज्यों में हिंदी को आम लोगों ने प्यार से स्वीकार किया है। इसीलिए हिंदीतर प्रदेशों में हिंदी खूब विकसित हो रही है। आने वाले वर्षों में देश के अंदर विभिन्न भाषाओं के बीच खूब आदान–प्रदान होने से हिंदी दक्षिण की दूसरी मातृभाषा का स्थान अवश्य ग्रहण करेगी।

कन्नड के महाकवि कुवेंपु को बचपन से ही कविता करने की आदत थी। लेकिन वे उस समय अपनी मात्भाषा को छोड़कर अंग्रेजी में कविता कर रहे थे। उन्होंने सोचा था कि अंग्रेजी में कविता करने से समाज में अपना गौरव बढ़ जाता है। इससे और भी प्रेरित होकर वे अंग्रेजी में कविता करने लगे। एक बार उनके कॉलेज में प्रख्यात ऐरिश कवि जेम्स कासिन्स पधारे थे। कुवेंपु ने अपनी कविताएँ उनके सामने रखीं। उन्हें देखकर एरिश लेखक ने कुवेंपु से कहा ' "आप अपनी कविता मातृभाषा कन्नड में क्यों नहीं लिख रहे हैं? मातृभाषा में लिखने से आप अपनी भावनाएँ प्रभावकारी रूप में प्रकट कर सकेंगे।" लेखक की बात सुनकर कुवेंपु को बड़ी ठेस पहुँची। लेकिन उनके सुझाव के अनुसार उन्होंने आगे कन्नड में लिखना आरंभ किया। आगे उन्होंने अपनी मातृभाषा कन्नड में खूब लिखा और अंत में 'श्रीरामायणदर्शन' शीर्षक महाकाव्य लिखकर खूब प्रसिद्धि पायी। यह है मातृभाषा की गरिमा जिसके कारण कुवेंपु कन्नड़ के महान कवि बने।

आज के इस तकनीकी युग में मातृभाषा का स्वरूप बदल रहा है। आज मातृभाषा की नयी व्याख्या हो रही है। माँ से बच्चे बोलना सीखते हैं, उसके बाद पूरे परिवार के लोगों से बच्चे भाषा सीखते हैं, तब भाषा का स्वरूप थोड़ा बदलता है। फिर बाहरी समाज की भाषा को बच्चे स्वीकार करते हैं। धीरे धीरे बच्चे आजू–बाजू की भाषा को स्वीकार करते हैं। वह बोली बच्चों के लिए दूसरी मातृभाषा बन जाती है। कन्नड में ऐसे लेखक कई हुए हैं जिनकी मातृभाषाएँ दो हैं। परिवार के अंदर बोली जानेवाली भाषा एक है और दूसरी है घर के आसपास, गली, गाँव, शहर आदि में बोली जाने वाली भाषा। कन्नड के प्रसिद्ध कवि

दत्तात्रय रामचंद्र बेंद्रे की मातृभाषा मराठी है (परिवार के अंदर) उनकी दूसरी भाषा है कन्नड जिसे गली या गाँव के बहुसंख्यक बोलते थे। कवि बेंद्रे आरंभ से ही अपनी मातृभाषा कन्नड में खूब काव्य लिखकर महान् कवि बन गए, इसी तरह मास्ति वंकटेश अय्यंगार के घर की भाषा तमिल और गली की भाषा कन्नड है। उन्होंने भी कन्नड को दूसरी मातृभाषा के रूप में स्वीकार कर खूब उसमें साहित्य–सृजन किया है। इस तरह मातृभाषा का स्वरूप आज विस्तृत होता जा रहा है।

कन्नड में और एक प्रसिद्ध कथाकार हैं – यशवंत चित्ताल। (जिनकी मातृभाषा रही है कोंकणी। परिवार में, अपने सगे संबंधियों के बीच में कोंकणी का व्यवहार, लेकिन गली, गाँव के अन्य जन–समुदाय के साथ कन्नड भाषा में खूब व्यवहार। आम लोगों से कन्नड सीखकर उसे अपनी दूसरी मातृभाषा के रूप में अपनाकर उसी में जीवन के अंत तक खूब लिखा और वे कन्नड के श्रेष्ठ कथाकार कहलाये। यशवंत चित्ताल का जन्म कर्नाटक के तटवर्ती प्रदेश अंकोला में हुआ था। वहीं उनकी आरंभिक शिक्षा कन्नड़ माध्यम वाले स्कूल से संपन्न हुई थी। मैट्रिक तक वहीं स्कूल में दूसरी मातृभाषा कन्नड में शिक्षा पायी। वे फिर डिग्री के बाद बंबई चले गए। वहाँ से विदेश गए, बड़े वैज्ञानिक बने। बड़े केमिस्ट बनकर खूब और बढ़िया लिखकर उन्होंने कन्नड साहित्य को समृद्ध किया। कन्नड में यशवंत चित्ताल एक ऐसे लेखक रहे हैं जो स्कूली शिक्षा के बाद बाहर रहे, अन्य भाषा प्रांत में रहे। लेकिन उन्होंने अपनी प्रारंभिक शिक्षा माध्यम कन्नड (दूसरी मातृभाषा) में की थी, इसी वजह से उनकी प्रतिभा साहित्य एवं विज्ञान में काफी चमकी। विज्ञान के छात्र होकर पोलिमार टैक्नालॉजी में परिणति पायी। इसी तरह कन्नड के एक प्रसिद्ध कवि विनायक कृष्ण गोकाक की आरंभिक शिक्षा अपनी मातृभाषा कन्नड में हुई। बाद में वे अंग्रेजी का अध्ययन कर, अपनी मातृभाषा कन्नड के महान कवि बन गए। इसी तरह भारत के बड़े वैज्ञानिक भारतरत्न सी.एन.आर. राव की आरंभिक शिक्षा मातृभाषा में संपन्न हुई थी। इससे स्पष्ट है कि व्यक्ति की प्रतिभा के विकास के लिए मातृभाषा का योगदान बहुत ही महत्वपूर्ण होता है।

भारत में हिंदी तो सर्वाधिक लोगों की मातृभाषा है। इसलिए हिंदी प्रदेशों में मातृभाषा के माध्यम से आरंभिक शिक्षा की व्यवस्था कठिन नहीं है। स्वतंत्रता के बाद के वर्षों से हिंदी में आरंभिक शिक्षा दी जा रही है। बड़े बड़े शहरों को छोड़कर बाकी जगह हिंदी में आरंभिक शिक्षा की अच्छी व्यवस्था रही है। उसके अच्छे परिणाम निकले हैं। हिंदीतर प्रदेशों में हिंदी की जगह वहाँ की भाषाएँ आरंभिक शिक्षा का माध्यम बहुत सालों से बन रही है। आज दक्षिण के राज्यों में अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम के रूप में खूब अपनाई गई है और लगभग प्रांतीय भाषाओं में शिक्षा देने वाले स्कूल बंद होते जा रहे हैं। इससे कन्नड, मलयालम, तेलुगु तमिल आदि भाषाओं में लिखने वाले अच्छे लेखकों की संख्या घटती जा रही है। आज इन राज्यों में मातृभाषा–शिक्षा का प्रसार खूब किया जा रहा है। लेकिन निजी स्कूलों की संख्या बढ़ती जा रही है। गाँव–गाँव में प्रांतीय भाषाओं के स्कूल बंद करके अंग्रेजी माध्यम के स्कूल खोले जा रहे हैं। औद्योगीकरण, विकास की बात को लेकर परोक्ष रूप में अंग्रेजी को बढ़ावा दिया जा रहा है। यह तेजी हिंदी प्रदेशों में इतनी ही है।

वास्तव में यह बताया जाता है कि "हर भाषा की दुगुनी प्रकृति है। भाषा हमारी भावनाओं, विचारों को प्रकट करने का माध्यम है। दूसरी यह संस्कृति, संस्कार, आदत आदि की वाहक है।" अंग्रेजी तो किसी की प्रथम भाषा या मातृभाषा नहीं है। हमारे देश में हर

व्यक्ति की दो मातृभाषाएँ जरूर हैं जो संस्कृति का प्रामाणिक, सच्ची वाहक है। मातृभाषा के द्वारा लोक साहित्य, कहावत, मुहावरे, दंतकथाएँ आदि का अध्ययन होता है। इसी कारण से मातृभाषा को जीवंत रखना आज के संदर्भ में आवश्यक है। जो मातृभाषा समृद्ध है, संपन्न है उसे आश्रय देकर जिंदा रखना आज के युग में जरूरी है। यह काम केवल सरकार से नहीं हो पाता। पाठकों से संभव है और शिक्षा का माध्यम बनाने से वह भाषा विकसित होती है। अभी दक्षिण की शास्त्रीय भाषाओं कन्नड, तमिल, तेलुगु आदि में कालजयी रचनाएँ नहीं आ रही हैं। आज प्रतिभाशाली छात्रों का माध्यम अंग्रेजी होने से इन भाषाओं का संस्कार उन्हें नहीं मिलता और प्रतिभाशाली छात्रों के न होने से भाषा के विकास में गति कम हो जाती है। इस तरह भारतीय शास्त्रीय भाषाएँ गरिमा खोने की स्थिति में है। किसी भी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने से उसका सही दिशा में विकास होता है। कन्नड़ के कथाकार यशवंत चिताल ने अपनी मातृभाषा कन्नड़ शैली को नया रूप दिया है, उसमें नई ताकत भर दी है। बंबई में रहकर उन्होंने एक नयी कन्नड शैली का निर्माण किया और उसमें नये नये शब्द जोड़कर उसकी ताकत बढ़ा दी है। इसी तरह हिंदी में भी यशवंत चिताल जैसे कई लेखक हैं जिन्होंने हिंदी को खूब परिमार्जित किया है।

वास्तव में हिंदी आज भारत की एक विकसित भाषा के रूप में उभर कर आ रही है। दक्षिण हो या उत्तर सब तरफ लोगों ने इसे स्वीकृति दी है। हिंदी भारत की सभी भाषाओं के साथ आसानी से जुड जाती है। देश की राजभाषा एवं संपर्क भाषा होने के नाते इसका अभिव्यक्ति–कौशल बढ़ गया है। देश के कई राज्यों की राजभाषा होने के साथ उन राज्यों की यह पहली और दूसरी मातृभाषा भी है। ज्ञान की सभी शाखाओं में इसका उपयोग आज हो रहा है। लेकिन अंग्रेजी के मोह के कारण हिंदी को आरंभिक स्तर पर पूर्णतः अपनाने की दिशा में कई प्रकार की बाधाएँ उपस्थित हो रही हैं। वैश्वीकरण के प्रभाव के कारण अंग्रेजी को ही महत्व दिया जा रहा है। अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा देना एक फैशन हो गया है। इस दिशा में सरकार, गैर सरकार की संस्थाएँ बहुत कुछ कर सकती हैं।

हिंदी, शिक्षा का माध्यम केवल हिंदी प्रांतों में ही बन सकती है। हिंदीतर प्रांतों में उसे स्वीकार करना उतना आसान नहीं है और उचित भी नहीं है, क्योंकि हर संपन्न भाषा की गरिमा होती है। उसका राष्ट्रभाषा के विकास में योगदान होता है। इसीलिए हर मातृभाषा को सम्मान देते हुए हिंदी को अपनी प्रांतों की आरंभिक शिक्षा–व्यवस्था में महत्व देना चाहिए। इससे देश में भाषागत समरसता कायम रहेगी। हिंदी राष्ट्रभाषा के रूप में संविधान में स्वीकृत नहीं है। लेकिन देशभर के सामान्य जन–समुदाय ने उसे स्वीकार कर उसे राष्ट्रभाषा का स्थान दिया है। हिंदी अन्य प्रांतीय भाषाओं के साथ आदान–प्रदान द्वारा विकसित होकर भारतीय भाषाओं का प्रतिनिधित्व समर्थ रूप में कर सकती है। भारत की प्रांतीय भाषाओं में जो अच्छी कृतियाँ निकलती हैं, उनका हिंदी अनुवाद किया जाना चाहिए। इससे भारतीय साहित्य समृद्ध होता जाएगा। आज के संदर्भ में अनेकता में एकता ढूँढने की बढ़ी आवश्यकता है। इस दृष्टि से हिंदी देश में अलगाववादी विचारधारा को समाप्त कर सकती है। देश में अपनी अपनी मातृभाषा को महत्व देकर स्कूल में उसी माध्यम से पढ़ाएँगे तो अवश्य आनेवाली युवा पीढ़ी में सोचने का स्तर बढ़ेगा और वे अपनी भारतीय अस्मिता को सही ढंग से समझ पायेंगे।

दक्षिण के हर प्रांत में लोगों की मातृभाषा भिन्न भिन्न है। आजकल वहाँ हर राज्य में मातृभाषा में शिक्षा देने की व्यवस्था पर जोर दिया जा रहा है। विशेष

रूप में गाँव में यह व्यवस्था अब भी सरकारी स्कूलों में प्रचलित है। आजकल सरकारी स्कूलों में अंग्रेजी माध्यम वाले निजी स्कूलों से बेहतर समर्थ शिक्षकों की नियुक्ति हो रही है। सरकारी स्कूलों में मुफ्त में शिक्षा मिलने से लोग वहाँ अपने बच्चों को दाखिल करवायेंगे। अतः सरकार को चाहिए कि मातृभाषा माध्यम वाले स्कूलों को ज्यादा खोलकर, निजी संस्थाओं को भी इसी माध्यम से स्कूल चलाने के लिए अनुमति देनी चाहिए। इस तरह करने से मातृभाषा–शिक्षण की व्यवस्था में गति आयेगी।

हिंदी कई राज्यों की मातृभाषा होने से उन राज्यों में मातृभाषा शिक्षण का ज्यादा प्रचार–प्रसार एवं प्रोत्साहन देने की बड़ी आवश्यकता है। हमारी अंग्रेजी मानसिकता को हटाने की दिशा में योजनाएँ बनानी चाहिए। आजकल हिंदी शिक्षा का माध्यम बनने के लिए बड़ी सशक्त भाषा हो गयी है। हिंदी में आज तकनीकी शिक्षा पाने के लिए खूब सामग्री तैयार की गई है। हम इतने दिनों तक पुरानी पद्धति के प्रति आदी हो गए हैं। राज्य सरकार को इस मानसिकता को बदलने के लिए कई योजनाएँ बनानी चाहिए। प्रोत्साहन एवं संवाद के माध्यम से यह कार्य और भी सरल होगा। केंद्रीय विद्यालयों में इस प्रकार की सुविधा होनी चाहिए। भविष्य में केंद्रीय विद्यालयों में मातृभाषा शिक्षा की व्यवस्था आरंभ करने से शिक्षा का स्तर बढ़ेगा और बाकी शिक्षा–संस्थाएँ इसका अनुसरण करेंगी।

हिंदीतर प्रदेशों के स्कूलों में हिंदी को शिक्षा–माध्यम बनाना उतना सरल कार्य नहीं है। लेकिन कुछ राज्यों (जैसे– कर्नाटक, महाराष्ट्र, गोवा, हैदराबाद, तेलंगाना) में हिंदी आजकल धीरे धीरे दूसरी भाषा के रूप में स्थान पा रही है। इन राज्यों में स्वतंत्रता के बाद कुछ हिंदी माध्यम स्कूल खोले गए थे।

इस सदी में यह देखा जा सकता है कि भाषाभिमान के बदले भाषा की उपयोगिता पर अधिक जोर दिया जा रहा है। किसी भी राज्य का एकमात्र भाषा परिवार बहुत वर्षों तक उसी प्रदेश में रह नहीं सकता। नौकरी के लिए परिवार बंट रहा है। एक ही परिवार के लोगों द्वारा अलग अलग भाषा बोलने की स्थिति बढ़ रही है। इसलिए एक परिवार के लोग अपनी पैतृक मातृभाषा को छोड़कर दूसरी मातृभाषा को अपना रहे हैं। ऐसी स्थिति में दक्षिण में मातृभाषा की स्थिति में काफी परिवर्तन आ रहा है और कुछ राज्यों में हिंदी को लोग मन से अपना रहे हैं। केरल जैसे राज्यों में हिंदी दूसरी भाषा का स्थान ले रही है।

आज हिंदीतर राज्यों में यह भावना बढ़ रही है कि हिंदी में अध्ययन करने से रोजगार की अधिक संभावना है। आज इन राज्यों में मातृभाषा में उद्योग का आकार कम होता जा रहा है। अच्छे अवसर को कोई खोना नहीं चाहता। अतः केंद्र सरकार की शिक्षा–नीति में प्रोत्साहन बढ़ाने के लिए बदलाव लाना चाहिए। आनेवाले वर्षों में हिंदी अंग्रेजी के जैसी एक समर्थ तकनीकी भाषा के रूप में उभरेगी और लोगों को अपने आप उसे स्वीकार करना पड़ेगा, चाहे हिंदी प्रदेश हो या हिंदीतर प्रदेश। वर्षों पहले अंग्रेजी हमारी शिक्षा का माध्यम नहीं थी, फिर भी उसकी ताकत और रोजगार के प्रलोभन से उसे हमने अपनाया, इसी तरह इसमें कोई संदेह नहीं कि आनेवाले वर्षों में अंग्रेजी के स्थान पर हिंदी को माध्यम के रूप में देश के लोग अवश्य स्वीकार करेंगे।

पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
कर्नाटक विश्वविद्यालय,
6 क्रॉस, कल्याणनगर, धारवाड (कर्नाटक) 580007

हिंदी भाषा का प्राथमिक स्तर पर अध्यापन एवं कार्यालयीन स्तर पर प्रयोगगत समस्याएँ

–प्रो. डा. शंकर बुंदेले

भारतवर्ष बहुभाषी राष्ट्र है। विश्व के मानचित्र पर बहुआयाम संस्कृति प्रधान भारतवर्ष निश्चित ही अपनी भाषागत विविधताओं के लिए ख्यातिनाम रहा है। विद्वतजन भारत को भाषा और जाति दृष्टि से सबसे बड़ा अजाबघर मानते हैं।

यह सत्य है कि उत्तर भारत में हिंदी भाषा का अध्यापन कार्य प्रथम भाषा के रूप में अनवरत जारी है। हिंदी यहाँ की जीवनशैली और संस्कृति रही है। यहाँ हिंदी की विविध बोलियाँ समृद्ध होकर एक विशालकाय वटवृक्ष बन गयी हैं। इसका कारण हिंदी भाषा की वर्गीकृत समरुपता ही रही है। हिंदी का अध्यापन तकनीकी दृष्टि से सहज एवं मातृभाषा होने के कारण सुगम हुआ है तथा व्याख्यात्मक पद्धति एवं विश्लेषणात्मक अध्यापन पद्धति को इसके लिए अंगीकार गया है।

इसके विपरीत दक्षिण भारतीय क्षेत्र में हिंदी भाषा का अध्यापन कार्य एवं भारतीय दक्षिण भाषाओं के वर्ग से यथा तेलगू, तमिल, कन्नड, उडिया आदि विषमरुपता रखने के कारण असहज एवं अनुवादात्मक अध्यापन पद्धति का अवलंब कर, प्राथमिक स्तर पर निरंतर अध्यापन जारी रहा है। इस कार्य में हिंदी प्रचारक संस्थाओं का भी बहुमूल्य योगदान अवश्य ही प्राप्त हुआ है, जो राजभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार एवं अध्यापन के क्षेत्र में अभिनंदनीय सिद्ध हुआ है।

शिक्षा शास्त्र की दृष्टि से हिंदी का उत्तर एवं मध्य भारत में प्रथम भाषा के रूप में अध्यापन आगमन–निगमन की मिश्रित अध्यापन पद्धति को प्रोत्साहित करता रहा है। जबकि दक्षिण भारत में हिंदी का अध्यापन निगमन–आगमन अध्यापन पद्धति के संमिश्र स्वरूप को निर्धारित करता है। शिक्षक को मातृभाषा एवं प्रथम भाषा के अध्यापन के उद्देश्य–ज्ञान अभिरुचि, कौशल्य, उपयोजन आंकलन आदि उद्देश्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त करने के लिए सफलतम तकनीकी अध्यापन सूत्रों यथा ज्ञात से अज्ञात का अवलम्बन करना होता है, जबकि तुलनात्मक दृष्टि से दूसरे या तीसरे दर्जे की भाषा के रूप में हिंदी का अध्यापन–अध्ययन करना अधिक कौशल्यपूर्ण एवं कष्ट साध्य कार्य होता है। जिसमें निश्चित अध्यापन तंत्र में विविध चुनौतियों का सामना करना होता है। जैसे भाषा के ज्ञान एवं आकलन के लिए अनुवाद का प्रयोग करना होता है। शिक्षक को अध्यापन के लिए विद्यार्थियों की मातृभाषा एवं हिंदी दोनों पर प्रभुत्व प्राप्त करना होता है। साथ ही आगमन अध्यापन पद्धति से सुरुचिपूर्ण अध्यापन कार्य करना इतना सहज नहीं होता।

इसी प्रकार अब कम्प्यूटर पर हिंदी के विविध साफ्टवेअर्स बन जाने के कारण इस समस्या का भी कुछ हद तक समाधान संभव हो सका है। फिर भी हिंदी का प्रारंभिक स्तरपर अध्यापन हो या कार्यालयीन स्तर पर, उसका अनुप्रयोग उसके प्रति विद्यार्थी एवं कर्मचारी वर्ग की अपरिवर्तित मानसिकता ही प्रमुख अवरोध सिद्ध होती है। इस दृष्टि से इस आलेख में हमने प्राथमिक स्तर पर हिंदी अध्यापन और कार्यालयीन स्तर पर हिंदी की प्रयोगगत समस्याओं का विहंगावलोकन कर, उनका निदान प्रस्तुत किया है, ताकि उनके समाधान का सकारात्मक मार्ग निकाला जा सके और हिंदी के अध्यापन कार्य को सुगम बनाकर उसका प्रशिक्षण, प्रचार–प्रसार कार्यालयीन स्तर पर होकर, उसे संविधान में दिये गये राजभाषा के पद पर आसीन कराना सुनिश्चित हो सके।

'भाषा' मानवीय मुख यंत्र से निकलने वाली विशिष्ट ध्वनि को कहते हैं। भाषा आत्मप्रकटीकरण का सशक्त माध्यम होती है। यों तो प्रारंभिक अवस्था में जब भाषा अपने समृद्ध अवस्था को प्राप्त नहीं कर सकी थी,

तो सांकेतिक रुप में प्रयुक्त होती थी, उसकी उपदेयता भी आज की समृद्ध भाषा की भाँति ही थी। निज़ाम शाह 'निज़ाम' ने इसी सांकेतिक भाषा की महत्ता का उजागर करते हुए यों कहा है–

'कहा क्यों दोस्तों तुमने, खुदा जाने वो क्या समझे?

हमारा हाल उन पर, आप ही इज़हार हो जाता।'[1]

फिर भी भाषा की सार्थकता अभिव्यक्ति में ही होती है। भाषा की परिभाषा में अपनी इन काव्य–पक्तियों में अभिव्यक्त करना चाहूँगा, ताकि भाषा विषयक संकल्पना को पूर्णरुपेण मूर्तगत किया जा सके–

'भाषा' विचार अभिव्यक्ति का माध्यम होती है।

'भाषा' आत्म अभिव्यक्ति का साधन होती है।

'भाषा' से संपन्न होती हैं, अंतक्रियाएं सारी,

'भाषा' सांस्कृतिक संस्कारों का परिमार्जन होती है।'[2]

अब हम राष्ट्रभाषा व राजभाषा इन दो शब्दों की संकल्पनाओं पर प्रकाश डालना चाहेंगे। डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी ने हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के चौपनवें अधिवेशन के सभापतित्व के भाषण में, इन दो अवधारणाओं को निम्न रुप में परिभाषित किया था। –

'राष्ट्रभाषा– राष्ट्रभाषा का संबंध राष्ट्र की निजता या सांस्कृतिक चेतना से है, जो उसकी अपनी पहचान से है। इसके पीछे जातीय अस्मिता काम करती है।'[3]

राजभाषा–'राजभाषा देश को राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से एकसूत्रता में बाँधने वाली प्रशासनिक प्रयोजनों की भाषा है।[4]

इस प्रकार हिंदी की राष्ट्रभाषा की यात्रा बहुत पुरानी है। हमारे स्वाधीनता संग्राम सेनानी एवं महापुरुषों ने प्रथम स्वाधीनता संग्राम सन 1947 के विफल होने के कारणों पर गंभीरतापूर्वक विचार मंथन किया था। उसकी विफलता के प्रमुख कारणों में एक प्रमुख कारण 'संपर्क भाषा' का अभाव रहा था। बंगलाभाषी पं. केशवचंद्र सेन भी मानते थे कि हिंदी को भारत की एक भाषा स्वीकार कर लिया जाये तो सहज ही एकता संपन्न हो सकती है। अंतः उन्होंने यह मंतव्य व्यक्त किया था कि– 'यदि हमें एक स्वतंत्र भारत की संकल्पना को मूर्त करना है तो तत्काल हिंदी को 'राष्ट्रभाषा' के रुप में स्वीकार कर लेना होगा, जिससे वह संपर्क भाषा के रुप में प्रयोग में लायी जा सकेंगी और हमारा स्वाधीनता संग्राम सफल हो सकेगा,'[5] ठीक ऐसा ही हुआ है।

हिंदी हमारी स्वाधीनता संग्राम की भाषा बनकर जन–मन को जागृत करने का अनवरत कार्य करती रही, यह ऐतिहासिक सत्य है। राष्ट्रकवि एवं स्वाधीनता सेनानी मैथिलीशरण गुप्त ने अपनी 'भारत–भारती' काव्यकृति में, जो स्वाधीनता संग्राम के दौरान सन् 1912 में लिखी थी, स्पष्ट अभिव्यक्त किया है–

'हिंदी का उद्देश्य यही है, भारत एक रहे अविभाज्य,

यों तो रुस और अमेरिका जितना है, उसका गणराज्य।'[6]

अतः हिंदी आजादी के पूर्व ही हमारी 'राष्ट्रभाषा' बन चुकी थी। परिणामतः हमारे देश को 15 अगस्त 1947 को आजादी मिली और एक राष्ट्र की अपनी राजभाषा हो, यह विचार सामने आया। इस संदर्भ में राष्ट्रभाषा हिंदी को राजभाषा के रुप में रुपायित करने की समस्या पर अपना गंभीरतम जो विचार विद्वान श्री किशोरीदास वाजपेयी ने अभिव्यक्त किया था, वह इस प्रकार है–

'अनेक बंगाली, गुजराती, पंजाबी और महाराष्ट्रीय नेता यह उद्योग कर रहे थे कि अपने राष्ट्र की एक राष्ट्रभाषा होनी चाहिए जो अंतरप्रान्तीय व्यवहार का माध्यम बन सके और आगे चलकर, जब देश स्वतंत्र हो, यही अपनी राष्ट्रभाषा का स्थान ग्रहण करके देश की केन्द्रीय सरकार की भाषा बने।'[7]

भारतवर्ष स्वतंत्र हुआ और इसी के साथ हमारे स्वतंत्र देश के पास अपने निजी संविधान की आवश्यकता महसूस की गई। फलतः संविधान सभा का गठन हुआ, जिसमें 14 सितंबर 1947 को हिंदी को राजभाषा घोषित किया गया था। वास्तव में किसी देश की सरकार के लिए भाषा का प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, उसके बिना विकास व प्रशासन का मार्ग प्रशस्त नहीं हो सकता। इस

संदर्भ में राजभाषा आयोग 1955–56 का अभिव्यक्त यह अभिमत अवलोकित करना अधिक समीचीन महसूस होता है।

''सभ्य समाज में परस्पर संपर्क का मुख्य अथवा प्रायः एकमात्र साधन भाषा ही है। आधुनिक सरकारों का केवल समाज के सभी पहलूओं से ही नहीं, 'अपितु व्यक्ति के जीवन से भी इतना गहरा संबंध रहता है कि अर्वाचीन समुदाय में किसी भी देश की सरकार के लिए भाषा का प्रश्न अत्यंत दिलचस्पी का विषय बन जाता हैं''[8] अतः संविधान सभा ने 12,13 एवं 14 सितंबर 1949 को विचार–विमर्श के उपरांत हिंदी को संघ सरकार के राजकाज की भाषा घोषित किया था। साथ ही भारतीय संविधान के लागू होने के दिनांक से आगामी पन्द्रह वर्षों तक हिंदी के साथ अंग्रेजी भी सह–राजभाषा के रुप में अपनी अहम् भूमिका निर्वहित करती रहेगी, ऐसा प्रावधान किया गया था। उसके बाद अंग्रेजी का महाप्रस्थान होगा और हिंदी पूर्ण राजभाषा के पद पर आसीन हो सकेगी। परंतु ऐसा नहीं हुआ और भारत सरकार ने संविधान में संशोधन किया था कि –जब तक भारत के समस्त विधान मंडल यह पारित न कर दें कि संघ की राजभाषा हिंदी हो तब तक अंग्रेजी भी हिंदी के साथ बनी रहेगी। इस संविधान संशोधन का लाभ उठाकर अंग्रेजी आज भी संघ के प्रशासन, शासन एवं अन्य राज्यों के पत्रचार की भाषा बनी हुई है। हिंदी को पूर्ण राजभाषा का दर्जा प्राप्त नहीं हो सका है। यह वस्तुस्थिति है। यद्यपि अनेक संविधान संशोधनों, नियमों, अधिनियमों का सृजन कर, भारत सरकार ने हिंदी को संघ के कार्यालयों में प्रसारित–प्रचारित कर, स्वेच्छा से लागू करवाने का अपना मानस अभिव्यक्त किया है। दृढ इच्छाशक्ति के अभाव में व अस्थिर राजनैतिक स्थितियों से स्थिरता प्राप्त करने की राजनीतिज्ञों की लिप्सा ने हिंदी को पूर्ण राजभाषा होने की दिशा व दशा में आगे बढ़ने से अवश्य रोका है, इसमें कोई दो मत नहीं है।

यह हमारी राजनैतिक विवशताएं हो सकती हैं, परंतु हिंदी को राजभाषा के पद पर आसीन होने में अनेक दिक्कतों, समस्याओं और बाध्यताओं का सामना अवश्य करना पड़ रहा है। केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों, सार्वजनिक उपक्रमों जैसे–भारतीय जीवन बीमा निगम, इंश्युरेंस कंपनियों, बैंकिंग, जनसंचार के माध्यमों–रेडियों, दूरदर्शन, पत्रकारिता, इंटरनेट, ई–मेल, आदि के माध्यम से आज हिंदी का प्रचार–प्रसार हो रहा है। विश्व बाजार के रुप में भारत का विशालतम, जनसमुदाय, परिवेश एवं यहाँ की भाषा में हिंदी को प्रयोग आदि हिंदी को आगे बढ़ने से सहायक सिद्ध हुए हैं। यद्यपि दूरदर्शन एवं फिल्मों का हिंदी के प्रसार–प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। तथापि राजभाषा नीति के क्रियान्वयन एवं दक्षिण भारत में हिंदी अध्यापन, अध्ययन में अनेक समस्याएँ हमें दृष्टिगत होती हैं, जो इस प्रकार हैं–

(1) **अंग्रेजी की मानसिक गुलामी वाली प्रवृत्तिः** अंग्रेजों ने इस देश पर लगभग 150 वर्षों तक राज किया है। उनकी भाषा व संस्कृति तथा मैकाले की शिक्षा–पद्धति का इतना गहरा दुष्प्रभाव पड़ा कि आज हम अपनी भाषा के प्रयोग की प्रवृत्ति से पलायन करने लगे हैं। हमारे उच्चाधिकारी अंग्रेजी में टिप्पणियाँ, अंतर्गत पत्राचार करने में ही अपनी विद्वता मानते हैं। अनुवाद की सुविधा को ध्यान में रखकर, हमारे अधिकारी अंग्रेजी वर्सन को ही अंतिम व प्रथम स्वीकारते हैं। स्पष्ट न होने की अवस्था में ही हिंदी वर्सन देखा जाता है। जबकि होना इसका विलोम चाहिए। इस प्रकार अंग्रेजी भाषा के प्रति अनावश्यक व्यामोह ने हिंदी को राजभाषा के पद पर पूर्णतः आसीन होने में अवश्य अवरोध उत्पन्न किया है। हमें भारतीय भाषाओं की महानदी हिंदी का समुचित विकास व प्रयोग करने में स्वयं को गौरवान्वित महसूस करना चाहिए। भारत की अस्मिता को हिंदी के माध्यम से अभिव्यक्त करने के प्रति दृढ़ प्रतिज्ञ होकर कर्मरत रहना चाहिए, तभी राजभाषा के रुप में हिंदी पदासीन हो सकेगी। वरना इसके अंतर्गत प्रलाप में पड़कर, हिंदी को विश्वभाषा बनने में भी अवरोधों को ही प्राप्त करेंगी। मैकाले की कारकून निर्माण शिक्षा पद्धति के संस्कारों से, हमें अपनी मानसिकता को विमुक्त कराना पड़ेगा अन्यथा हिंदी का अहित होगा। राजभाषा नीति के क्रियान्वयन में सबसे बड़ी बाधा और हिंदी शिक्षण में रुचि में हमारी यह दूषित मनोवृत्ति ही है, जिसका परिष्करण समय रहते करना अधिकाधिक समीचीन सिद्ध होगा। तभी हिंदी राजभाषा के रुप में

पूर्णतः विकसित होगी। यह प्राथमिक स्तरपर हिंदी के सुरुचिपूर्ण अध्यापन से भी संभव होगा।

(2) **प्रयोगशील भाषा का अभाव** : समाज भाषा की प्रयोगशाला होती है। जिन शब्दों, वाक्यों को समाज में हम प्रयोग करते हैं, वे प्रचलित होकर समाज में अपने मूल्यार्थो के साथ रुढ़ हो जाते है। किंतु जिनका प्रयोग निरंतर नहीं होता, वे मृत प्रायः हो जाते हैं, इस प्रकार कार्यालयीन भाषा के रूप में हिंदी का निरंतर प्रयोग होते रहने की नितांत आवश्यकता है, तभी कार्यालयीन पारिभाषिक शब्दावली प्रचलन में आकर सहज हो सकेगी। सहज ही नहीं रुढ़ भी बन सकेंगी। आज कार्यालयीन हिंदी के प्रयोगशील भाषा के स्वरुप का अभाव प्रमुख समस्या है।

(3) **मौलिक सामग्री का अभाव** : राजभाषा नीति के क्रियान्वयन एवं हिंदी के सहज अध्यापन हेतु समय–समय पर नवीनतम आदेशों व निर्देशों के जारी होने का सतत क्रम जारी रहता है। वास्तव में राजभाषा विषयक मौालिक सामग्री का आभाव निरंतर इस नीति क्रियान्वयन में सर्वाधिक बाधक सिद्ध हुआ है। अनूदित कार्यालयीन साहित्य सहज व ग्राहय नहीं होता, अतः सरल, सहज, सुगम व सुबोध कार्यालयीन सामग्री राजभाषा हिंदी में दुर्लभ रहती है, जिससे निश्चित ही राजभाषा का प्रयोगगत स्तर पर प्रयोग नहीं हो पाता है। सह–राजभाषा अंग्रेजी ही प्रयोग में अधिकाधिक लायी जाती है। इसी प्रकार क्षेत्रीय भाषाओं के संपर्क में आनेवाले अनुवाद की हिंदी पर, उन क्षेत्रीय भाषाओं की लोकभाषा का अधिक प्रभाव नहीं होता, जिससे कार्यालयीन व प्रशासकीय हिंदी कठिन व क्लिष्ट होती है जो अधिकतम रुप से, या तो विशेष अवसरों पर प्रयुक्त होती है या फिर आदर्श प्रयोग की भाषा बनकर रही जाती है। उदा. अहिंदी भाषी प्रदेशों में राजभाषा हिंदी में प्रयोग में लाई जाने वाली बैंकिंग शब्दावली स्थानीय भाषाओं के सन्निकट होना चाहिए तभी वह ग्राह्य होगी। साथ ही साथ ऐसी राजभाषा हिंदी सुपाच्य व ग्राह्य भी होगी। उसका अध्यापन भी रुचिकर बन पड़ेगा। अतः इन पारिभाषिक शब्दावली का सहज अध्यापन मातृभाषा के समकक्ष पदों से करना होगा।

(4) **प्रशासकीय पारिभाषिक शब्दावली का अभाव** : राजभाषा के रुप में हिंदी को पदासीन कराने के लिए एक अन्य तकनीकी कठिनाई जो अनुभूत की जा रही है। विविध क्षेत्रों की परिभाषिक शब्दावली का अभाव तथा उसके निरंतर प्रयोग की अनिच्छा सबसे बड़ी बाधा सिद्ध हो रही है। यद्यपि हमारी भारत सरकार ने वैज्ञानिक शब्दावली आयोग के माध्यम से अनेक विषयों पर विविध शब्दावलियाँ बनवाई है, किंतु उनका सहज प्रयोग समाज के विशेष विभागों द्वारा न किया जाना एक बड़ी समस्या है, जिससे अंग्रेजी भाषा के शब्द प्रचालन में आरुढ़ होते जा रहे हैं। हमें राजभाषा हिंदी के इन नवीनतम शब्दों का प्रयोग करने का प्रचलन जारी रखना होगा तभी नवनवीन परिभाषिक शब्दावली का प्रदुर्भाव होकर, आरुढ़ हो सकेंगी और हिंदी सही मायने में राजभाषा बन पायेगी। उसका प्रयोग करने से लोग आत्मसात करेंगे जो सहज होगी। भाषा प्रयोग से ही समृद्ध होती है।

(5) **राजभाषा नीति क्रियान्वयन कार्यक्रम की यथोचित समीक्षा का अभाव** : सरकार राजभाषा नीति क्रियान्वयन की समीक्षा सिर्फ कागज़ी आधार पर न कर, प्रयोगगत आधार पर करे तथा विविध क्षेत्रों में राजभाषा प्रयोग के विविध मानदंडों का निर्धारण करना चाहिए। बैंकिंग व्यवस्था में जनता से संपर्क प्रस्थापित करने के लिए सहज व सरल हिंदी भाषा का प्रयोग किया जाता है।, किंतु अंतर्गत व्यवहार टिप्पणियाँ, आदि प्रायः अंग्रेजी में लिखी जाती हैं, जिससे हिंदी का प्रचार–प्रसार उतने प्रतिशत में नहीं हो पा रहा है, जितना होना चाहिए था। इसी प्रकार संपूर्ण पत्र अंग्रेजी में लिखकर यदि हस्ताक्षर हिंदी में कर दिए जाए तो वह हिंदी का पत्र माना जाएगा, ऐसा निर्धारण का मानदंड भी परिवर्तित किया जाना चाहिए। इसी तरह हिंदी का प्रयोग बढ़ाने पर विशेष वेतन वृद्धियाँ, आदि प्रोत्साहन स्वरुप दिए जाने चाहिए ताकि कर्मचारी हिंदी को अपनाने के लिए सहर्ष तैयार हो सके। अतः हिंदी रोजी–रोटी की भाषा बनेगी।

(6) **हिंदी कार्यशाला व प्रशिक्षण कार्यो का समुचित अभावः** दक्षिण भारत एवं अन्य हिंदीतर प्रांतो में हिंदी प्रशिक्षण की नितांत आवश्यकता है, ताकि लोगों में जागृति पैदा हो सके। साथ ही

हिंदी प्रशिक्षित व्यक्तियों को शासकीय सेवाओं में आरक्षणादि का प्रावधान नहीं हैं। जिससे हिंदी के प्रति उपेक्षित दृष्टिकोण पनपना स्वाभाविक है। हिंदीतर भाषी प्रांतो में हिंदी को प्रोत्साहित करने के लिए विविध प्रकार के हिंदी पुरस्कारों की व्यवस्था भी की जानी चाहिए। हिंदी का प्रशिक्षण प्रत्येक कर्मचारी के लिए अनिवार्य किया जाना चाहिए ताकि जनसेवक अनिवार्यतः हिंदी सीख सके, तभी राजभाषा नीति का क्रियान्वयन संभव हो सकेगा। पर्याप्त वित्तीय सहायता का प्रावधान किया जाना चाहिए। हिंदी से रोजगार के स्वर्णिम अवसरों की जानकारी दी जानी चाहिए।

(7) **राजभाषा – नीति का दृढ़तापूर्वक परिपालन नहीं** – कहीं–कहीं राजभाषा–नीति के क्रियान्वयन की कागजी कार्यवाही महज कोरा दिखावा होती है। विभिन्न सार्वजनिक उपक्रमों में हिंदी–दिवस, पखवाड़ा एवं मास मनाकर हिंदी की निधि हड़प ली जाती है। भारत ही ऐसा देश है, जहाँ हिंदी 'राजभाषा दिवस' मनाया जाता है, फिर भी हिंदी मात्र राजभाषा के पद पर आसीन हो सकी है। अतः मात्र औपचारिक रुप से हिंदी–दिवस न मनाकर, शासन ने दृढतापूर्वक कठोर नियमों के आधार पर राजभाषा नीति का क्रियान्वयन करवाना चाहिए ताकि प्रतिवर्ष दो बार इसकी समीक्षा की जा सके। तभी राजभाषा–नीति सम्यक रुप से लागू हो सकेगी।

(8) **राजभाषा–नीति पर क्रियान्वयन, पर शोध–कार्यों का अभाव** : केन्द्रीय सरकार की लवचिक राजभाषा नीति तथा राजनीतिज्ञों की कमजोर इच्छा शक्ति तथा भाषावाद की संकीर्ण मनोवृत्ति के परिणाम स्वरुप राजभाषा नीति का समुचित रुप से क्रियान्वयन नहीं को सका, कुछ ही स्थानों पर विशिष्ट विभागों में पूर्णरुपेण, तो कहीं अल्प मात्र यह क्रियान्वित नहीं हो सकी है। अतः इन समस्त कारकों का अध्ययन चिंतन व शोध होना चाहिए ताकि राजभाषा नीति क्रियान्वयन की वर्तमान स्थिति, समस्याएँ एवं समाधान पर विवेचन और उसके लिए आवश्यक परिवेश की विनिर्मिती किया जाना संभव हो सकेगा। खेद का विषय है कि पूरे भारत में इस विषय में शोध व अनुसंधान अत्यल्प मात्र में उपलब्ध है अथवा जारी है। आशा है सरकार, विश्वविद्यालय, अनुदान आयोग एवं विश्वविद्यालय जैसे संगठनों से इन क्षेत्र में अनुसंधानात्मक विकास हो सकेगा, जिससे राजभाषा नीति विषयक आदेश, निर्देश एवं नियम, उपनियम एवं अधिनियमों की समीक्षा किया जाना संभव हो सकेगा। इससे सरकार भी अपनी नीतियों पर पूर्ण विचार करेगी तथा शासकीय व अर्धशासकीय संगठन तथा स्वैच्छिक संगठन अपनी नीतियों पर पूर्ण विचार करेगी तथा शासकीय व अर्धशासकीय संगठन तथा स्वैच्छिक संगठन अपनी–अपनी भूमिकाएं व उत्तरदायित्व का समुचित निर्वहन कर सकेंगे।

(9) **प्रयुक्ति विशेष की भाषा सामग्री का अभावः** राजभाषा नीति के क्रियान्वयन की समस्याओं में यह प्रमुख कारण है जिसके कारण प्रयुक्ति विशेष की भाषा सामग्री का अभाव राजभाषा नीति के क्रियान्वयन में बाधक होता है, जैसे – वाणिज्य, विधि, भौतिकशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि क्षेत्रतर्गत प्रयुक्त भाषा शैली विशिष्ट शब्दावली हिंदी में उपलब्ध न होने पर, अंग्रेजी में प्रयुक्त की जाती हैं। यदि प्रयुक्त विशेष की भाषा सामग्री उपलब्ध भी रहती, तब भी अंगेजी का आकर्षण एवं हिंदी के प्रति सुदृढ़ आस्था के अभाव में, उसका प्रयोग नहीं किया जाता है। अतः इस प्रकार की मानसिकता बदलनी ही चाहिए। इसके लिए विविध रुप से औपचारिक एवं अनौपचारिक उपायों का प्रावधान किया जाना ही अधिक समीचीन होगा। राजभाषा–नीति के क्रियान्वयन का दायित्व जहाँ निश्चित रुप से केन्द्र सरकार का है, वहीं स्वैच्छिक संगठनों, सार्वजनिक उपक्रमों एवं देश के प्रत्येक नागरिक का भी है। भाषाविद् एवं साहित्यकारों की विशेष समितियाँ बनाकर, क्षेत्र विशेष की परिभाषिक शब्दावली एवं शैली आदि का विकास हो एवं इसे पुस्तकें उपलब्ध करवाने का अहम दायित्व भी स्वीकार करना होगा। तभी इस समस्या का समाधान प्रस्तुत हो सकेगा।

(10) **रोजगारोन्मुख हिंदी–अध्ययन व अनुसंधान का अभाव** : हिंदी द्वितीय दर्जे की भाषा, मानसिक स्तर पर, समझी जाती है। अनुवाद के माध्यम से हिंदी में सहजता व सरलता संभव नहीं है। आज विश्व बाजार भारत की ओर आकृष्ट हो रहा है, ऐसे में हिंदी को रोजगारोन्मुख बनाकर, नवीनतम पाठयक्रमों का अध्यापन विश्वविद्यालयीन स्तर पर किया जाना अत्यंत

आवश्यक हो गया है ताकि हिंदी भाषी रोजगार से जुड़ सके। संप्रेषण की हिंदी, पत्रकारिता की हिंदी, दूरसंचार की हिंदी, वाणिज्यिक हिंदी, विज्ञापन की हिंदी, अनुवाद की हिंदी, नाटक व रंगमंच की हिंदी आदि व्यावसयिक क्षेत्रों में हिंदी, अनुसंधान एवं अध्ययन को प्रोत्साहित कर, नवनवीन सामग्री का विस्तार होना चाहिए जो नहीं हो रहा है। परिणामतः राजभाषा नीति के समग्र क्रियान्वयन में बाधा उत्पन्न हुई है। सरकारी नीति इस प्रकार होनी चाहिए कि पूरे भारतवर्ष में व्यावसायिक हिंदी का तीव्रगति से अध्ययन व अनुसंधान हो, जिससे जनता हिंदी को रोजी–रोटी की भाषा होने से, सहज स्वीकारेगी और तभी उसका शासन व प्रशासन में यथोचित प्रयोग भी हो सकेगा।

(11) **हिंदी विषयक कम्प्यूटर वेबसाईट व साफ्टवेअरों का अभाव** : जबकि भाषाई क्षेत्र में कम्प्यूटर में आधुनिकतम आविष्कार जारी है। फिर भी हिंदी कम्प्यूटरीकृत वेबसाईट व सॉफ्टवेयरों की सहज उपलब्धता नहीं हो पाती है, जिससे कर्मचारीगण विवश होकर, अंग्रेजी की अंगीकारते हैं। अतः हिंदी विषयक कम्प्यूटर वेबसाईट व साफ्टवेअर आधुनिकतम नव अविष्कृत उपलब्ध कराये जाना चाहिए। साथ ही उनके प्रयोग विषयक प्रचार–प्रसार को युद्ध स्तर पर प्रसारित किया जाना चाहिए। तभी हिंदी को राजभाषा बनाने की नीति सहज और सरलता से रुपायित हो सकेगी। अनुवाद का साफ्टवेअर, द्विभाषिक साफ्टवेअर आदि उपलब्ध कराये जाने चाहिए सिर्फ इतना ही नहीं राजभाषा नीति के सफल क्रियान्वयन हेतु हमारी सरकार, हमारे प्रशासन तंत्र के साथ–साथ हमें भी जागरुक रहना पड़ेगा। हाँ! हमें इस तथ्य पर विशेष बल देना चाहिए। इस संबंध में रुस के विद्वान प्रो. वायो चेलशिव का अभिमत हमारे कर्त्तव्य–पथ को दिग्दर्शित ही करता है। वे पूर्व मत की पुष्टि करते हैं और कहते है–

'भारत की मुख्य साहित्यिक और संपर्क– भाषा हिंदी विश्व की प्रमुख भाषाओं में है। हिंदी को वास्तविक गौरवपूर्ण स्थान दिलाने के लिए भारतीय जन–मानस को ही व्यापक रुप से जागरुक होना पड़ेगा।'

हम इन समस्याओं के निराकरणोपरांत राजभाषा–नीति के शत–प्रतिशत सफलीभूत होने के प्रति आशावान है, और इससे प्राथमिक स्तर पर हिंदी का अध्यापन रुचिपूर्ण बनाने में मदद मिलेंगी। महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर का अभिमत हमारे विश्वास को संबल प्रदान करता है–

'जिस हिंदी भाषा के खेत में, भावों को ऐसी सुनहली फसल लहलहा रही है, वह भाषा भले ही कुछ दिन यों ही उपेक्षित पड़ी रहे, पर उसकी स्वाभाविक उर्वरता अक्षुण्ण रहेगी। वहाँ फिर हरीतिमा के सुदिन आएंगे और पौष मास में फिर नवान्न उत्सव आयोजित होगा।'[10]

संदर्भ–गंथ–सूची

1. नजीर अकबराबादी का शेर
2. भाषा विषयक–डॉ. शंकर बुंदेले का मुक्तक – 'भाषा–संगोष्ठी' का व्याख्यांश
3. राष्ट्रभाषा संदेश – अंक 3 वर्ष 47–1 मार्च 2002 पृ.7
4. राष्ट्रभाषा संदेश – अंक 3 वर्ष 47–1 मार्च 2002 पृ.7
5. 'हिंदी – साहित्य के पचास वर्ष' महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी मुंबई पृ. 233
6. भारत – भारती – मैथिलीशरण गुप्त – काव्य–ग्रंथ
7. प्रयोजनमूलक हिंदी – डॉ. कृष्णकुमार गोस्वामी पृ. 40
8. राजभाषा समस्या – व्यावहारिक समस्या– कन्हैयालाल गांधी–राजभाषा आयोग पृ. 55–56
9. विश्व में हिंदी–हरिबाबू कंसल–खंण्ड–1 पृ 144
10. हिंदी विश्वभाषा के रुप में– ले. डॉ. हिमांशु जोशी–हिंदी साहित्य : पचास वर्ष, पृ. 255

'श्री' सदन,
पार्वती नगर नं. 2 , अकोली रोड़,
महात्मा फुले महाविद्यालय के समीप
अमरावती –444607 (महाराष्ट्र)

प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी यानि अभिव्यक्ति एवं सौंदर्य बोध का विकास

डॉ० शिबन कृष्ण रैणा

सामान्यतया प्रारंभिक शिक्षा से अभिप्राय उस शिक्षा से है जो छह वर्ष से लेकर ग्यारह या बारह वर्ष तक बालक को दी जाती है। इसे अंग्रेजी में प्राइमरी एजूकेशन या एलीमेंटरी एजुकेशन अथवा बालशिक्षा (चाइल्ड एजुकेशन) भी कहते हैं। संसार के प्रायः सभी प्रगतिशील देशों में प्रारंभिक शिक्षा अनिवार्य हैं अतः कहीं छह वर्ष के पश्चात् और कहीं सात वर्ष से विद्यालयों में प्रारंभिक शिक्षा का सूत्रपात होता है जो प्रायः पाँच वर्षों तक चलता है। तत्पश्चात् बच्चे माध्यमिक शिक्षा में प्रविष्ट होते है। इसके पहले के शिक्षा के स्तर को शिशु–शिक्षा भी कहते हैं।

शिक्षा मनुष्य–जीवन के सर्वांगीण विकास से जुड़ी एक आधारभूत आवश्यकता है समुचित शिक्षा ही मानव को अन्य जीव–जंतुओं से अलग पहचान देती है। मोटे तौर पर शिक्षा अपने चारों ओर की चीजों को सीखने की एक प्रक्रिया है। यह हमें किसी भी वस्तु या परिस्थिति को आसानी से समझने, किसी भी तरह की समस्या से निपटने और पूरे जीवन–भर विभिन्न आयामों में सन्तुलन बनाए रखने में मदद करती है। बिना शिक्षा के हम अधूरे हैं और हमारा जीवन सार्थक नहीं है। शिक्षा हमें अपने जीवन में एक लक्ष्य निर्धारित करने और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। यह ज्ञान, कौशल, आत्मविश्वास और व्यक्तित्व की परिपक्वता और प्रबुद्धता लाती है और समाज के बदलते परिवेश में रहना और जीवन–यापन करना सिखाती है। इसके अतिरिक्त शिक्षा हमारे सामाजिक विकास, आर्थिक वृद्धि और तकनीकी उन्नति का ऐसा सार्थक माध्यम है जिसका मानव सभ्यता के विकास में एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। हमारे शास्त्रों में शिक्षा का प्रथम उद्देश्य शिशु को मानव बनाना, दूसरा, उसे उत्तम नागरिक तथा तीसरा, परिवार का पालन पोषण करने योग्य और साथ ही सुख की प्राप्ति कराना बताया गया है। हमारी संस्कृति में तो जीवन के चार पुरुषार्थ, धर्म, अर्थ, काम और शिक्षा के आधार पर ये उद्देश्य चिन्हित किये गये हैं। मगर आज स्थिति दूसरी है। अब व्यवसाय या नौकरी ही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य रह गये हैं। और इस पुण्य कार्य का घोर व्यवसायीकरण या बाजारीकरण हो रहा है।

अब हम मूल विषय पर आते हैं। प्रश्न उठता है कि प्राम्भिक शिक्षा बालक को किस भाषा में दी जाये? राज भाषा हिंदी में, प्रादेशिक भाषा में, बालक की मातृभाषा में, अंग्रेजी में या फिर किसी अन्य भाषा में? भारत जैसे बहुभाषायी देश में जहाँ हिंदी प्रदेशों को छोड़ अन्य प्रदेशों में वहां की अपनी प्रादेशिक भाषाएं बोली जाती हैं, यह समस्या विकट भी है और विचारणीय भी। समय–समय पर विभिन्न आयोगों, समितियों और परिषदों द्वारा प्रस्तुत किए सुझावों में एक सुर में शिक्षा–माध्यम के लिए क्षेत्रीय भाषाओं या मातृभाषाओं को प्रथम स्थान प्रदान किया गया है। साथ ही लगभग सभी ने त्रिभाषा–सूत्र के पालन पर जोर दिया है। इसके अलावा अंग्रेजी को

धीरे–धीरे शिक्षा के माध्यम की मुख्य धारा से हटाने को भी सुझाव प्रस्तुत किया गया है। वर्तमान समय में अनिवार्य शिक्षा अधिनियम के अनुसार माध्यमिक स्तर तक मातृभाषा/क्षेत्रीय भाषा को शिक्षा का माध्यम स्वीकार किया गया है, परंतु उच्च शिक्षास्तर पर आज भी समस्या बनी है कि क्या इस स्तर पर शिक्षा का माध्यम अँग्रेजी हो, या हिंदी? हिंदी भाषी प्रदेशों में अधिकांश विद्यार्थियों को हिंदी भाषा के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जा रही है। केंद्र शासित क्षेत्रों व केंद्रीय विश्व–विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी है। रही बात राष्ट्रीय स्तर पर प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी को माध्यम बनाने की, तो राष्ट्रीय स्तर पर प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी को माध्यम बनाना सरल कार्य नहीं है। दरअसल, हिंदी प्रदेशों को छोड़ शेष सभी की अपनी प्रांतीय भाषाएँ है और संभवतः अभिभावक इसी भाषा में अपने बच्चों को शिक्षा दिलवाना पसंद करेंगे। यहाँ पर इस बात का उल्लेख करना भी आवश्यक है कि पिछले अनेक वर्षों से देश में सरकारी स्कूलों के समानांतर जो निजी स्कूल जैसे कान्वेंट, पब्लिक, मिशनरी आदि स्कूल चल रहे हैं, वे न तो हिंदी में और न ही प्रांतीय भाषा में बच्चों को शिक्षा दे रहे हैं। इन स्कूलों का शिक्षा–माध्यम मुख्यतया अंग्रेजी है। संभवतः अंग्रेजी की तरफ बढ़ते वैश्विक रुझान की वजह से ऐसा हो रहा है। एक रिपोर्ट जो'' नेशनल यूनिवर्सिटी फॉर एजुकेशन प्लांनिंग एंड एड्मिनिस्ट्रेशन'' (एन.यू.ई.पी.ए.) ने जारी की है, के अनुसार अब अधिकाधिक भारतीय अभिभावक अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों में पढ़ाना पसंद करते हैं। वर्ष 2003–06 की अवधि के दौरान शिक्षा के माध्यम के रुप में अंग्रेजी भाषा का स्थान तीसरा हो गया था। इस अवधि में राष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों में नामांकन संख्या में 74% की वृद्धि दर्ज की गयी थी, अर्थात् वर्ष 2003 में यह संख्या 54.7 लाख थी, जो वर्ष 2006 में बढ़कर 95.1 लाख हो गयी। अधिकांश दक्षिण भारतीय राज्यों में अँग्रेजी की वृद्धि दर अधिक है, जो इन तीन वर्षों में हुई वृद्धि का लगभग 60% है। पूर्वोत्तर राज्यों में तो अंग्रेजी माध्यम में नामांकन सबसे अधिक अर्थात 90% है।

यहाँ पर इस बात को रेखांकित करने की आवश्यकता है कि इस देश में प्रारंभिक शिक्षा का माध्यम क्या होना चाहिए, इस प्रश्न पर सामान्य और उच्च स्तरों पर कई बार विचार हो चुका है। पर संकल्प शक्ति के अभाव में आज तक हमारे शिक्षाशास्त्री, नेता और सरकार किसी अंतिम निर्णय तक नहीं पहुंच सके हैं। भिन्न प्रकार के विचार अवश्य सामने आए हैं। एक मुख्य विचार यह आया कि आरंभ से अंत तक शिक्षा का माध्यम तथाकथित अंतर्राष्ट्रीय भाषा अंग्रेजी होनी चाहिए। पर इस विचार को एक तो मानसिक गुलामी का परिचायक कहा जा सकता है, दूसरे इस देश की आम जनता के लिए ऐसा हो पाना संभव और व्यावहारिक भी नहीं है। सामान्य एवं स्वतंत्र राष्ट्र के गौरव दृष्टि से भी यह उचित नहीं। दूसरा विचार यह है कि अन्य सभी स्वतंत्र राष्ट्रों के समान क्यों न हम भी अपनी संविधान–स्वीकृत भाषा को ही शिक्षा का माध्यम बनाएं? लेकिन इस विचार के रास्ते में निहित स्वार्थों वाले राजनीतिज्ञ उत्तर–दक्षिण का प्रश्न उठा, हिंदी में तकनीकी और ज्ञान–विज्ञान के विषयों से संबंधित पुस्तकों के अभाव की बातें कहकर रोड़े अटकाते हैं। उपर्युक्त मतों के अतिरिक्त एक अत्यंत महत्वपूर्ण और विचारणीय मत यह सामने आता है कि प्रारंभिक शिक्षा का माध्यम तो प्रदेश विशेष की प्रमुख मातृभाषा होनी चाहिए।

मातृभाषा वाले मत पर तनिक विस्तार से चर्चा करने की आवश्यकता है। अधिकांश शिक्षाशास्त्रियों

का मत है कि बालक जिस पृष्ठभूमि से आता है और वहां जिस भाषा का प्रयोग होता है उसे उसी माध्यम से शिक्षा मिलनी चाहिये। चूंकि शिक्षा बालक केंद्रित होती है और शिक्षक की भूमिका पथ–प्रदर्शक की होती है, ऐसे में जरुरी होता है कि बच्चों से उनकी अपनी ही भाषा में बात की जाएं क्योंकि इससे बच्चों के स्वाभाविक विकास में सहायता मिलती है। एनी बीसेंट का कहना है कि बालक को अंततोगत्वा समाज में ही रहना है।

इस लिहाज से शिक्षा का उद्देश्य बालक का समाजीकरण है। समाजीकरण की प्रक्रिया का आधार ही भाषा है। जब तक बालक और समाज की भाषा में एकरुपता न होगी तब तक इस प्रक्रिया में बाधा रहेगी। इसीलिए श्रीमती बीसेंट ने प्राथमिक स्तर की शिक्षा हेतु मातृभाषा को ही प्राथमिकता दी है। वहीं मातृभाषा में शिक्षा को शिक्षा का माध्यम बनाने की वकालत करते हुए अंग्रेजी लेखक व विचारक वेल्सफोर्ड का कहना है कि केवल एक ही भाषा में हमारे भावों की स्पष्ट व्यंजना हो सकती है, केवल एक भाषा के शब्दों में सूक्ष्म संकेतों को हम सहज और निश्चित रुप से ग्रहण कर सकते हैं और वह भाषा होती है जिसे हम अपनी माता के दूध के साथ सीखते हैं जिसमें हम अपनी प्रारंभिक प्रार्थनाओं, हर्ष तथा शोक के उद्गारों को व्यक्त करते हैं। किसी दूसरी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाना विद्यार्थी के श्रम को अनावश्यक रुप से बढ़ाना ही नहीं अपितु उसके मस्तिष्क की स्वतंत्र गति को पंगु भी बना देना है। विश्व के प्रायः सभी देशों में भाषाशास्त्री हो या विचारक या फिर शिक्षाशास्त्री, सभी एकमत है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षा मातृभाषा में ही दी जानी चाहिए। पं. मदनमोहन मालवीय एक ओर जहां कहते हैं कि किसी विदेशी भाषा का मातृभाषा के स्थान पर ज्ञान कराना मूर्खतापूर्ण है, वहीं विनोबा भावे कहते है, मां से ग्रहण की गई भाषा से आशय क्षेत्र विशेष की उस भाषा से है जिसके माध्यम से मौखिक व लिखित विचार विनिमय होता है। सिर्फ हमारे देश में ही नहीं अपितु विश्व के अनेक देशों के शिक्षाशास्त्री तथा मनोवैज्ञानिकों की भी यही राय है कि प्रारंभिक अवस्था में बच्चों को उनकी मातृभाषा में ही शिक्षा दी जानी चाहिए।

मातृभाषा में शिक्षा का एक ओर जहां मनोवैज्ञानिक आधार है। वहीं एक हद तक यह देश की संस्कृति से भी जुड़ा मसला है। शिक्षा के लिए गठित जाकिर हुसैन कमेटी की सिफारिश कहती है कि संपूर्ण शिक्षा का आधार मातृभाषा ही होना चाहिए। उसका कहना है कि जो सरलता से लिख–पढ़ सकता है उसी के पास सुलझे और स्पष्ट विचार होते है। मातृभाषा के माध्यम से ही जाति की परंपरा, संस्कृति एवं भावनाओं को समझा जा सकता है। अतः यह सामाजिक शिक्षा का अमूल्य साधन हो सकता है तथा इसके द्वारा सभी नैतिक और धार्मिक गुण प्राप्त किए जा सकते हैं। बच्चों के भाव प्रकाशन का मातृभाषा एक सर्वश्रेष्ठ साधन है। मातृभाषा से शिक्षा की वकालत करते हुए गांधी जी कहते हैं कि शिक्षा मातृभाषा द्वारा ही दी जानी चाहिए क्योंकि अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा देने से बालक में परिचित भाषा की दुरुहता के कारण विचारों की स्पष्टता नहीं होती। मातृभाषा को बच्चा जन्म से ही वातावरण से सीख लेता है। उस भाषा में अपने विचारों को स्पष्टता से व्यक्त कर सकता है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने मातृभाषा को बड़े सम्मान से देखा और कहा कि अपनी भाषा में शिक्षा पाना बालक का जन्मसिद्ध अधिकार है। उनकी मान्यता थी कि जिस तरह हमने माँ की गोद में जन्म लिया है, उसी तरह मातृभाषा की गोद में जन्म लिया है, ये दोनों माताएँ हमारे लिए सजीव और अपरिहार्य

हैं। इस प्रकार रवीन्द्रनाथ ने मातृभाषा की महत्ता को समझा और उसे समझाने का प्रयास भी किया है।

दरअसल, अपने बच्चों को किस स्कूल में शिक्षा दिलवाएं इसका निर्णय करने में बच्चे के माता–पिता की महती भूमिका रहती हैं। आंकड़े बताते है कि मुख्यतया प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर मध्यवर्ग का एक बड़ा हिस्सा अपने बच्चों को अंग्रेजी शिक्षा दिलाने के पक्ष में है, इसीलिए वे अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों से निकाल कर प्राइवेट स्कूलों दाखिल करवा रहे हैं कहना न होगा कि ये अभिभावक ही हैं जो अपने बच्चों के लिए उनकी प्रारंभिक शिक्षा के लिए भाषा के चुनाव हेतु अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। सारे शोध बताते हैं कि शुरुआती कक्षाओं में घर–पड़ोस की भाषा में शिक्षा लेने से बच्चे को सीखने में आसानी होती है। इससे उसमें भाषाई लचीलापन भी आता है जिसके सहारे वे आगे दूसरी भाषाएं सीख जाते हैं। शिक्षाशास्त्री अपूर्वानंद के अनुसार ''प्राथमिक शिक्षा का व्यक्ति के जीवन में वही स्थान है जो मां का है। यह व्यक्ति के जीवन की वह अवस्था है जबकि संपूर्ण जीवन विकास क्रम को गति मिलती है। इस उम्र की शिक्षा जीवन में महत्वपूर्ण शिक्षा होती है। संभावनाओं से भरी इस अवस्था को सही दिशा उस समय मिल पाएगी जब उसकी दिशा सही हो। सही दिशा से तात्पर्य है बच्चों का शारीरिक, मांसपेशीय, संज्ञानात्मक, बौद्धिक, सृजनात्मक अभिव्यक्ति और सौंदर्यबोध का विकास। शिक्षा के इन लक्ष्यों को तभी प्राप्त किया जा सकेगा जब बच्चों से उनकी भाषा में बात की जाए।''

वर्तमान में यह धारणा बलवती होती जा रही है कि विद्यार्थियों को मातृभाषा में शिक्षा देना मनावैज्ञानिक और व्यवहारिक रुप से वांछनीय है क्योंकि विद्यालय आने पर बच्चे यदि अपनी भाषा को व्यवहृत होते देखते हैं, तो वे विद्यालय में आत्मीयता का अनुभव करने लगते हैं और यदि उन्हें सब कुछ उन्हीं की भाषा में पढ़ाया जाता है, तो उनके लिए सारी चीजों को समझना बेहद आसान हो जाता है।

शिक्षा के माध्यम के विषय में आम आदमी की क्या सोच है, यह जानना भी जरुरी है। आम आदमी कहता है कि शिक्षा का माध्यम वह हो जिसमें अच्छी शिक्षा मिले, जो जीवन में काम आए और जिसके द्वारा अच्छा रोजगार मिले। कौन नहीं जानता कि आज की परिस्थितियों में बिना अंग्रेजी के कोई भी अच्छी नौकरी नहीं मिलती। अंग्रेजी का पक्ष लेने वाले तर्क देते हैं कि अंग्रेजी तो अंतर्राष्ट्रीय भाषा है, कम्प्यूटर की भाषा है, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भाषा है। हिंदी में इन विषयों की स्तरीय पुस्तकें ही नहीं है। भविष्य उसी का है जो विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में सशक्त रहेगा, शेष देश मात्र खुले बाजार होंगे। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में सशक्त होने लिये उत्कृष्ट अनुसंधान तथा शोध आवश्यक हैं, जिसके लिये विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के ज्ञान पर अधिकार, तथा कल्पनाशीलता तथा सृजनशीलता आवश्यक है। कल्पना तथा सृजन हृदय के वे संवेदनशील गुण हैं जो बचपन के अनुभवों से मातृभाषा के साथ तथा गहरे ज्ञान अर्थात मात्र याद किया हुआ नहीं वरन आत्मसात किये ज्ञान के साथ आते हैं और जिस भाषा में जीवन जिया जाता है उसी भाषा में वे प्रस्फुटित होते हैं, अतएव उसी भाषा में श्रेष्ठ आविष्कार आदि भी हो सकते हैं। जापान, जर्मनी, चीन, इजराईल, रुस, आदि देशों ने अपनी ही भाषाओं में चिंतन–मनन कर एक से बढ़कर एक आविष्कार विश्व के सम्मुख प्रस्तुत किये है। अतः सोचना कि अंग्रेजी सीखकर

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आविष्कार किये जा सकते हैं, समीचीन नहीं है। प्रतिवर्ष 21 फरवरी को अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस मनाया जाता है। हमारे देश में मातृभाषा को किस तरह प्रचलन से गायब कर अंग्रेजी को मातृभाषा बनाने की पुरजोर कोशिश की जा रही है, यह सर्वविदित है। सरकारों से लेकर कार्पोरेट और कार्पोरेट–हित–साधक अखबार सब इस जुगत में लगे हुए है कि मातृभाषा शब्द ही जनमानस से और उसकी बुद्धि से गायब हो जाए। मातृभाषा में शिक्षा देना बालक के उन्मुक्त विकास में ज्यादा कारगर होता है। अलग–अलग आर्थिक परिवेश के बालकों में विषय को ग्रहण करने की क्षमता समान नहीं होती। अंग्रेजी में पढ़ाए जाने पर और कठिनाई होती है। जिनका पूरा परिवेश ही अंग्रेजी भाषामय हो, ऐसे परिवार देश में कम ही है। मातृभाषा के माध्यम से जब पढ़ाया जाता है तो बालकों के चेहरे उत्फुल्लित दिखाई देते हैं। नई भाषा सीखना अच्छी बात है और गुणकारी भी है। हर नई भाषा हमें एक नये संसार में प्रवेश कराती है। लेकिन मातृभाषा की उपेक्षा कर शिक्षा के माध्यम से हटाकर जिस तरह के भाषा–संस्कार डाले जा रहे हैं, वह खतरनाक हैं। बालक न अंग्रेजी जान पा रहा है न मातृभाषा।

ऊपर उल्लिखित विस्तृत विवेचन से इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि प्रारंभिक शिक्षा के लिए बालक की मातृभाषा को प्राथमिकता दी जाय। हिंदी प्रदेशों में यह माध्यम हिंदी हो सकता है और हिंदीतर प्रान्तों में बालक की अपनी भाषा। आगे चलकर उच्च कक्षाओं में सुविधानुसार शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी या अन्य कोई भाषा हो सकती है। हिंदी भी हो सकती है मगर उसके लिए हमें प्रारंभिक और उच्च शिक्षा में काम में आने वाली पाठ्य पुस्तकें हिंदी में तैयार करनी होगी। ख़ास तौर पर प्रबंधन, प्रौद्योगिकी, विज्ञान, चिकित्साशास्त्र, विज्ञान आदि विषयों से सम्बंधित पुस्तकें। अनुवादित पुस्तकें नहीं अपितु मौलिक पुस्तकें जिनके लेखक विद्वान हो।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि, दरअसल, जिस रफ्तार से हिंदी के विकास–विस्तार हेतु सरकारी या गैर सरकारी संस्थाएं कार्यरत हैं, उससे दुगनी रफ्तार से अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। खास तौर पर अच्छा रोजगार दिलाने के मामले में हिंदी अभी सक्षम नहीं बन पाई है। हमारी नई पीढ़ी का अंग्रेजी की ओर प्रवृत्त होने का एक प्रमुख कारण यह भी है कि हिंदी में उच्च ज्ञान–विज्ञान को समेटने वाला साहित्य बिल्कुल भी नहीं है।

अगर अनुवाद के जरिए कुछ आया भी हो तो वह एकदम बेहूदा और बोझिल है। जब तक अपनी भाषा में हम मौलिक चिंतन नहीं करेंगे और हिंदी में मौलिक पुस्तकें नहीं लिखी जाएंगी, तब तक अंग्रेजी के ही मोहताज रहेंगे। आज भी संघ लोक सेवा आयोग या फिर हिंदी क्षेत्रों के विश्वविद्यालयों के प्रश्नपत्र अंग्रेजी में बनते हैं और उनके अनुवाद हिंदी में होते हैं। पाद–टिप्पणी में साफ लिखा रहता है कि विवाद की स्थिति में अंग्रेजी पाठ को ही सही मान लिया जाए। यानी हिंदी विद्वानों का देश में टोटा पड़ गया है जो उनसे प्रश्नपत्र नहीं बनवाए जाते। विज्ञान अथवा टेकनोलॉजी से जुड़े विषयों की बात तो समझ में आती है, मगर कला और मानविकी से जुड़े विषयों के प्रश्नपत्र तो मूल रुप से हिंदी में बन ही सकते हैं। इसके अलावा हिंदी को जब तक सीधे–सीधे 'जरुरत' से नहीं जोड़ा जाता, तब तक अंग्रेजी की तरह उसका वर्चस्व और वैभव बढ़ेगा नहीं।

2/537, अरावली विहार,
अलवर, राजस्थान–201001

महत्वपूर्ण है प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी

—प्रो० जयप्रकाश

प्रारंभिक शिक्षा, जो कक्षा एक से आरंभ होती है और कक्षा पाँच तक फैली होती है, उतनी ही महत्वपूर्ण होती है जितनी कि किसी भवन की नींव। शैशव इसमें दो महत्वपूर्ण बातें सीखता है – संप्रेषण और गणना करना। सम्प्रेषण का सम्बन्ध भाषा से होता है और गणना का संबन्ध सामाजिकता से। आज के भारतीय समाज में, विशेषतः हिंदी भाषी समाज में, हमारे जीवन के ये दोनों पक्ष दुर्बलता–प्रदर्शी हैं। इसलिए प्राथमिक शिक्षा और भी महत्वपूर्ण हो गई है।

हमारे समाज में प्राथमिक शिक्षा का आरंभ अक्षर–ज्ञान से होता है। अक्षर–ज्ञान के तीन आयाम होते हैं– उच्चारण, लेखन ओर पठन। उच्चारण ठीक न होने से हास्य उत्पन्न होता है, अभिप्राय पीछे छूट जाता है –

'जो बालक कह तोतरी बाता।

होंहिं मुदित मन पितु अरू माता।।'

तुतलाना अर्थात् वर्णों का समुचित उच्चारण न कर पाना। शिशु वर्णों का ठीक–ठाक उच्चारण तब नहीं कर पाता है, जब उच्चारण–तंत्र (उच्चारण अवयवों) का ठीक–ठाक प्रयोग नहीं किया जाता है। दिल्ली के जामिया मिलिया विश्वविद्यालय के एक साक्षात्कार में एक अभ्यर्थी से, जो यूरोप के एक देश में हिंदी का अध्यापन करता था, जब यह पूछा गया कि सेमेटिक वर्ग के देशों में 'ट' वर्ण का उच्चारण जो 'त' के रूप में कर दिया जाता है, उसे कैसे ठीक कराया जा सकता है, अभ्यर्थी निरूत्तर था। प्रगट है कि इस प्रश्न का संबंध हिंदी की प्राथमिक शिक्षा से था और अभ्यर्थी के पास इसका समाधान न था। ट–वर्णीय शब्दों को दोहराने से उच्चारण का यह दोष दूर होने वाला न था। प्राथमिक कक्षाओं में भाषा–अर्जन की पहली चुनौती वर्णों का ठीक–ठाक उच्चारण करना है। उच्चारण को मानक के समरूप या उसके निकट तक पहुँचाने की समस्या इस क्षेत्र की पहली समस्या है। आज का हिंदी अध्यापक प्रायः इसके प्रति सचेत नहीं है और न इसमें दक्ष है। वह पल्लव–ग्राही ज्ञान से काम चला रहा है।

प्राचीन काल में व्याकरण–ज्ञान की आवश्यकता इसलिए बहुत अनुभव की गई थी कि इससे भाषा–अर्जन सटीक होता था। भाषा विज्ञान ने व्याकरण को प्राचीनता–अभिमुख माना और मुख–सुख को बढ़ा दिया। इसका फल यह हुआ कि उच्चारण में भी मनमानी और असाधुता समा गई। वैयाकरण कहते रह गए कि बच्चों! अधिक न पढ़ो तो कम से कम व्याकरण जरूर पढ़ लो। कहीं प्रमादवश 'स्वजन' को 'श्वजन' न कहने लग जाना। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने अपने उपन्यास 'अनामदास का पोथा' में एक पात्र के अशुद्ध उच्चारण करने पर उसे शूद्र कहलाया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व हमारे समाज में उच्चारण की शुद्धता पर प्राथमिक शिक्षा पर जितना बल दिया जाता था, उतना आज दिखाई नहीं देता। गुरूकुलों में वेदाध्यायी विद्यार्थियों को अनेक (आठ) प्रकार से मंत्र–पाठ करना पड़ता था। इससे मंत्र कंठस्य भी हो जाते थे और उच्चारण भी निखर जाता था। प्राथमिक शिक्षा का आरंभ भी तब 'शिक्षा' के ग्रंथों से होता था। पाणिनीय शिक्षा 'याज्ञवल्क्य शिक्षा' जैसे ग्रंथ उच्चारण–विज्ञान के ग्रंथ थे। भाषाविज्ञान इस ज्ञानुशासन का 'फोनेटिक्स' कहता है। आज की हिंदी की प्राथमिक शिक्षा में उच्चारण के परिमार्जन और उसकी प्रविधि के लिए न तो समय है और न प्रयास ही है। उच्चारण को माता–पिता, परिवार–स्वजन और समाज के जिम्मे छोड़ दिया गया है। शिशु के उच्चारण की कमियों को पहचानने, उनको दूर करने तथा उनके परिमार्जन को सुनिश्चित करने के लिए पाठ्क्रम में थोड़ा तो स्थान होना ही चाहिए और उसके लिए दक्षता–प्राप्त

अध्यापकों की सुलभता भी होनी चाहिए। अध्यापन की प्रशिक्षण संस्थाओं को इस ओर पहल करनी चाहिए। कम से कम अध्यापकों को 'स्थान और 'प्रयत्न' का ज्ञान उच्चारण–प्रक्रिया में अवश्य हो जाए, यह प्रशिक्षण संस्थाओं को सुनिश्चत करना होगा। देवनागरी लिपि में वर्णमाला में स्वरों, स्पर्शों, अन्तःस्थों, ऊष्मों तथा संयुक्त व्यंजनों का क्रम इस प्रकार रखा गया है कि आन्तरिक प्रयन्त से बाह्य प्रयत्न तक प्राणवायु के पहुँचते पहुँचते जो स्थान जिस क्रम से आते जाएँगे, उनसे संबंधित ध्वनियाँ उसी क्रम से उच्चारित होती जाएँगी। ध्वनियों के उच्चारण का प्रशिक्षण कोई दक्ष अध्यापक यदि इस क्रम को ध्यान में रखकर देगा तथा स्थान और प्रयत्न में सामंजस्य बिठाता हुआ देगा, तो उच्चारण के सदोष होने की संभावना बहुत ही कम होंगे। जो कमी रह जाएगी, उसको अध्यापक की दक्षता पकड़ लेगी तथा उच्चारण की प्रक्रिया के सूक्ष्म ज्ञान से उसको प्राथमिक चरण में ही सुधार देगी। प्राथमिक शिक्षा के पहले दो वर्षों में उच्चारण में प्राणजलता आ जानी चाहिए। संयुक्ताक्षर, रेफ, अनुस्वार, बलाघात, अक्षिप्र जैसी ध्वनियों में जिन सावधानियों की आवश्यकता होती है, उनका अभ्यास इन दो वर्षों में करा दिया जाना उचित होगा।

प्राथमिक शिक्षा के इस प्रथम चरण में भाषा–अर्जन दूसरा–तीसरा आयाम लेखन और पठन भी साथ–साथ चलता है। पाठ को पढ़ते समय वस्तु–चित्र को देखकर अनुमान से नाम पढ़ देना शैशव की एक प्रवृत्ति होती है। उससे बचाने के लिए वर्ष–संयोजन सिखाना चाहिए। इसका कारगर उपाय लिखित वर्ण का अंगुलि स्पर्शण होता है। वर्णों की अन्विति करते हुए पहले दो वर्णों को, फिर तीन वर्णों को और उसके बाद तीन से अधिक वर्णों को अन्वित शब्दों के पाठ का अभ्यास करना उचित होगा। इस स्तर की दक्षता आ जाने के बाद पदबन्धों और उपवाक्यों को अन्वित करते हुए पढ़ने का अभ्यास बच्चों को कराना चाहिए। यह पाठ सस्वर होना चाहिए। पाठ की सस्वरता स्मृति को भी दृढ़ करती है तथा उच्चारण की शुचिता को भी स्थायी बनाती है। स्मृति आन्तरिकता की माँग करती है और सस्वरता में आन्तरिक प्रयत्न अन्तर्हित रहता है। प्रसिद्ध वैयाकरण भर्तृहरि ने अपने ग्रंथ 'वाक्यपदीयम्' में ध्वनि की उत्पत्ति की प्रक्रिया में आत्माबुद्धयासमेत्यथिनि मनो युड़क्ते विवक्षाया..." कहकर आन्तरिक प्रयत्न की चर्चा की है। यह ध्यान की एकाग्रता का परोक्ष प्रयास है, जो विवक्षा के द्वारा स्वतः सम्भव हो जाता है।

प्राथमिक शिक्षा में भाषार्जन का तीसरा आयाम लेखन के स्तर का होता है। प्राथमिक शिक्षा के पहले दो वर्षों में देवनागरी अक्षरों की बनावट पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। शिशुओं को यह समझाना बहुत जरूरी होता है कि जिस क्रम से और जैसा ध्वनि का उच्चारण होता है उसी क्रम से हिंदी में लिखा भी जाता है। इस शिक्षा–चरण में मात्रा–बोध भी अर्जित किया जाता है। मात्रा अर्थात ध्वनि की मात्रा। ध्वनि की मात्रा अर्थात् उच्चारण में लगने वाले समय की मात्रा। मात्रा बोध के समय 'समय' और पूर्वापर क्रम ये दो बातें जुड़ी होती है। लिखते समय इन दोनों का ध्यान रखना होता है। संयुक्त ध्वनियों को लिखने का अभ्यास भी दूसरे–तीसरे वर्ष में तो शुरू होता ही है, स्वच्छ और सुन्दर लिखने का अभ्यास भी आरंभ हो जाता है। शिरोरेखा के ऊपर किस ध्वनि में रेफ, मात्रा–चिन्ह तथा अनुस्वार कैसे लगाना है, यह भी बच्चों को बताना होता है। मात्रा–चिन्हों की लम्बाई और उनका कोण भी बताया जाना चाहिए। सुन्दर लिखावट के लिए आकार की समता, अक्षरों की सघनता, शब्दों में अंतराल, शिरोरेखा का आकार, शिरेरेखा के ऊपर मात्राओं, समतामूलक बनावट, स्वच्छता तथा स्पष्टता आदि बातें बच्चों के ध्यान में प्रयासपूर्वक लानी चाहिए। प्राथमिक शिक्षा के पहले दो वर्षों में इन बातों की शिक्षा और इनका अभ्यास पर्याप्त है, जहाँ तक हिंदी भाषा के प्रशिक्षण का संबंध है। इसके लिए दो बातों की महती, आवश्यकता है (i) आधार सामग्री जैसे चार्ट, चित्रावली, मशीनी उपकरण आदि (ii) इन बातों में दक्ष और सुयोग्य अध्यापक अपने समाज में इन दोनों की बहुत कमी है।

प्राथमिक शिक्षा के उत्तरवर्ती चरण के तीनों वर्ष बहुत ही महत्वपूर्ण होते हैं। इन तीनों वर्षों में हिंदी–भाषा का विद्यार्थी ज्ञानार्जन करता भी है और उसको सम्प्रेषित भी करने लगता है। सम्प्रेषण–क्षमता के लिए शब्द–भंडार तथा पद–रचना की सामर्थ्य ज़रूरी होती है। नित्यप्रति के प्रयोग में आनेवाली वस्तुओं के शब्दों का थोड़ा–बहुत संग्रह पहले दो वर्षों में ही आरंभ हो जाता है। इन तीन वर्षों में शब्दों का भंडारण व्यापकता

में होने लगता है। शब्द–संग्रहण के लिए बच्चों को पाठ्यपुस्तकों में कविताएँ, कहानियाँ, संवाद, सूचनाप्रद लेख पढ़ाए जाते हैं। सूचनाओं का संग्रह ज्ञान बनता है। इसलिए समाज के ज्ञान–विज्ञान की बातें इन पाठों में समाई हुई होती हैं। देश के भूगोल और इतिहास की बहुत ही मोटी बातें हिंदी भाषा को लिपटाकर इन पाठों में प्रकट होनी चाहिए। अपनेपन के साथ देश का भूगोल और इतिहास बच्चों के मस्तिष्क के साथ जुड़ना शुरू हो जाना चाहिए।

प्रारंभिक शिक्षा केवल विवक्षा– कहने की इच्छा का ही मार्ग नहीं प्रशस्त करती, विचार भरी समझ का रास्ता बनाना भी शुरू करती है इसलिए बच्चों के कोमल मस्तिष्कों में, मूल्यों का संचार और श्रेष्ठ मनुष्य बनाने वाले मूल्यों का संचार इसी काल–खंड में शिक्षा का अंग बन जाना चाहिए। मूल्यबोध मनुष्यता का और मनुष्यता सदाचरण का पर्याय होता है। पारस्परिक सहयोग, सहअस्तित्व तथा अपनेपन के मूल्यबोध के द्वारा अपनी संस्कृति से जुड़ाव के बीजवपन का यही समय होता है। प्रारंभिक शिक्षा के इस दौर का उपयोग इस दृष्टि से करना चाहिए। समाज में फैली बुराईयों से लड़ने की आगे की तैयारी का आरंभ पाठ्यक्रम से इस दौर में इस प्राकर से हो जाना चाहिए कि वह बच्चों के मस्तिष्क में विचार का रूप ले लें। यह हो नहीं पा रहा है।

पिछले वर्ष की शिक्षा–संबन्धी जो सरकारी रपट आई है, उससे पता चलाता है कि हमारी प्राथमिक शिक्षा–प्रणाली के शहरी और ग्रामीण रूप में बहुत अन्तर है। सम्पूर्ण समाज को अभी निरक्षरता से लड़ाई लड़नी पड़ रही है। 'सर्वशिक्षा अभियान' को अभी काफी लम्बा रास्ता तय करना शेष है। हिंदी भाषी समाज आजादी मिलने के सत्तर वर्षों के बाद भी अभी तक निरक्षरता से जूझ रहा है। ग्रामीण शिक्षा का आलम यह है कि आठवीं पास अठ्ाइस प्रतिशत बच्चे हिंदी के वाक्य को ठीक से पढ़ नहीं पाते हैं। दसवीं पास बच्चों का एक बहुत बड़ा प्रतिशत ठीक से लिख नहीं पाता है। पाँचवीं पास बच्चे सौ तक गिनती जानते नहीं हैं। ग्रामीण विद्यार्थियों का आधा हिस्सा न तो यह जानता है कि अपने देश की राजधानी क्या है और उसका प्रान्त क्या है। ऐसी दशा में उनमें देश और समाज के प्रति भक्तिभाव और कर्त्तव्य भाव का जागना बहुत दूर की बात है। हजारों की संख्या में प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापकों के पद खाली पड़े हुए हैं। सरकारी बजट में शिक्षा (प्राथमिक) के लिए जो धन मिलता है, वह अध्यापकों के वेतन में ही समाप्त हो जाता है। सभी विद्यार्थियों को पाठ्य पुस्तकें सुलभ नहीं हो पाती हैं, यदि सुलभ होती भी हैं तो सत्र के मध्य भाग में– भाषा का प्रशिक्षण दो ही साधनों से सम्भव हो सकता है – या तो उच्चरित शब्द से या लिखित शब्द से–लिखित और मुद्रित शब्दरूप का एक ही अर्थ है। यदि अध्यापक में शब्द ज्ञान की साधुता का अभाव है और उससे उपजे हीनता–भाव के कारण वह कक्षा में श्यामपट पर या उत्तरपुस्तिका पर लिखने से बचता है कि कहीं उसकी अशुद्धि सार्वजनिक न हो पाए, तो मुद्रित शब्द सहारा बनता है और यदि वह भी पाठ्यपुस्तक के रूप में समयानुकुल सुलभ न हो पाए, तो विद्यार्थियों की भाषा का सदोष रह जाना स्वाभाविक हो जाता है। ग्रामीण प्राथमिक शिक्षा की हिंदी भाषा सम्बन्धी विभीषिका का यथार्थ कुछ ऐसा ही है।

यदि भाषा को सदोष प्रचरित करने वाली अनेक इकाइयाँ हों और वे अतीव शक्तिशाली और व्यापक हों, तो भाषा के सम्मुख संकट भी दीर्धतर हो उठता है। हिंदी की प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर यही स्थिति है। स्वल्प प्रतिभा–सम्पन्न अध्यापकों की नियुक्ति प्राथमिक शिक्षा के विद्यालयों में प्रायः हो पाती है। प्रतिभाएँ या तो उच्च शिक्षा को सुलभ हो जाती हैं या फिर अन्य शिक्षेतर क्षेत्रों में चली जाती हैं। अध्यापकों की संख्या भी अपर्याप्त रहती हैं। उनको (विद्यार्थियों को) प्रशिक्षित करने वाले अन्य जनसंचार के साधन भाषा के मानकों के साथ मनमानी करते हैं। यह अनुभव किया गया है कि हिंदी के शोध–विद्यार्थी तक शुद्ध हिंदी लिखने में सक्षम दिखाई नहीं देते हैं। उनके शोध प्रबन्धों तथा शोधपत्रों में वर्तनी को शुद्ध करना पड़ता है। ऐसे भाषा के दक्षता–विहीन व्यक्ति महाविद्यालयों/विश्वविद्यालयों/प्रशिक्षण महाविद्यालयों में अध्यापक बनते हैं। उनके द्वारा प्रशिक्षित व्यक्ति प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापक बनकर आते हैं– 'गुरू सिस अंध–बधिर कर लेखा'। जहाँ दक्षता की जरूरत है, वहाँ अ–दक्षता से काम चलाया जाता है। इस स्थिति में सरकारी रिपोर्ट (सन् 2017 की) यदि यह सूचना देती है कि ग्रामीण प्राथमिक

शिक्षा के पाँचवीं–आठवीं कक्षा को उत्तीर्ण किए हुए विद्यार्थी हिंदी के वाक्य पढ़–लिख नहीं पाते; सौ तक हिंदी की संख्या नहीं जानते, तो इसमें हैरानी क्यों हो।

हरियाणा के एक विश्वविद्यालय में एक पद के लिए साक्षात्कार में एक अभ्यार्थी ऐसा था, जिसे स्नातकोत्तर परीक्षा में पूरे विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान मिला था। मैने उसके भाषा–ज्ञान की थाह लेने के लिए उससे हिंदी की वर्णमाला/अक्षारमाला सुननी चाहिए। अभ्यार्थी नहीं सुना पाया। वह कहीं न कहीं अध्यापक का पद सुशोभित कर रहा होगा। हमारी प्राथमिक शिक्षा ऐसे निर्मूल वृक्ष उगा रही है। ये निर्मूल वृक्ष जहाँ–तहाँ सरकारी पदों और जनसंचार के माध्यमों की शोभा भी बढ़ाते हैं। दूरदर्शन के अनेक चैनलों पर, अनेक समाचार–पत्रों के मुख–पृष्ठों पर मंत्रिगणों, अधिकारियों के द्वारा नित्यप्रति परियोजनाओं के आरंभ करने के समाचारों के प्रसारण में एक शब्द का प्रयोग होता है, जिसे अशुद्ध रूप में इस प्रकार लिखा/छापा जाता है – 'उद्घाटन'। विद्वानों–महारथियों का ध्यान इस पर नहीं जाता। इस शब्द में 'द' और 'घा' वर्ण का पूर्वपर क्रम स–दोष है। जो बोला जाता है, वही लिखा जाता है। यदि बोली 'घा' ध्वनी जाती है, तो वही लिखी भी जानी चाहिए और दीर्घ मात्रा के साथ लिखी जानी चाहिए। 'द' की स्वरविहीन ध्वनी 'घा' के पहले लिखी जानी चाहिए। ये बातें प्राथमिक शिक्षा के समय हिंदी भाषा के प्रशिक्षण में सिखा दी जानी चाहिए थीं। इस शब्द का व्यापकता में संदोष व्यवहार बता रहा है कि प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर हिंदी का प्रशिक्षण, कम से कम इस शब्द को इसी प्रकार सदोष लिखने वालों का प्रशिक्षण, ठीक–ठाक नहीं हुआ है। शिरोरेखा के ऊपर अनुस्वार और रेफ के प्रयोग में भी अराजकता की स्थिति यहाँ तक जा पहुँची है कि कुछ लोग समझने लगे हैं कि इन ध्वनि चिन्हों को शिरोरेखा के ऊपर लगाना भर अभीष्ट है, वह कहीं पर भले ही लग जाए। ये बातें प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर सटीकता की कमी को दर्शाती हैं।

प्राथमिक शिक्षा के स्तर तक विद्याथियों को हिंदी की प्राथमिक बातें सीख लेनी चाहिए और सिखा देनी चाहिए। प्राथमिक बातों में पहली बात यह है कि हिंदी में जिस क्रम से ध्वनियों का उच्चारण होता है, उसी क्रम से उनको लिखा भी जाता है। जिस मात्रा में प्राणवायु का प्रयोग होता है, वही ध्वनि की मात्रा होती है और उसका चिन्ह वर्ण में प्रयुक्त होता है। इस प्राथमिक बात के समुचित ज्ञान से हिंदी के लेखन में अधिकांश अशुद्धियों को दूर किया जा सकता है। प्राथमिक शिक्षा से जुडे अध्यापकों को ध्यान रखना होगा कि भाषा का अर्जन भर ही काम्य नहीं होता है, उसका निर्दोष तथा प्रभावशाली होना भी काम्य होता है। यह माना जा सकता है कि प्रारंभिक कक्षाओं में भाषा–अर्जन में बहुत देर तक भाषा की दक्षता को लक्ष्य नहीं बनाया जा सकता है, उसका निष्पादन भर ही ध्येय होता है। लेकिन कक्षा पाँच को उत्तीर्ण करते–करते इतना तो माना ही जाना चाहिए कि विद्यार्थी को जितनी भाषिक शब्दावली आती है, उतनी वह ठीक तरह से बोल भी सके, लिख भी सके और पढ़ भी सके।

प्रारंभिक शिक्षा भाषार्जन के साथ–साथ सभ्य नागरिक तथा संस्कृति सम्पन्न मनुष्य की रचना की भी पहली सीढ़ी होती है। भाषा में सीखे हुए शब्द केवल ध्वनि–समूह नहीं होते, जिनका प्राथमिक कक्षाओं का विद्यार्थी उच्चारण, लेखन तथा पठन में व्यवहार करता है, वे अपने साथ संस्कृत को भी समेटे रहते हैं। भाषा की शब्द सम्पदा गाँव–शहर, जनपद, प्रान्त तथा देश की सांस्कृति आगे चलकर युवा–जीवन में चरित्र की वह रचना करती है, जो या तो गौरवान्वित करता है या सापराधता के कारण घर–परिवार, समाज, देश को मलिन बनाता है। प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी का प्रशिक्षण केवल सम्प्रेषण केन्द्रित नहीं होना चाहिए, अच्छी आदतों–व्यावहारों की नींव डालने वाला भी होना चाहिए। जिन दुष्प्रवृतियों जैसे अपराध, आतंकवाद, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, लिंग–भेद, जाति–भेद, ऊँच–नीच, अस्वच्छता आदि से समाज आज जूझ रहा है, उनकी ओर शैशव न जाने पाए, इसकी बहुत ही सूक्ष्म और परोक्ष पहल प्रारम्भिक शिक्षा में भाषा–अर्जन के स्तर पर की जा सकती है, यदि प्रशासन और अध्यापक वर्ग सावधानी के साथ ध्यान दें।

1486, पुष्पक कांप्लेक्स,
सेक्टर–49 (बी), चंडीगढ़–160047

प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी संभावनाएं एवं चुनौतियाँ

—वसुधा शुक्ल

संपूर्ण सृष्टि में दृष्टिगोचर होने वाले जितने भी प्राणी हैं, उनकी आरंभिक शिक्षा या तो उन प्राणि–मात्र की माताओं द्वारा दी जाती है या वे अपनी सहजवृत्ति से सीखते हैं। अत्यन्त आरंभिक शिक्षा का स्वरूप संकेत अथवा माता द्वारा उच्चारित किये जाने वाले कुछेक शब्द मात्र हैं। मानव से इतर प्राणि जगत में भी शिशुओं को उनकी माताएं आरंभिक शिक्षा के तौर पर कुछ ध्वनियों का उच्चारण करती हैं और उन ध्वनियों के संकेत से ही प्राणियों के शिशु यह समझते हैं कि कौन–सी ध्वनि खतरे का संकेत है, कौन–सी शिकार पर निकलने का संकेत है और कौन–सी ध्वनि उन्हें भोजन के लिए आमंत्रित करती है। प्राणिमात्र में इस तरह की आरंभिक शिक्षा का स्वरूप आस–पास के परिवेश में सरलता से देखा जा सकता है।

संपूर्ण प्राणिजगत में मानव अधिकतम विकसित मस्तिष्क वाला प्राणी है, तथापि अत्यंत आरंभिक शिक्षा का स्वरूप मानव समाज में भी अन्य प्राणियों जैसा ही है। नवजात शिशु ज्यों ही कुछ समझने लायक होता है उसकी माता उसे संकेतों द्वारा शिक्षा देना आरंभ करती है। थोड़ा और सचेतन होने पर एक–एक शब्द के माध्यम से और फिर वाक्यों आदि के माध्यम में शिक्षा आरंभ होती है। आरंभिक वर्षों में शिशु माता के सानिध्य में रहते हुए केवल 'मातृभाषा' में ही ज्ञान अर्जित कर पाता है।

मानव समाज में प्रारंभिक और औपचारिक शिक्षा विद्यालयों में शिक्षकों के माध्यम से आरंभ होती है। भारत जैसे विशाल बहुभाषी समाज में जहाँ 1635 बोलियां और उपभाषाएं हैं। इनमें से लगभग 122 भाषाएं ऐसी हैं, जिनके बोलने और समझने वाले लोग दस हजार से अधिक हैं। इस विशाल भाषा समूह में से 22 भाषाएं भारतीय संविधान सम्मत भाषाएं हैं। संविधान सम्मत भाषा न होते हुए भी अंग्रेजी भाषा का वर्चस्व सम्पूर्ण देश में बना हुआ है।

सहज ज्ञान की दृष्टि से देखा जाए, तो आरंभिक शिक्षा को मातृभाषा में दिया जाना सर्वथा उपयोगी होता है। मातृभाषा के माध्यम से सीखा गया ज्ञान दीर्घकाल तक बना रहता है। किंतु मानव समाज में भाषा–ज्ञान के और भी महत्व हैं। भाषा मानव को समाज से जोड़ती है। संपूर्ण समाज और देश की संस्कृति से रू–ब–रू कराती है और साथ ही उच्च शिक्षा का माध्यम बनती है और रोजगार के लिए मार्ग प्रशस्त करती है।

व्यापक दृष्टिकोण से देखा जाए तो भारत जैसे विशाल देश में चार बड़े भाषा परिवार हैं। दक्षिण में द्रविड भाषा परिवार, जिसमें तमिल, तेलुगू, कन्नड और मलयालम सरीखी प्राचीन भाषाएं हैं। पूरब में दक्षिण एशियाई भाषा परिवार जिसमें मुंडा, संथाली जैसी छोनागपुर के पठारी क्षेत्र में प्रयोग की जाने वाली प्राचीन भाषाएँ और बोलियां हैं। उत्तर में तिब्बत–बर्मा परिवार के विशाल क्षेत्र में फैली प्राचीन

पहाड़ी भाषाएं हैं, जिसमें बोडो, मणीपुरी आदि आज भी प्रचलन में हैं। मध्य भारत में भारतीय आर्य परिवार की भाषाओं का क्षेत्र है ये भाषाएँ कमोवेश एक–दूसरे से किसी–न–किसी रूप में साम्य रखती हैं। भारत के चार बड़े भाषा परिवारों के बीच शब्दों के स्तर पर कुछ साम्य तो दिखाई देता है किंतु लिपि और व्याकरण के स्तर पर अत्यधिक वैसम्य है। देश की अधिकांश जनसंख्या क्षेत्रीय रूप में प्रयुक्त राज्यों की इन्हीं भाषाओं के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करती है।

हिंदी अथवा राज्यों में प्रयुक्त होने वाली क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से यदि आरंभिक शिक्षा दी जाती है तो यह शिक्षा सर्वथा उपयोगी होगी और देश के भावी नागरिकों को अपनी मातृभूमि और संस्कृति से जोड़ कर रखेगी। भारतीय शिक्षा पद्धति में शिक्षा का उद्देश्य मात्र रोजगार प्राप्त करना नहीं है, बल्कि व्यक्ति के समग्र चरित्र एवं व्यक्तित्व का निर्माण करना है। ऐसा केवल तब संभव है जब शिशु को उसकी संस्कृति की संवाहक भाषा के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जाए।

हमारे देश में शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रायः तीन भाषाओं का प्रयोग हो रहा है। एक किसी क्षेत्र विशेष की क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से, दो हिंदी भाषा के माध्यम से, और तीन अंग्रेजी भाषा के माध्यम से। आरंभिक रूप में क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से शिक्षा प्रदान किया जाना सर्वथा हितकारी ही है। यदि यही शिक्षा समग्र देश में हिंदी के माध्यम से दी जाए, तो निःसंदेह व्यक्ति और राष्ट्र का निर्माण साथ–साथ हो सकेगा और देश पुनः अपनी प्राचीन काल की विश्वगुरू की शीर्षछवि को प्राप्त कर सकेगा। एक समय था जब सम्पूर्ण देश में संस्कृत और पालि जैसी भाषाओं का वर्चस्व था और भारत एक अद्‌भुत देश के रूप में, एक सोने की चिड़िया के रूप में, ज्ञान–विज्ञान के एक केंद्र के रूप में विख्यात था। यदि सम्पूर्ण देश में आरंभिक शिक्षा हिंदी में दी जाए, तो राष्ट्र के लोग अपनी प्राचीन धरोहरों और जीवन मूल्यों का पुनः आत्मसात करते हुए चतुर्दिक विकसित समाज का निर्माण कर सकेंगे।

आज सम्पूर्ण देश में शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी भाषा का बोलबाला है। पूरा देश एक क्षणिक चकाचौंध के प्रति आकर्षित है। अंग्रेजों ने भारत में अंग्रेजी भाषा थोपकर देशवासियों को नौकर के रूप में विकसित करना चाहा था, ऐसे नौकर जो उनकी भाषा और उनके संकेत सुनकर उनके ही इशारों पर उन्हीं के लिए काम कर सकें। यद्यपि देश को आजाद हुए लगभग एक सदी होने को है, किन्तु अभी भी सम्पूर्ण देश में अंग्रेजों की ही भाषा शासन कर रही है। देश में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा प्राप्त कर छोटे–बड़े लोग केवल छोटी–बड़ी नौकरियों में ही उलझे हुए हैं। वह देश जो विश्वगुरू कहा जाता था, जो सोने की चिड़िया के रूप में विख्यात था, जहाँ ऋग्वेदादि जैसे दुर्लभ ग्रंथों की रचना हुई, वहाँ के लोग केवल नौकरी पेशा वाले सेवा प्रदाता बन कर रह गए। यह सब कमाल है, शिक्षा के माध्यम अंग्रेजी का, जो हमें केवल नौकरी के योग्य बना पाती है चाहे कार्यालयों में बाबू का कार्य हो, चाहे इंजीनियर, डॉक्टर का कार्य, देशवासियों का लक्ष्य भाषा ने तय कर दिया है। दुनिया के तमाम विकसित देश अपनी भाषाओं के माध्यम से शिक्षा प्रदान करते हैं। चीन, जापान, रूस, जर्मनी और फ्रांस आदि देश इसके उदाहरण है। तमाम विकसित देश अपनी भाषा के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करके नित नये आविष्कार करने में सफल हो रहे हैं। किन्तु भारत एक सेवा–प्रदाता देश के रूप में विकसित हो रहा है। देश में इंजीनियर, डॉक्टर अथवा उच्च शिक्षा प्राप्त कर कोई भी विद्यार्थी देश विदेश में अच्छी से अच्छी नौकरी

पाने के लिए उत्सुक और बाध्य है। अच्छे आविष्कार अनुसंधान, उद्योग और राष्ट्र निर्माण में गिने चुने ही कार्य कर पा रहे हैं। यह अंग्रेजी माध्यम से प्राप्त शिक्षा का बड़ा अभिशाप है।

स्वतंत्र देश के संविधान निर्माताओं का बहुत बड़ा सपना था कि संपूर्ण राष्ट्र के लिए एक भाषा, हिंदी का विकास हो जो देश की क्षेत्रीय भाषाओं का नहीं बल्कि देश में प्रचलित अंग्रेजी भाषा का स्थान ले सके। इसके लिए संविधान में उपबंध भी किया गया कि संघ सरकार का यह दायित्व होगा कि वह हिंदी भाषा का विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके। इसके लिए मुख्यतः संस्कृत और गौणतः अन्य भारतीय भाषाओं से शब्दों को लेकर उसका विकास सुनिश्चित किया जाए। ऐसा हुआ भी। हिंदी का विकास हुआ। ज्ञान–विज्ञान के सभी विषयों की अभिव्यक्ति के लिए उसकी शब्द–सम्पदा में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। सरकारी प्रयास से 6.5 लाख प्रशासनिक, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दों का विकास किया जा चुका है। फिर भी प्रयोग के स्तर पर एक बड़ी विडम्बना दृष्टिगोचर होती है। हमें जहाँ अंग्रेजी को बलपूर्वक थोपी हुई भाषा समझना चाहिए उसे नजरंदाज करते हुए हम उसके विपरीत हिंदी को ही थोपी गई भाषा समझने लगे और उसके प्रयोग से पठन–पाठन के साथ–साथ प्रयोग करने से भी कतराते हैं। आज देश में अंग्रेजी भाषा 'पढ़ा–लिखा' होने का पर्याय बन गई है। हिंदी 'सर्वहारा' की भाषा बन कर रह गयी है। आज देश के ग्रामीण क्षेत्रों के प्राथमिक विद्यालयों में भी अंग्रेजी माध्यम की बाढ़ सी आ गई है। यह एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है।

यह नितांत सच है कि आरंभिक शिक्षा मातृभाषा में उपयोगी होती है। देश के कई राज्यों में हिंदी मातृभाषा के रूप में बोली जाती है। किन्तु जिन राज्यों की मातृभाषा हिंदी नहीं है उन राज्यों में भी तीसरी कक्षा से हिंदी माध्यम में यदि शिक्षा आरंभ की जाए तो यह देश की सांस्कृतिक एकता के साथ शिक्षा में एक रूपता प्रदान करने में सहायक होगी और देश देशज आविष्कारों–अनुसंधानों की ओर तेजी से अग्रसर हो सकेगा। यह देश की दुर्लभ प्रतिभा के पलायन को भी रोक सकेगा।

आरंभिक शिक्षा हिंदी माध्यम में दिये जाने के क्षेत्र में चुनौतियां ही चुनौतियां नजर आती हैं। सबसे बड़ी चुनौती रोजगार की है। आज पढ़े लिखे वर्ग के जेहन में नौकरी प्राप्त करना ही एक बड़ा लक्ष्य है। बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ, विदेशी कंपनियाँ अंग्रेजी पढ़े लिखे बाबुओ, इंजीनियरों, डाक्टरों आदि को पसंद करती हैं और नौकरी भारतीय जनता की पहली पसंद बन चुकी है। जीविकोपार्जन का यह सीधा और सरल मार्ग है। दूसरी बड़ी चुनौती हिंदीतर भाषी क्षेत्रों के लोगों के मन में हिंदी के प्रति अपनेपन का अभाव है। उन्हें हिंदी भाषा शासन द्वारा थोपी गई भाषा लगती है। वे यह समझ ही नहीं पाते कि देश में हिंदी ही ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में मार्ग प्रशस्त करने में समर्थ भाषा है और हिंदी की प्रतिस्पर्धा अंग्रेजी से है न कि भारतीय भाषाओं से। भारतीय भाषाएँ तो हिंदी सहयोगी भाषाएँ हैं। साझा संस्कृति की भाषाएं है। भारतीय भाषाएं तो 'हिंदी' के गुलदस्ते के रंग–बिरंगे फूल हैं, उसकी खुशबू हैं। उसकी मुट्ठी की ताकत हैं।

एम.ए. अर्थशास्त्र
एमिटी स्कूल ऑफ इकोनामिक्स
एमिटी विश्व विद्यालय, ग्रेटर नोएडा, उत्तर प्रदेश

प्राथमिक शिक्षा में हिंदी के लिए आवश्यक है पर्याप्त ज्ञान सामग्री

डॉ. संध्या वात्स्यायन

भारतीय शिक्षा पद्धति को लेकर हमेशा कुछ समस्याएँ रही हैं। ऐसा माना जाता है कि लॉर्ड मैकाले ने शिक्षा–नीति के जो विवरण तैयार किए उसी का पालन आज तक किया गया है। गांधी ने शिक्षा में जिस हिंदी भाषा या कहें कि प्राथमिक शिक्षा की वकालत की उस पर आज तक ध्यान नहीं दिया गया है। स्वतंत्रता पूर्व शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी रहा जिसे उच्च संस्कृति का प्रतीक मानकर आज तक महत्व मिल रहा है। गांधी ने 'यंग इंडिया' में लेख लिखा था–''यह मेरा निश्चित मत है कि आज की अंग्रेजी शिक्षा ने शिक्षित भारतीयों को निर्बल और शक्तिहीन बना दिया है। इसने भारतीय विद्यार्थियों की शक्ति पर भारी बोझ डाला हैं और हमें नकलची बना दिया है। ... कोई भी देश नकलचियों की जाति पैदा करके राष्ट्र नहीं बन सकता।''[1] गांधी का मानना था हम भारतवासी बहुत बड़े भ्रम में जीते हैं कि अगर हमें अंग्रेजी आएगी तभी हमारा मानसिक विकास हो पाएगा। इस भ्रम से निकलने के लिए ही यह जरूरी है कि प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी न होकर मातृभाषा हिंदी हो। न केवल इतना बल्कि वे यह भी लिखते हैं–''हमारे बालक और बालिकाओं को यह सोचने का प्रोत्साहन देना, कि अंग्रेजी के ज्ञान के बिना उत्तम समाज में प्रवेश करना असंभव है, भारत के पुरुषत्व और खासतौर पर स्त्रीत्व के प्रति हिंसा करना है। यह विचार इतना अपमानजनक है कि सहन नहीं किया जा सकता।'' [2] इन सब बातों से यह शिक्षा का माध्यम यदि विदेशी भाषा न होकर स्वदेशी हो तो इससे छात्रों का अधिकांश समय अंग्रेजी को सीखने में व्यर्थ नहीं जाएगा। 'हिंदी स्वराज' में गाधी लिखते हैं–''लाखों को अंग्रेजी का ज्ञान देना, उन्हें गुलाम बनाना है।'' [3] हमारी शिक्षा पद्धति का अनुसरण लगभग इसी ढंग से किया जा रहा है।

गांधी जी हिंदी को राष्ट्रभाषा मानते थे। वे चाहते थे कि केन्द्र के सभी काम–काज हिंदी में ही हों। वे हिंदी के प्रबल समर्थक थे। हिंदी न केवल राजभाषा है अपितु संपर्क भाषा भी है। ऐसे में यदि प्राथमिक शिक्षा हिंदी में ही बालकों को दी जाए तो उनका आधार मजबूत होगा और वे माध्यमिक शिक्षा में अंग्रेजी को भी आसानी से समझ सकेंगे। क्योंकि उनका बौद्धिक विकास उन्हें यह बता पाएगा कि कहां कौन–सी भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए। बहुभाषी देश भारत में संपर्क भाषा का कार्य हिंदी ही करती है, इसलिए हिंदी को अनिवार्य बनाया जाना चाहिए।

19वीं शताब्दी के अंत तक जब अंग्रेजी शिक्षण–पद्धति के दोष नजर आने लगे तब 1882 में शिक्षा आयोग ने इन दोषों पर संकेत करके इन्हें कम करने के लिए सरकार का ध्यान खींचा। जिसके तहत राजकीय विद्यालयों, राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना हुई और शिक्षा का कार्य शुरू हुआ। जिसका मकसद तब भी अंग्रेजी को बढ़ावा देना है। वर्तमान शिक्षा–प्रणाली भारतीय संस्कृति की रक्षक नजर नहीं आती है। यहां की शिक्षा पर कब्जा अंग्रेजी का ही है। शिक्षा का व्यावसायीकरण हो गया। वह अपनी मूल भाषा मातृभाषा से अलग नजर आती है। जो शिक्षा पद्धति अपनी मातृभाषा से अलग हो, वह देश का अच्छा भविष्य निर्मित नहीं कर सकती। जड़ विहीन शिक्षा निरर्थक शिक्षा है।

समाज के विकास के विभिन्न चरण में एक शिक्षा पद्धति निहित होती है। प्रत्येक युग में एक विशेष प्रकार की शिक्षा का चलन दिखलाई पड़ता है। आधुनिक युग में शिक्षा जिन सिद्धांतों व नियमों को लेकर चल रही है।

उससे हम भारतीय अपनी पहचान को खोते नजर आ रहे हैं। शिक्षा पद्धति, धर्म, राजनीतिक संगठन, विज्ञान की प्रगति, औद्योगिक स्थिति आदि कारकों पर निर्भर करती है। हर समाज में शिक्षा कुछ विचारों, भावनाओं और प्रथाओं को समान रूप से सभी बच्चों के मन–मस्तिष्क में बैठाती है। उनका संबंध चाहे किसी भी सामाजिक श्रेणी से हो। मानव की प्रकृति, विभिन्न नैसर्गिक शक्तियों की निजी महत्ता, अधिकार और कर्तव्य, समाज, व्यक्ति, प्रगति, विज्ञापन, कला आदि विचारों पर ढांचा स्थापित करना है। और यही ढांचा राष्ट्रीय भावना का मूल आधार है। अब चाहे वह धनाढ्यों की शिक्षा हो, या निर्धनों की, चाहे वह व्यक्ति अलग–अलग पेशों की ओर ले जाती हो या उसे औद्योगिक कार्यों के लिए तैयार करती हो, उसका एकमात्र उद्देश्य इन्हीं विचारों को मन–मस्तिष्क में बैठाना है। और एक व्यवस्थित शिक्षा पद्धति इस ओर कार्य करती है।

सन् 1993 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 14 साल की उम्र तक के बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का मौलिकाना अधिकार दिए जाने के बाद भारत का शासक वर्ग इस प्रयास में रत रहा है किस तरह उन्नीकृष्णन फैसले के असर को घटाया या विकृत किया जा सकता है। नवंबर 2001 में 86वां संविधान संशोधन विधेयक लोकसभा में पास हुआ जिसके तहत उन्नकीकृष्णन फैसले से मिले हक खासतौर पर दस वर्ष के कम उम्र के 17 करोड़ बच्चों को पोषण, सेहत और पूर्व प्राथमिक शिक्षा का मिला हक छिन गया और सभी राजनैतिक दलों की आपसी सहमति से इसे दोनों सदनों में सर्वसम्मति से पारित कर दिया गया। इस संशोधन के उपरांत 14 वर्ष के आयु तक के बच्चे को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का मौलिकाना हक तो मिला परंतु एक शर्त पर और वह शर्त थी कि शिक्षा नीति से दी जाएगी जो राज्य–कानून निर्धारित करेगा।''[4]

हमारी प्राथमिक शिक्षा की सबसे बड़ी चुनौती संसाधन की है। कोठारी आयोग में यह कहा गया कि पूर्व प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक उम्दा गुणवत्ता की शिक्षा देने के लिए देश के सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 6 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च किया जाएगा। वहीं 1991 की आर्थिक नीति ने राष्ट्रीय उत्पाद के प्रतिशत के रूप में शिक्षा पर खर्च को लगातार घटाते चले गए। जबकि सर्व शिक्षा अभियान का 40 प्रतिशत बजट विश्व बैंक व अन्य अंतराष्ट्रीय संस्थाओं से प्राप्त होता है। इन सब बातों से एक बात स्पष्ट दिखती है कि जनता के सभी तबकों को समतामूलक गुणवत्ता शिक्षा तो उपलब्ध नहीं ही हो पाती। फिर ऐसे से हिंदी भाषा शिक्षण की बात बेमानी हो जाती है।

परंतु इन सबके बीच हम इस प्रश्न की उपेक्षा कर जाते हैं कि प्राथमिक शिक्षा, किस भाषा में दी जाए। शिक्षा के व्यापक संदर्भ में भाषा का क्या स्थान हैं और या क्या होना चाहिए, समाज और राष्ट्र के परिप्रेक्ष्य में भाषा के ज्ञान पर कितना बल दिया जाना चाहिए, अन्य विषयों को किस रूप में सहयोजित करना चाहिए आदि। शिक्षा नीति तैयार करने के बाद उनके कार्यान्वयन में इतना ढुलमुल रवैया क्यों अपनाया जाता है। नव उदारवाद के बाद इस नीति में यह रूख किस तरफ जा रहा है इसको देखा जाना चाहिए। जबकि कोठारी आयोग के अनुसार प्रत्येक बच्चे को गुणवत्ता की शिक्षा देने की बात कही गई है। वैश्वीकरण के फलस्वरूप सरकारी स्कूली व्यवस्था को ध्वस्त करके उसका निजीकरण एवं बाजारीकरण करने के लिए कौन से नीतिगत बदलाव किए गए। इसमें विश्व बैंक और अन्य अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों की क्या भूमिका रही? इतना ही नहीं यह भी जानना जरूरी होगा कि सरकार और कॉरपोरेट घराने किस तरह का भारत बनाना चाहते हैं? प्राथमिक शिक्षा में हिंदी का प्रश्न शिक्षा नीति से जुड़ा हुआ है। शिक्षा के मौलिक अधिकार को खंड तीन में रखा गया है। अनुच्छेद (45) के तहत 14 साल की उम्र तक के सभी बच्चों को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा देने की बात कही गई है। ... यानी जन्म से लेकर 6 वर्ष तक के बच्चे के पोषण, स्वास्थ्य और पूर्व प्राथमिक शिक्षा को राज्य की जवाबदेही में शामिल किया गया था।... संविधान ने आठ वर्ष (कक्षा 1–8) को प्रारंभिक शिक्षा का एजेंडा राज्य के सामने रखा था न कि महज पांच साल की प्राथमिक शिक्षा का। इस अनुच्छेद को अनुच्छेद (46) के साथ पढ़ा

जाना चाहिए जिसमें दलित और आदिवासी बच्चों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देने के लिए राज्य को निर्देशित किया गया था।[5] पर इन सब बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया है। बच्चा जैसे–जैसे बड़ा होता है उसका दायरा भी बड़ा होने लगता है, वह अपने माता–पिता व स्कूल के अलावा एक ऐसे सामाजिक परिवेश में कदम रखता है, जहां वह खुद थोड़ा–बहुत निर्णय लेने लगता है। ऐसे में वह उस अभिजात वर्ग के संपर्क में भी आता है जिसे अच्छी अंग्रेजी आती है और वह अंग्रेजी में बात करते हैं, तो ऐसे में वह स्वयं को दबा हुआ अथवा हीन भावना से कुछ को ग्रस्त समझने लगता है, परंतु जब वह उच्च शिक्षा के लिए विश्वविद्यालयों में प्रवेश पाता है तो उसका सामना ऐसे लोगों से होता है जो हिंदी भाषी होते हैं और ऊंचे पदों पर आसीन होते हैं। उनके मन से हीन ग्रस्तता निकलने तो लगती है परंतु तब तक शायद काफी देर हो चुकी होती है। ऐसे में यदि यह शिक्षा प्राथमिक स्तर पर ही दे दी जाए कि हिंदी भाषा किसी से कम नहीं है तो शायद भारतीय बालकों में हीन ग्रस्तता की भावना ही पैदा न होती। इसकी वजह प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा हिंदी में होने और हिंदी की उपेक्षा का परिणाम है। यह रवैया किसी भी बच्चे या देश के प्रति धोखा है। अपनी मातृभाषा हीनता बोध दे वह शिक्षा निश्चित तौर पर प्रगति का सूचक नहीं हो सकती है।

प्राथमिक शिक्षा स्तर पर कई संभावनाएं एवं चुनौतियां हमारे सामने आती हैं। जिन्हें हम इन बिन्दुओं से समझ सकते हैं–

1. छोटे बच्चों को भाषा कैसे सिखाएं
2. पठन कौशल का विकास
3. पढ़ना कैसे सीखें
4. पढ़ने की आदत का विकास
5. बच्चों को कैसे पढ़ाएं
6. भाषाई क्षमताओं का विकास
7. भाषा अध्ययन
8. डिजिटल दुनिया से बच्चों का परिचय

इसके साथ–साथ यह भी आवश्यक है कि प्राथमिक स्तर पर भाषा–शिक्षण कैसे हो और यह शिक्षण अपनी मातृभाषा हिंदी में कैसे हो।

भाषा एक ओर संप्रेषण–व्यवस्था का माध्यम है तो दूसरी तरफ वह राष्ट्रीय भावना का संवाहक भी बनती है। भाषा नियोजन के चार समस्या क्षेत्र हैं।

1. कोड निर्धारण (सेलेक्शन)–राष्ट्रभाषा या राजभाषा के रूप में भाषा का चयन, शिक्षा माध्यम के रूप में भाषा का चयन आदि।
2. कोडस्थैर्य (स्टेबिलिटी)–स्थान, काल, प्रयुक्ति आदि के कारण आने वाले विकल्प रूपों में किसी एक को मानक रूप में स्वीकार कर स्वीकृत भाषा को अभिन्न रूप से स्थिर बनाना।
3. कोड विस्तार (एक्सपेंशन)–उभरते हुए नए संदर्भों एवं व्यवहार क्षेत्र में भाषा प्रयोग को देना।
4. कोड विभेदीकरण (डिफरेंसिएशन)–भाषा को सार्थक और प्रयोजन सिद्ध शैली के रूप में संबंधित करना।[6]

उपर्युक्त चारों को राष्ट्र की शैक्षिक व भाषा संबंधी नीति के संदर्भ में देखा जा सकता हैं। भाषा शिक्षा की संकल्पना व्यापक होने के कारण यह एक ओर प्राथमिक शिक्षा का माध्यम बनकर निरक्षरता को समाप्त करने में प्रयासरत होती है तो दूसरी तरफ उच्च शिक्षा का उपकरण बनकर ज्ञान और तकनीक को साधने का कार्य भी करती है। भाषा नीति को भारत सरकार द्वारा मान्य त्रिभाषासूत्र में देखा जा सकता है। शिक्षा आयोग (1964–66) द्वारा संशोधित त्रिभाषासूत्र में भाषाओं को इस क्रम से स्कूली पाठ्यचर्या में रखने की बात कही गई है–

1. मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषा,

2. संघ की राजभाषा (हिंदी) अथवा (जब तक स्थिति बनी हुई है) संघ की सहयोगी राजभाषा (अंग्रेजी),

3. आधुनिक भारतीय अथवा विदेशी वह भाषा जो (1) और (2) के अंतर्गत न आती हो।[7]

शिक्षा में 'वह सब कुछ शामिल है, जो हम और दूसरे लोग अपने स्वभाव में पूर्णता लाने के लिए करते हैं। जिस व्यापक अर्थ में इसे लिया जाता है, उसमें मनुष्य और चरित्र और नैसर्गिक शक्तियों पर पड़ने वाले प्रत्यक्ष प्रभाव भी शामिल है।[8] वर्तमान और प्राचीन दोनों युगों की शिक्षा पद्धतियों को साथ रखकर देखने पर दो बातें उभर कर आती हैं। पहली, प्रौढ़ों और युवाओं दोनों में आपसी व्यवहार हो, और दूसरी, प्रौढ़ पीढ़ी अपनी युवा पीढ़ी को प्रभावित कर रही हो। शिक्षा के कई रूप हैं क्योंकि यदि समाज जातियों में बंटा होगा तो उसमें शिक्षा का स्वरूप भी जातियों के अनुसार भिन्न–भिन्न होगा। शहरी शिक्षा और ग्रामीण शिक्षा में अंतर होगा ही। मध्यमवर्ग जो शिक्षा पाता है वह किसी श्रमिक वर्ग को नहीं मिल पाता। नैतिक दृष्टि से शिक्षा का मौजूदा ढांचा समानता की जगह असमानता को ही बढ़ावा देता है।

स्कूल शिक्षा को एक ऐसी एजेंसी माना जा सकता है, जहां प्रतिबद्धताओं ओर क्षमताओं से विभिन्न घटक जन्म लेते हैं। दूसरी तरफ समाज की दृष्टि में यह 'जन–शक्ति' के आबंटन की एजेंसी है। सामाजिक स्थिति और शैक्षिक स्तर व्यक्ति की व्यावसायिक हैसियत से जुड़े होते हैं। जिसमें अंग्रेजी और हिंदी का योगदान भी देखा जा सकता है।

प्राथमिक शिक्षा के तहत एक बच्चा हिंदी को सीखता है, सीखने से अभिप्राय उसके व्याकरण से है। उसकी अपनी मातृभाषा के बाद हिंदी ही एक ऐसी भाषा है, जिसे वह बड़ी आसानी और सहजता से सीख लेता है क्योंकि मातृभाषा, हिंदी की ही बोलियां होती हैं। परंतु आम बोल–चाल और औपचारिकता में कुछ अंतर तो होता ही है, लेखन में भाषा के मानकीकरण रूप को ध्यान में रखना अनिवार्य हो जाता है क्योंकि यह सब जगह समान रूप से प्रचलित होती हैं। 'मातृभाषा, संस्थागत यथार्थता है और परंपरा एवं दृष्टि से निर्मित इस यथार्थता के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि हिंदी भाषाई समुदाय के लिए उसकी बोलियां नहीं अपितु हिंदी भाषा, मातृभाषा के रूप में सिद्ध भाषा है। हिंदी भाषा के सहारे ही इस भाषाई समुदाय के व्यक्ति अपनी सामाजिक अस्मिता ढूंढते हैं।[9]

भारतीय संविधान में भी हिंदी को प्रथम भाषा और अंग्रेजी को द्वितीय भाषा के रूप में मान्यता मिली है और अन्य भाषा के रूप में रूसी, फ्रेंच, जर्मनी आदि विदेशी भाषाएं हैं। भाषा को सीखने के संदर्भ में सर्वप्रथम मातृभाषा और अन्य भाषा को लिया जा सकता है। मातृभाषा को प्रथम भाषा के रूप में नहीं देखा जा सकता है। किसी राष्ट्र की पहचान उसकी भाषा ही होती है। और किसी व्यक्ति का अस्तित्व अथवा आइडेनटिटी (Identity) भी उसकी भाषा ही होती है। मातृभाषा व्यक्ति की सामाजिक अस्मिता को निर्धारित करती है। हिंदी भाषा के संदर्भ में उसकी विभिन्न बोलियां ही प्रथम भाषा को रूप में बोली जाती हैं। मां की गोद में बच्चा बोली को ही प्रथम भाषा के रूप में सीखता है। पर जब वह बड़ा होकर स्कूल जाने लगता है, तब उसे हिंदी एवं उसकी संरचना सीखनी पड़ती है, जिसमें प्रथम भाषा के सहयोग के कारण वह हिंदी भाषा की संकल्पना को जितनी आसानी और सहजता से समझ लेता है, उतनी अंग्रेजी को नहीं। और तब 'साक्षरता' के संदर्भ में वह बोली से भाषा की तरफ उन्मुख होता है। ऐसे में 'हिंदी भाषा' ही उसे अपनी मातृभाषा के रूप में सहज व सरल लगती है क्योंकि यह साहित्यिक परंपरा और सामाजिक अस्मिता को बनाए रखती है। प्राथमिक शिक्षा में हिंदी को बढ़ावा तब भी मिल सकता है। जब उसका शिक्षण 'डिजिटल' ढंग से किया जाए। हिंदी के कई सॉफ्टवेयर गूगल में उपलब्ध हैं जो हिंदी शिक्षण को बढ़ावा देते हैं। यूनिकोड हिंदी उनमें से एक है। विकीपीडिया पर भी हिंदी की सामग्री उपलब्ध है।

प्राथमिक स्तर पर यदि शिक्षा का माध्यम हिंदी होगी तो यह बच्चे के मानसिक विकास में सहायक सिद्ध होगा क्योंकि अधिकांश बालक की मातृभाषा हिंदी ही है। उसके आसपास का माहौल भी हिंदी है। मातृभाषा ही शिक्षा का सबसे बेहतर माध्यम बनकर देश के विकास में सहायक हो सकता है। भारत में कई भाषाएं बोली जाती हैं और शिक्षा के लिए खासतौर पर बालकों की शिक्षा के लिए किसी एक ही भाषा का होना जरूरी नहीं है इसलिए शिक्षा का माध्यम यदि मातृभाषा हिंदी हो तो बेहतर भारत का स्पप्न देखा जा सकता है। अंग्रेजी को विकल्प के रूप में लिया जा सकता है। अभिजात वर्ग अंग्रेजी को ही अपनी पहचान समझता है और बनाए रखना चाहता है। शिक्षा आयोग का नीतियां बनाना, स्कूलों का प्राइवेटाइजेशन होना, अभिभावकों का अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भेजना खासतौर पर अंग्रेजी सीखने के लिए आदि बातें यह वर्ग अपने स्टेट्स को बनाए रखने के लिए ही करता है। चाहे उन्हें अंग्रेजी का शुद्ध ज्ञान हो अथवा न हो। अंतरराष्ट्रीय व्यापार कूटनीति के लिए अंग्रेजी भाषा का ही प्रयोग किया जाता है। इसकी बजाए हम हिंदी भाषा का अधिकाधिक व्यवहारगत प्रयोग करके इसको मजबूती प्रदान कर सकते हैं।

इससे एक बात साफ हो जाती है कि हमारी राष्ट्रीय भाषा नीति, इस तथ्य का निर्देश देती है कि स्कूली शिक्षा में कौन–सी भाषा, कब शुरू की जाए, कितने समय तक उसे पढ़ाया जाए आदि। इस नीति के तहत पहली (मातृभाषा) को अनिवार्यतः 10 वर्ष पढ़ाया जाना है, उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं 11वीं–12वीं कक्षा में किन्ही भी दो भाषाओं (जिन्हें उसने पहले पढ़ा हो) को पढ़ना अनिवार्य है। ऐसी स्थिति में हिंदी अंग्रेजी दो भाषाएं हमारे सामने उभर कर आती हैं। हिंदी भाषा के संदर्भ में यह कहा जा सकता हैं कि उसके एक छोर पर व्यक्तियों का ऐसा समूह है जो हिंदी भाषा नहीं जानता है और उसे सामाजिक व वैयक्तिक आवश्यकताओं का समूह है जो हिंदी भाषा का ज्ञान भी रखता है और उसके मानक प्रयोग में भी महारत हासिल है।

शैक्षिक सुधार के माध्यम से एक समतावादी समाज को साकार बनाने की संभावना को लेकर मोहभंग की स्थिति बन गई है। इस भौतिक और सांस्कृतिक समृद्धि में शिक्षा को किस तरह उपयोगी बनाया जा सकता है जो एक संपन्न समाज के सदस्यों को हासिल हो सके। यह नजरिया हिंदी और संस्कृति को बर्बाद करने का नजरिया है जिस पर ध्यान देना बेहद आवश्यक है।

———————————————————

1 भारतीय शिक्षा : दशा और दिशा, राम शुक्ल पांडेय, पृ. 101 होराईजन पब्लिशर्स, प्रं. सं. –1995

2 वही –, पृ. 102

3 वही –, पृ. 103

4 नव उदारवाद और शिक्षा का अधिकार, परिप्रेक्ष्य, शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक–आर्थिक संदर्भ, वर्ष 15, अंक 2, अगस्त 2008, पृ. 4

5 नव उदारवाद और शिक्षा का अधिकार, परिप्रेक्ष्य, शैक्षिक योजना और प्रशासन का सामाजिक–आर्थिक संदर्भ, वर्ष 15, अंक 2, अगस्त 2008, पृ. 4

6 भाषा शिक्षाण, डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, पृ. 41

7 भाषा शिक्षाण, डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, पृ. 42

8 शिक्षा का समाजशास्त्रीय संदर्भ, सं. कृष्ण कुमार, सुरेश चंद्र शुक्ल, पृ. 17, ग्रंथ शिल्पी हिंदी सं.–2008

9 भाषा शिक्षाण, डॉ. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, पृ.–49

27, वैशाली, तीसरा तल,
पीतम पुरा, नई दिल्ली–110034

'प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी–संभावनाएं एवं चुनौतियां'

प्रो. रमेश चन्द्र शर्मा

देवनागरी लिपि में लिखित खड़ी बोली हिंदी भारत वर्ष की राजभाषा है। यह जैसे बोली जाती है वैसे ही लिखी जाती है और जैसे लिखी जाती है वैसे ही बोली जाती है। कम्प्यूटर आदि की दृष्टि से यह विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक भाषा सिद्ध हो चुकी है। इसका पुष्कल शब्द–भंडार[1] है। इसकी स्त्रोत भाषा संस्कृत है। संस्कृत भाषा के व्याकरण में शब्दनिर्माण[2] की अद्भुत क्षमता है। भारत ही नहीं तो विदेश की भी अनेक भाषाओं में संस्कृत भाषा का प्रभाव दृष्टिगत होता है। इसमें भारत के पूर्वजों द्वारा समस्त संचित ज्ञान विद्यमान है। साथ ही यह समस्त भारत को सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से एक सूत्र में बांधती है।

अंग्रेजी को हटाने या उसका विकल्प देने के लिए हिंदी को उन शब्दों की सृष्टि करने की आवश्यकता है जिससे भारत का प्रत्येक व्यक्ति आज के वैज्ञानिक, तकनीकी–ज्ञान सहित सूक्ष्म विचारों व भावों को व्यक्त कर सके। हिंदी इसमें समर्थ है। अनुसंधान की दृष्टि से से भी हिंदी का पारिभाषिक शब्दावली कोई अवरोध उत्पन्न नहीं करती। विज्ञान अर्थात प्राकृतिक विज्ञान (Natural Sciences) तथा सम्प्रयुक्त विज्ञान (Applied Sciences) की मान्य शाखाओं[3] और विधाओं। तथा आधुनातन सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, जैव प्रौद्योगिकी, नैनो प्रौद्योगिकी जैसी नई शाखाएं जन्म ले रही हैं। उपर्युक्त समस्त शाखाओं में हिंदी में मौलिक लेखन तथा अनुवाद –दोनों हो रहे हैं। विज्ञान लेखन में भी हिंदी साहित्य की भांति अनेक विधाओं का उपयोग हो रहा है। इतना ही नहीं तो औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप पर्यावरण का जिस तेजी से विघटन हुआ उसकी चिंता से जुड़े विषयों तथा विज्ञान पारिस्थितिकी (Ecology) के अंतर्गत वायु, जल, मृदा व ध्वनि–प्रदूषण तथा जैव विविधता (biodiversity)] ओजोन परत की महत्ता, अभयारण्यों की आवश्यकता, जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग पर भी पर्याप्त साहित्य हिंदी में लिखा गया है। विज्ञान पत्रकारिता की दृष्टि से सी.एस.आई.आर के द्वारा प्रकाशित विज्ञान निर्देशिका में 'तीन सौ इक्कीस' पत्रिकाओं की सूची द्रष्टव्य है। हर वर्ष नई नई विज्ञान पत्रिकाएं प्रकाश में आती रहती हैं जिनसे विज्ञान को सुपाठ्य और सुबोध बनाने में सहायता मिलती है। हिंदी में 'विज्ञान साहित्य का इतिहास' विषयक पर्याप्त पुस्तकें उपलब्ध हैं। निष्कर्ष यह है कि हिंदी का वैज्ञानिक साहित्य विविधतापूर्ण है। समृद्ध है।

हिंदी का साहित्येतर साहित्य (ज्ञान का साहित्य या उपयोगी साहित्य) भी निरन्तर समृद्ध हो रहा है। हिंदी जानने, बोलने, समझने वालों की निरन्तर बढ़ती संख्या को दृष्टिगत कर विश्वभर की वेबसाइटें [4] हिंदी को वरीयता दे रही हैं। भारतीय तकनीकी–मेधायें [5] भी हिंदी में सोशल नेट वर्किंग वेब साइटें व ई–उपकरण विकसित कर रही हैं जिनसे हिंदी में भी तकनीकी कामकाज सुगम हो सकेगा। **किसी भी भाषा के प्रचार, प्रसार व सम्पन्नता के तीन कारक होते हैं–राजनीति, व्यापार, और धर्म** या अध्यात्म–क्षेत्र। हिंदी इन तीनों कारकों की कसौटी पर खरी उतरती है। इसीलिए इसे देश व विदेश में सीखने पढ़ने व शोध करने की ललक बढ़ रही है। विश्व के सम्पन्न और विकसित देशों के साथ–साथ अन्यान्य देशों में अनुमानतः एक सौ सत्तर देशों में विश्वविद्यालय स्तर तक अध्ययन अध्यापन हो रहा है। विश्व में हिंदी के जानकारों की अद्यतन सर्वेक्षण रिपोर्ट डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल द्वारा प्रस्तुत की गई तद्नुसार हिंदी के जानकार 'एक अरब दस करोड़ तीस लाख' हैं तथा चीनी भाषा (मंडारिन) के जानकार 'एक

अरब छह करोड़' है। इस सर्वेक्षण को 'विकिपीडिया' से ज्यादा प्रमाणित माना गया है। अर्थात विश्व में हिंदी प्रथम भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी है। विदेशों में हिंदी की लोकप्रियता हिंदी फिल्मों से भी जुड़ी है। विश्व बाजार के मंच पर हिंदी और हिंदी सिनेमा विदेशियों के लिए पर्याप्त आर्थिक लाभ अर्जित कर रहा है।

अस्सी प्रतिशत विज्ञापनों में हिंदी की धाक जमी है। बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपने उत्पादों का प्रचार प्रसार करने के लिए हिंदी का प्रयोग कर रही हैं। निष्कर्ष यह है कि विश्व के प्रवासी जनों के साथ विदेशी विद्वान भी हिंदी को विश्वस्तर पर लोकप्रिय बना रहे हैं। अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में तकनीकी प्रगति के साथ हिंदी ताल मिलाकर चल रही है।

दुर्भाग्यवश लार्ड मैकाले के मानसिक दास कतिपय भारतीय ही हिंदी से ईर्ष्या व विद्वेष के वशीभूत होकर इसके विस्तार व हक के रास्ते में अवरोध खड़े करते रहते हैं। भाषावार प्रांतों की रचना ने प्रातीय अस्मिता के नाम पर भाषायी उन्माद पैदाकर हिंदी–शिक्षण का ही विरोध करना अपना धर्म समझ लिया है। ऐसे लोग अंग्रेजी को तो वरीयता दे रहे हैं किंतु हिंदी विरोध कर रहे हैं। कल तक जो प्रान्त हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाए जाने के प्रबल पक्षधर थे, आज वही हिंदी विरोध में खड़े हो रहे हैं। यह आजादी के इतने वर्षों के बाद की अवस्था है जो एक चुनौती भी है।

संविधान निर्माणी सभा के तीन सौ चौबीस सदस्यों में से तीन सौ बारह हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाए जाने के पक्षधर थे। तभी हिंदी, भारत की 'राजभाषा' पद के प्रतिष्ठित हुई थी किंतु हिंदी के समानान्तर अंग्रेजी को पन्द्रह वर्ष के लिए लाद दिया गया। ये पन्द्रह वर्ष लगातार आगे बढ़ते जा रहे हैं। अब प्रश्न है कि सम्पूर्ण भारत में हिंदी राजभाषा होने के कारण किस प्रकार सिखाई व पढ़ाई जाए?

भारत की केन्द्र सरकार तथा प्रान्त (राज्य) सरकारें भारत के संविधान को यदि मानती हैं तो उनका संवैधानिक दायित्व व कर्तव्य है कि भावी देशवासियों अर्थात् भावी पीढ़ी को राजभाषा हिंदी का शिक्षण कराएं। इस हेतु उन्हें अपनी राजनीतिक इच्छाशक्ति का परिचय देना होगा। आवश्यकता हो तो 'शिक्षा' को अथवा 'राजभाषा हिंदी की शिक्षा' को केन्द्र का विषय बनाया जाए तथा 'केन्द्रीय प्रारंभिक हिंदी शिक्षा बोर्ड' का गठन किया जाए। इसी बोर्ड के द्वारा एक ही मानक पाठ्यक्रम बनाया जाए जिससे पूरे देश भर में, सभी राज्यों में बिना किसी भेद भाव के प्रारंभिक शिक्षा में हिंदी का शिक्षण व प्रशिक्षण हो सके। विगत अनुभवों के आधार पर प्रारंभिक शिक्षा में केन्द्र सरकार को कड़ाई दिखानी पड़ सकती है। अतः पुरस्कार व दंड की भी व्यवस्था करनी पड़ेगी।

सर्वप्रथम 'केन्द्रीय प्रारंभिक हिंदी शिक्षा बोर्ड' के तत्वावधान में देशभर के हिंदी शिक्षकों के अखिल भारतीय स्तर पर या राज्य स्तर पर प्रशिक्षण शिविर लगाए जाएं। इससे एक सी शिक्षण व्यवस्था लागू हो सकेगी। इन शिक्षकों व शिक्षा के निरीक्षण परीक्षण भी यही बोर्ड करे तथा यथावश्यक प्रशिक्षकों व शिक्षकों का मूल्यांकन कर पुरस्कार देने की व्यवस्था हो। कामचोरी या लापरवाही दिखने पर दंड विधान भी हो। इसी के साथ हिंदी पढ़ाने के लिए रुचि दिखाने वाले या प्रेरित करने वाले अभिभावकों को राज्य व केन्द्र स्तर पर पुरस्कृत करने की भी योजना हो।

साथ ही जिला स्तर पर या ब्लॉक स्तर पर हिंदी सिखाने वाले स्वयंसेवकों या एन.जी.ओ. को 'हिंदीमित्र' के रूप में जोड़ा जाए। ये लोग घर घर जाकर बालकों को हिंदी सीखने के लिए प्रेरित करें तथा आवश्यक होने पर हिंदी पढ़ाएं, संभाषण करें। परिवार तथा समाज में हिंदी सीखने की रुचि बढ़ाने में सहयोग करें, वातावरण बनाएं।

प्रारंभिक स्तर पर हिंदी पढ़ाने व सिखाने हेतु मातृभाषा का ही व्यवहार करना चाहिए। अनुभव में आया है कि बालक को कथ्य भाषा में ही अक्षर व वाक्य ज्ञान कराना समुचित होता है। शिक्षक का कर्तव्य व लक्ष्य बालक में सीखने की ललक पैदा करना हो। अभ्यास पर जोर होना चाहिए। दोहराना या बार बार अभ्यास कराना चाहिए। कापी, पेन, पेंसिल की जगह पाटी, स्लेट, खड़िया (चॉक) को वरीयता दी जाए ताकि गरीब से गरीब भी पढ़ाई का व्यय वहन कर सके। अर्थात् कम व्यय–साध्य साधनों का व्यवहार करना व कराना उचित होगा। शुद्ध

उच्चारण की दृष्टि से श्रव्यदृश्य माध्यम व गीत पद्धति का सहारा लेना चाहिए ताकि शुद्धता के साथ रोचकता भी बनी रहे। दूरदर्शन भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकता है। नित्य व्यवहारोपयोगी वस्तुओं, भावों व सम्बन्धों को मातृभाषा (कथ्य भाषा) में हिंदी पर्याय के साथ बताया जाए।

हिंदी शिक्षण का विस्तार कर प्रारंभिक अर्थात् प्राथमिक (प्रायमरी) से माध्यमिक स्तर तक अनिवार्य कर देना चाहिए। साथ ही हिंदी शिक्षण या योग्यता का महत्व भी बना रहे इसलिए उसे व्यवसायोन्मुखी या रोजगार परक भी बनाना पड़ेगी। माध्यमिक स्तर पर प्रयोजनमूलक हिंदी का पाठ्यक्रम होना चाहिए ताकि उसके हिंदी शिक्षण का आगे चलकर उपयोग हो सके।

इस नाते राष्ट्रीय व राज्य स्तरीय खेलकूद प्रतियोगिताओं, अखिल भारतीय स्तर की सेवा परीक्षाओं, प्रवेश परीक्षाओं (मेडिकल, इंजीनियरिंग आदि) में माध्यमिक स्तर तक का हिंदी–ज्ञान अर्ह या अनिवार्य होना चाहिए। यदि संभव हो तो सांसद, विधायक व निकाय चुनाओं में भी यह शर्त लागू की जाए।

केन्द्र सरकार ने पहले चार भाषा फार्मूला या त्रिभाषा फार्मूला लागू किया था। हिंदी भाषा को अनिवार्य करते हुए उपर्युक्त फार्मूला पर पुनर्विचार कर सदाशयता पूर्वक दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ इन्हें लागू करना चाहिए। हिंदी भाषी क्षेत्र के छात्रों को भी हिंदी पढ़नी, सीखनी पड़ती है क्योंकि उनकी मातृभाषा अवधी, भोजपुरी, ब्रज आदि भाषाएं या बोलियां हो सकती हैं। साथ ही अंग्रेजी माध्यम वाले स्कूलों विशेषकर ईसाई मिश्नरी स्कूलों में भी हिंदी पढ़ाई जाए और परिसर में हिंदी बोलने पर प्रतिबंध नहीं हो।

———————————————————

1. हिंदी की देशज शब्दावली, पारिवारिक सम्बंध वाचक शब्दावली, जीवन जगत में व्यवहारोपयोगी हर उद्योग (ट्रेड) की शब्दावली, लोक भाषाओं से आगत शब्दावली, भारतीय भाषाओं से आगत शब्दावली तथा विदेशी भाषाओं से आगत शब्दों को आत्मसात कर गढ़ी गई शब्दावली।

2. संस्कृत में दो हजार धातुएं **(Roots)** हैं। एक धातु का दस प्रत्यय, बीस उपसर्ग, सात कारक, तीन वचन, तीन पुरुष, तीन लिंग से पृथक उपयोग कर ग्यारह लाख शब्द बनाए जा सकेंगे। तब दो हजार धातुओं से कितने शब्द बनेंगे?–इसका गणना करके ज्ञान कर सकते हैं।

3. मान्य शाखाएं–रसायन, भौतिकी, गणित, ज्योतिर्विज्ञान, वनस्पति व प्राणि विज्ञान, आयुर्विज्ञान व भैषजी, कृषि, वानिकी, और्जिकी, कम्प्यूटर, अन्तरिक्षक, पर्यावरण।

4. माइक्रोसॉफ्ट, गूगल, सन, याहू, आई.बी.एम. ओरेकल जैसी विश्वस्तरीय कंपनियां हिंदी के व्यापक बाजार और भारी मुनाफा को देखते हुए हिंदी–प्रयोग को बढ़ावा दे रही हैं।

5. (क) भारतीय वैज्ञानिक (पुणे के अनुराग गौड़ व उनके साथी) ट्विटर की तर्ज पर 'मूषक' नामक साइट बनाटर ट्विटर की एक सौ चालीस शब्द सीमा को पछाड़ कर पांच सौ शब्द सीमा तक ले जाने में समर्थ हुए हैं।

5 (ख) नोएडा स्थित 'सेंटर फार डेवलपमेंट ऑव एडवांस कम्प्यूटिंग' (सी–डेक)

5 (ग) www.gitasupersite.iitk.ac.in – प्रो. टी. वी. प्रभाकर II.T. कानपुर इस वेबसाइट में गीता, वाल्मीकि रामायण, उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र, योगसूत्र तथा रामचरित मानस को रोमन व नागरी में भारत में बोली जाने वाली सभी भाषाओं में पढ़ा व सुना व समझा जा सकता है।.....

5 (घ) http/hindugranth.co.in
http/vedupnishad.in
http/sanskritashtadhyaaye.in द्वारा श्री बी. एम. शुक्ला

ई–469 पनकी,
कानपुर–208020

अंधकार से प्रकाश का मार्ग प्रशस्त कैसे हो?

डॉ. धनेश द्विवेदी

असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।। मृत्योर्मांऽमृतम्गमय।।

ब्राह्मणः 3.28/अ.1

'हे प्रभु! हमें असत्य से सत्य की ओर ले चलो।
अंधकार से प्रकाश की ओर ले चलो।
मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चलो।'

अंधकार से प्रकाश की ओर की जीवन यात्रा में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जब हम जीवन के मूल्यों की बात करते हैं, प्राणीमात्र के सामाजिक चिंतन की बात करते हैं तो पाते हैं कि शिक्षा की भूमिका इन सभी में महत्वपूर्ण तो होती है, सार्थक भी होती है। शिक्षा का लक्ष्य विद्यार्थियों के अंदर अच्छे संस्कार पैदा कर उन्हें एक सधा हुआ सामाजिक जीवन प्रदान करना होता है। इस सामाजिक जीवन का अर्थ प्रथम दृष्ट्या घर–परिवार, आस–पड़ोस से, फिर उससे आगे राष्ट्र स्तर तक निहित होता है। शिक्षा का उद्देश्य केवल किताबी कीड़े पैदा करना नहीं बल्कि देश के लिये भावी नागरिकों को श्रेष्ठ तथा स्वस्थ बनाना है। ऐसे ही नागरिक भविष्य के राष्ट्र निर्माता होते हैं, राष्ट्र को उन्नत एवं समृद्ध बनाते है। वास्तविक शिक्षा वही है जो व्यक्ति को सभी प्रकार के अंधकारों और बंधनों से मुक्त करती है। इस प्रकार शिक्षा का लक्ष्य मनुष्य को अज्ञान–अंधकार तथा बधनों से मुक्त कराना है।

यूं तो बच्चे की शिक्षा जन्म लेते ही प्रारंभ हो जाती है और उसकी पहली शिक्षक माँ के रूप में मिलती है किंतु स्कूल में दाखिला लेने के बाद एक विद्यार्थी के रूप में, स्कूल की पुस्तकों से, शिक्षकों से, स्कूल के वातावरण तथा अपने सहपाठियों से वह बहुत कुछ सीखता है। अपने शुरूआती दिनों के शिक्षण प्रशिक्षण की अमिट छाप बच्चे के मन–मस्तिष्क पर बन जाती है। प्रारंभिक जीवन की मूल्यवान शिक्षा किस प्रकार जीवन के अंत तक साथ निभाती है इसका जीता जागता उदाहरण हम अपनी पीढ़ी तक तो महसूस कर ही सकते हैं।

यहां शिक्षा के स्वरूप तथा माध्यम की चर्चा करना अत्यंत आवश्यक है। शिक्षा के स्वरूप में प्राथमिक शिक्षा प्रथम सोपान पर है। 'प्राथमिक शिक्षा' देश की शिक्षा–प्रणाली की आधारशिला है अर्थात् प्राथमिक शिक्षा जितनी सुदृढ़ होगी, देश की सम्पूर्ण शिक्षा–व्यवस्था उतनी ही उन्नतिशील एवं व्यापक होगी।

प्राथमिक शिक्षा को राष्ट्रव्यापी रूप प्रदान करने के लिये डॉ. जाकिर हुसैन की अध्यक्षता में एक समिति बनाई गई। इस समिति के सुझावों के अनुसार 'राष्ट्रीय स्तर पर देश के सभी बच्चों के लिये निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जाये, शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो।' अब बात यह उठती है कि आखिर आजादी के 70 सालों बाद यह बात पुनः क्यों महसूस की जाने लगी है कि प्राथमिक

शिक्षा की भाषा क्या हो, उसका स्वरूप कैसा हो, आदि आदि।

जब हम इन सब बातों पर गौर करते हैं तब यह बात सामने आती है कि जिस प्रकार आज समाज में चिंतनशीलता की कमी, संवेदनहीनता का अभाव देखा जा रहा है,उसके लिये कहीं न कहीं प्रारंभिक स्तर के शैक्षणिक स्वरूप में कमियां देखने को मिल रही हैं।

यह माना जाने लगा है कि इन सब के लिये प्रारंभिक स्तर पर जिस प्रकार के प्रयास किये जाने चाहिये, वैसे नहीं किये जा रहे हैं। यहां यह बताना भी आवश्यक है कि इसके लिये सरकारी तंत्र तो उसी गति से कार्य कर रहा है परंतु हमारा पश्चिम के प्रति अत्यधिक लगाव इस प्रक्रिया में सबसे बड़ा बाधक नजर आ रहा है। हमें यह ज्ञात भी नहीं हो रहा कि हम जिस दिशा में आगे बढ़ रहे हैं वह अंधकार की ओर जा रही है जबकि जीवनभर हम अंधकार से प्रकाश के मार्ग पर चलने की प्रार्थना करते हैं, प्रयास करते हैं।

प्राथमिक स्तर पर हम किस भाषा को बच्चों पर थोप रहें हैं और इसका परिणाम क्या होगा, यह तो समय ही बतायेगा किंतु परिणाम सुखद होगा इस पर कम से कम मुझे व्यक्तिगत रूप से तो संदेह है और इस बात का डर भी है कि परिणाम भयावह भी हो सकता है। यह कहने का आधार भी मैं स्पष्ट कर दूं। अभी हाल में ही एक रिश्तेदार का छोटे बच्चों के साथ मेरे घर आना और टीवी पर कार्टून की भाषा हिंदी होने पर उनके तर्क शायद मेरे भय का आधार है। बच्चों की मां ने जब यह कहा कि हिंदी में कार्टून देखने से बच्चे पर बुरा असर पड़ता है और वह स्कूल में दूसरे बच्चों के साथ हिंदी में संवाद करता है जिसके लिये स्कूल प्रशासन द्वारा बच्चे को डांट पड़ती है, मुझे अंदर तक झकझोर गया। ऐसा इसलिये नही हुआ कि मैं अंग्रेजी भाषा का विरोधी हूँ, ऐसा इसलिये हुआ कि मैं अपनी मातृभाषा से प्रेम करता हूं। अपनी मातृभाषा में जीता हूं और उसी में मर जाना चाहता हूं। मेरे अंदर यह भाव इसलिये हैं क्योंकि मैंने जीवनचक्र की शुरूआत अपनी मातृभाषा में की, हिंदी भाषा में की यानि प्राथमिक शिक्षा हिंदी में प्राप्त की। इसीलिए व्यक्तिगत रूप से कई देशी–विदेशी भाषाओं की जानकारी होने के बाद भी जो सुख मुझे हिंदी में सोचने समझने में में प्राप्त होता है, जो खुशी हिंदी भाषा में उद्‌गार व्यक्त करने में मिलती है, उसका वर्णन शब्दों में करना संभव नहीं है। मेरे द्वारा महसूस की गई यह पीड़ा मात्र एक घटना नहीं है बल्कि ऐसी बातों से हम दिन में कई बार रूबरू होते हैं। अभी हाल में एक वरिष्ठ साहित्यकार के साक्षात्कार के दौरान यह पीड़ा भी सामने आई कि एक हिंदीतर भाषी साहित्यकार का बेटा अपने पिता से यह पूछता है कि उसके पिता द्वारा मातृभाषा में लिखी किताब उसे अंग्रेजी में पढ़ने को कैसे मिलेगी। यह जानकर मुझे तो कतई अच्छा नहीं लगा और शायद भाषा के प्रति कोई भी संवेदनशील व्यक्ति इस प्रकरण पर मेरी बात का समर्थन करेगा। शायद यही सब कारण हैं कि किसी भी क्षेत्र की भाषा हो, मुझे मातृभाषा के भविष्य का भयावह नजारा समझ आता है।

इस सब बातों का सार यही है कि मातृभाषा ज्ञान होना किसी भी बच्चे के लिये पहली प्राथमिकता होनी चाहिये क्योंकि अंधकार से प्रकाश का मार्ग प्रशस्त होने में मातृभाषा की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण होती है।

uxj jktHkk"kk dk;kZUo;u lfefr ¼cSad½] fnYyh dh cSBd esa eapklhu vfrfFkx.k

jktHkk"kk foHkkx }kjk dksydkrk esa vk;ksftr rduhdh laxks"Bh
esa eapklhu vfrfFkx.k

भारत सरकार, राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय), एनडीसीसी-II भवन, नई दिल्ली-110003
के लिए डॉ. धनेश द्विवेदी, उप संपादक द्वारा प्रकाशित तथा
डॉल्फिन प्रिंटो-ग्राफिक्स, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित